आज़ादी का अमृत महोत्सव

मार्च, 2022
I.S.S.N. : 2457-0494

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

प्रधान संपादक

श्री कमला कान्त

संपादक

श्री अविनाश शुक्ला
श्री असलम खान

सहायक संपादक

श्री पुण्डरीक शर्मा

उप-संपादक

श्री महीपाल सिंह
श्री जसवन्त सिंह

ISSN-2457-0494

कीमत : डाक-व्यय सहित

एक प्रति : ₹ 195/-

वार्षिक : ₹ 2,100/-

© 2022 भारत सरकार, विधि और न्याय मंत्रालय

प्रधान संपादक, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 द्वारा प्रकाशित तथा..... द्वारा मुद्रित ।

आई.एस.एस.एन. 2457-0494

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

मार्च, 2022 अंक - 3

प्रधान संपादक
कमला कान्त

संपादक
अविनाश शुक्ला

विधि साहित्य
प्रकाशन

[2022] 1 उम. नि. प.

विधि साहित्य प्रकाशन
विधायी विभाग
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार

Online selling of law Patrikas/Books is available on
Website ➡ https://bharatkosh.gov.in/product/product

विक्रय कार्यालय : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001. दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in

संपादकीय

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका प्रतिमाह आपके अवलोकनार्थ उच्चतम न्यायालय द्वारा पारित प्रतिवेद्य निर्णय, जो न्यायाधीशों, अधिवक्ताओं, विधि छात्रों और अकादमीशियनों के लिए महत्वपूर्ण होते हैं, का प्रकाशन करता है । आप लोगों से प्राप्त सुझावों के आधार पर हमको अपनी पत्रिका की गुणवत्ता सुधारने और अपने कार्य को और अधिक निखारने की शक्ति प्राप्त होती है । कृपया अपने अमूल्य सुझावों से हमें अवगत कराते रहें और हमारा मार्गदर्शन करते रहें ।

इस अंक के माध्यम से हमने आपके अवलोकनार्थ माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **वीरपाल और एक अन्य** [2022] 1 उम. नि. प. 315 वाले मामले में तारीख 1 फरवरी, 2022 को पारित निर्णय प्रस्तुत किया है । यह मामला वधू दाह का है, जिसमें अभियुक्तों द्वारा मृतका (वधू) पर मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगा दिए जाने के द्वारा हत्या कारित करने का अपराध किया गया था । इस मामले में मृतका ने अस्पताल में भर्ती रहने के दौरान दो दिनों के अंतराल में दो बार मृत्युकालिक कथन अभिलिखित कराए । पहला मृत्युकालिक कथन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन पुलिस के अन्वेषक अधिकारी के समक्ष अभिलिखित कराया गया और दूसरा मृत्युकालिक कथन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 164 के अधीन प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेट के समक्ष अभिलिखित कराया गया । प्रथम मृत्युकालिक कथन में मृतका ने आरोप लगाया कि ससुर द्वारा धन की मांग की जा रही थी, जिस कारणवश उसकी पिटाई की गई और उसने स्वयं को कमरे बंद करके मिट्टी का तेल छिड़क कर जला लिया । द्वितीय मृत्युकालिक कथन में मृतका ने अभिकथित किया कि अभियुक्तों ने उस पर मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगा दी थी जिस कारणवश वह बुरी तरह जल गई । विचारण न्यायालय ने प्रथम श्रेणी मजिस्ट्रेट के समक्ष किए गए मृत्युकालिक कथन का अवलंब लेते हुए अभियुक्तों को दोषसिद्ध कर दिया । किंतु अपील में उच्च न्यायालय ने भी अभियुक्तों को दोषमुक्त

कर दिया । माननीय उच्चतम न्यायालय ने उच्च न्यायालय के निर्णय को अपास्त करते हुए अभिनिर्धारित किया कि मृतका ने पूरे होशोहवास में अभियुक्तों द्वारा उस पर हमला करने और मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगाने का कथन किया था, किंतु अभिलेख पर इस बात का कोई साक्ष्य नहीं है कि मजिस्ट्रेट कथन अभिलिखित करने के द्वारा अभियुक्तों को अपराध में संलिप्त करने में हितबद्ध था और अभियुक्तों के प्रति विद्वेष की भावना से ग्रसित था और अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया ।

इस अंक में राजभाषा अधिनियम, 1963 को भी ज्ञानार्थ प्रकाशित किया जा रहा है । इस संपूर्ण अंक का परिशीलन करने के पश्चात् आपकी बहुमूल्य प्रतिक्रियाएं ईप्सित हैं ।

अविनाश शुक्ला
संपादक

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

मार्च, 2022

निर्णय-सूची

	पृष्ठ संख्या
उत्तर प्रदेश राज्य **बनाम** वीरपाल और एक अन्य	315
ओंकार सिंह **बनाम** जयप्रकाश नारायण सिंह और एक अन्य	336
तरलोचन सिंह **उर्फ** राणा **बनाम** पंजाब राज्य	451
पंजाब नेशनल बैंक **बनाम** भारत संघ और अन्य	394
मध्य प्रदेश राज्य **बनाम** रामजी लाल शर्मा और एक अन्य	440
मनोज **उर्फ** मोनू **उर्फ** विशाल चौधरी **बनाम** हरियाणा राज्य और एक अन्य	348
सत्य सिंह और एक अन्य **बनाम** उत्तराखंड राज्य	375

संसद् के अधिनियम

राजभाषा अधिनियम, 1973 का हिन्दी में प्राधिकृत पाठ	1 – 18

विषय-सूची

पृष्ठ संख्या

आयुध अधिनियम, 1959 (1959 का 54)

– धारा 29 और 30 – अग्न्यायुध के अनुज्ञप्तिधारी द्वारा इसे ऐसे व्यक्ति को परिदत्त किया जाना जो कब्जे में रखने का हकदार न हो और अनुज्ञप्ति की किसी शर्त का उल्लंघन होना – अपीलार्थी-अभियुक्त की अनुज्ञप्त राइफल को सह-अभियुक्त द्वारा उनके सह-स्वामित्व के फार्म हाउस से ले जाना और मृतक की हत्या करने में प्रयोग किया जाना – दोषसिद्धि – संधार्यता – जहां अभियोजन पक्ष यह साबित करने में असफल रहा हो कि अभियुक्त द्वारा अपना अग्न्यायुध सह-अभियुक्त को स्वेच्छा से और जानबूझकर तथा मृतक की हत्या करने में मिली-भगत करके सौंपा गया था, वहां अग्न्यायुध के अनुज्ञप्तिधारी-अभियुक्त की अधिनियम की उक्त धाराओं के अधीन दोषसिद्धि को कायम नहीं रखा जा सकता है और उसे दोषमुक्त करना उचित होगा ।

तरलोचन सिंह उर्फ **राणा** बनाम **पंजाब राज्य** 451

किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 (2000 का 56)

– धारा 7क [सपठित किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) नियम, 2007 का नियम 12(3)(ख)] – विधि का उल्लंघन करने वाला किशोर – विद्यालय छोड़ने के प्रमाणपत्र के आधार पर किशोरावस्था का दावा – कोई मैट्रीकुलेशन या समतुल्य प्रमाणपत्र प्रस्तुत न किया जाना – अभियुक्त-किशोर की

पृष्ठ संख्या

आयु का अवधारण – जहां अभियुक्त द्वारा किशोरावस्था का दावा सद्भावी और सत्य रीति में न किया गया हो और ऐसे दस्तावेजों का अवलंब लिया गया हो जो विश्वसनीय और भरोसेमंद न हो तथा संदिग्ध प्रकृति के हों, वहां ऐसे अभियुक्त को किशोर समझते हुए किशोरावस्था का फायदा नहीं दिया जा सकता है ।

मनोज उर्फ **मोनू** उर्फ **विशाल चौधरी** बनाम **हरियाणा राज्य और एक अन्य** 348

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45)

– धारा 302 और 201 [साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106] – हत्या और साक्ष्य का विलोपन – मृतका द्वारा सायंकाल में अपनी ससुराल के मकान से चला जाना और बाद में जली हुई हालत में उसका शव पाया जाना – कोई प्रत्यक्षदर्शी साक्षी न होना – पारिस्थितिक साक्ष्य – अभियुक्तों (पति और सास) को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – संधार्यता – जहां मामले के तथ्यों और परिस्थितियों तथा साक्षियों के साक्ष्य से यह दर्शित न होता हो कि मृतका की मृत्यु कब और कैसे हुई और अभियोजन पक्ष परिस्थितियों की श्रृंखला को पूर्ण करने में सफल न रहा हो, वहां मात्र संदेह, अटकलबाजी और अनुमान के आधार पर की गई अभियुक्तों की दोषसिद्धि को कायम न रखते हुए दोषमुक्त करना न्यायोचित होगा ।

सत्य सिंह और एक अन्य बनाम **उत्तराखंड राज्य** 375

– धारा 302/34 – हत्या – सामान्य आशय – प्रत्यर्थी सं. 1 अभियुक्त सं. 2 और उसके पुत्र द्वारा रात्रि

पृष्ठ संख्या

में मृतक के ट्यूबवेल पर जाकर उसके उकसाने पर पुत्र द्वारा गोली मारकर मृतक की हत्या किया जाना – सामान्य आशय के आधार पर दोनों अभियुक्तों को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – अपील में उच्च न्यायालय द्वारा अपीलार्थी की घटनास्थल पर मौजूदगी पर संदेह करते हुए उसे दोषमुक्त किया जाना – संधार्यता – जहां पक्षकारों के बीच भूमि विवाद को लेकर पुरानी दुश्मनी हो और घटना के प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों द्वारा आरंभ से ही पिता और पुत्र, दोनों को अभियुक्तों के रूप में नामित किया हो और प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों द्वारा अभियुक्त सं. 2 प्रत्यर्थी सं. 1 (पिता) की उकसाने की विनिर्दिष्ट भूमिका का उल्लेख किया गया हो, सामान्य आशय और हेतु को सिद्ध और साबित किया गया हो, वहां अपील न्यायालय द्वारा अभियुक्त (सं. 2) की घटनास्थल पर मौजूदगी पर संदेह करते हुए की गई दोषमुक्ति को कायम नहीं रखा जा सकता है और विचारण न्यायालय के दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय को प्रत्यावर्तित करना उचित होगा ।

ओंकार सिंह बनाम **जयप्रकाश नारायण सिंह और एक अन्य** 336

– धारा 302/34 – हत्या – सामान्य आशय – चार अभियुक्तों द्वारा आयुधों से लैस होकर मृतक को घेर लिया जाना और उसकी हत्या किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा सभी अभियुक्तों को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – अपील में उच्च न्यायालय द्वारा दो अभियुक्तों (प्रत्यर्थी सं. 1 और 2-मूल अभियुक्त सं. 1 और 3) को संदेह का फायदा देते हुए दोषमुक्त किया जाना – संधार्यता – जहां प्रथम इत्तिला

पृष्ठ संख्या

रिपोर्ट दर्ज कराने के प्रक्रम से लेकर सभी अभियुक्तों के नामों को प्रकटित किया गया हो और घटना के सभी प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों द्वारा एक समान रूप से दोषमुक्त अभियुक्तों सहित सभी अभियुक्तों की भूमिका के बारे में स्पष्ट कथन किया गया हो तथा अभियोजन पक्ष द्वारा यह सिद्ध और साबित किया गया हो कि सभी अभियुक्त मृतक की हत्या करने के सामान्य आशय से घटनास्थल पर आए थे, वहां यह बात अतात्विक है कि किसी अभियुक्त द्वारा आयुध का प्रयोग किया गया था या नहीं और मृतक को क्षति कारित की गई थी या नहीं, इसलिए प्रत्यर्थी-अभियुक्तों (मूल अभियुक्त सं. 1 और 3) को दोषसिद्ध करते हुए विचारण न्यायालय के निर्णय को प्रत्यावर्तित करना उचित होगा ।

मध्य प्रदेश राज्य बनाम **रामजी लाल शर्मा और एक अन्य** 440

– धारा 302/34 – हत्या – अभियुक्तों द्वारा मृतका पर मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगाया जाना – मृतका को पहुंची दाह-क्षतियों के कारण उसकी मृत्यु हो जाना – मृतका द्वारा अस्पताल में भर्ती रहने के दौरान दो दिन के अंतराल में दो मृत्युकालिक कथन किया जाना – एक मृत्युकालिक कथन अन्वेषक अधिकारी के समक्ष और दूसरा कथन उप मंडल मजिस्ट्रेट के समक्ष किया जाना – मृतका द्वारा पुलिस अधिकारी के समक्ष किए गए पहले मृत्युकालिक कथन में ससुर द्वारा धन की मांग को लेकर उसकी पिटाई करने के लिए उसके पीछे भागना और मृतका द्वारा कमरे में बंद होकर मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगाने का कथन किया जाना – उप मंडल मजिस्ट्रेट के

पृष्ठ संख्या

समक्ष किए गए दूसरे मृत्युकालिक कथन में अभियुक्तों द्वारा उस पर मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगाने का कथन किया जाना – मृतका को पहुंची क्षतियों से पहले कथन की संपुष्टि न होना – विचारण न्यायालय द्वारा उप मंडल मजिस्ट्रेट के समक्ष किए गए मृत्युकालिक कथन का अवलंब लेकर अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया जाना – अपील न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को दोषमुक्त किया जाना – संधार्यता – जहां मृतका ने पूरे होशोहवाश में उप मंडल मजिस्ट्रेट के समक्ष किए गए मृत्युकालिक कथन में अभियुक्तों द्वारा उस पर हमला करने और मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगाने का कथन किया और अभिलेख पर इस बात का कोई साक्ष्य नहीं होने पर कि मजिस्ट्रेट कथन अभिलिखित करने में हितबद्ध था या अभियुक्तों के प्रति कोई विद्वेष था, वहां मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में अभियुक्तों को दोषसिद्ध करना न्यायोचित होगा ।

उत्तर प्रदेश राज्य बनाम **वीरपाल और एक अन्य** 315

वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 (2002 का 54)

– धारा 13 और 35 [सपठित केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 की धारा 11 (तारीख 8 अप्रैल, 2011 से अंत:स्थापित) और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 1944 का नियम 173थ (2) (तारीख 12 मई, 2000 से विलोपित)] – प्रतिभूति हित का प्रवर्तन और अधिनियम का अन्य विधियों पर अध्यारोही होना – कंपनी-निर्धारिती द्वारा उत्पाद-शुल्क का अपवंचन और केंद्रीय

पृष्ठ संख्या

उत्पाद-शुल्क अधिनियम के उपबंधों का अतिक्रमण किया जाना – उत्पाद-शुल्क आयुक्त द्वारा कंपनी-निर्धारिती पर उत्पाद-शुल्क के उद्ग्रहण सहित शास्ति अधिरोपित किया जाना और उत्पाद-शुल्क नियमों के नियम 173थ(2) के अधीन कंपनी की भूमि, संयंत्र, मशीनरी आदि का अधिहरण करने का आदेश पारित किया जाना – आदेश पारित करने की तारीख से बहुत पहले नियम 173थ(2) का विलोपन हो जाने के कारण अधिकरण द्वारा आदेश को अपास्त किया जाना – तत्पश्चात् कंपनी द्वारा अपनी जंगम और स्थावर संपत्तियों को बंधक/आडमान करके बैंक-अपीलार्थी से ऋण लिया जाना – उत्पाद-शुल्क विभाग द्वारा पुन: कंपनी की आस्तियों को अधिहृत करने की कार्यवाहियां आरंभ किया जाना – ऋण चुकाने में असफल रहने पर बैंक द्वारा भी सारफेसी अधिनियम के अधीन कंपनी को सूचना जारी किया जाना – उत्पाद-शुल्क विभाग द्वारा कंपनी की आस्तियों का अधिहरण करने की कार्यवाहियों को चुनौती देते हुए बैंक द्वारा उच्च न्यायालय में रिट याचिका फाइल किया जाना – रिट याचिका खारिज हो जाना – कंपनी की आस्तियों पर प्रथम पूर्विकता – चूंकि केंद्रीय सीमा-शुल्क और उत्पाद-शुल्क आयुक्त द्वारा नियम 173थ(2) के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए कंपनी की आस्तियों को अधिहृत करने के आदेश पारित किए जाने से बहुत पहले ही उत्पाद-शुल्क नियमों के उक्त नियम का कानून की पुस्तक से विलोपन कर दिए जाने के कारण आयुक्त को निर्धारिती की भूमि, मशीनरी, संयंत्र आदि का अधिहरण करने का आदेश पारित करने की कोई अधिकारिता न होने के कारण ऐसे आदेशों को कायम नहीं रखा जा सकता

पृष्ठ संख्या

है और 2002 के सारफेसी अधिनियम की केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम के उपबंधों पर अध्यारोही प्रभाव होने के कारण प्रतिभूत लेनदार-अपीलार्थी-बैंक को संदेय रकम की केंद्रीय उत्पाद-शुल्क विभाग को शोध्य रकम पर पूर्विकता होगी ।

पंजाब नेशनल बैंक बनाम **भारत संघ और अन्य** 394

तुलनात्मक सारणी

उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका

[2022] 1 उम. नि. प.

जनवरी-मार्च, 2022

क्र. सं.	निर्णय का नाम व तारीख	उम. नि. प.		ए. आई. आर. (एस. सी.)		एस. सी. सी.	
1	2	3		4		5	
1.	केवल कृष्ण **बनाम** राजेश कुमार और अन्य इत्यादि (22 नवंबर, 2021)	[2022] 1	1	2022	564	(2022)	– –
2.	फूल सिंह **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य (1 दिसंबर, 2021)		18		222	2	74
3.	अमित कुमार **बनाम** सुमन बेनीवाल (11 दिसंबर, 2021)		43		570	–	–
4.	पार्वती देवी **बनाम** बिहार राज्य अब झारखंड राज्य और अन्य (17 दिसंबर, 2021)		61		1268	–	–
5.	मध्य प्रदेश राज्य **बनाम** जोगेन्द्र और एक अन्य (11 जनवरी, 2022)		81		933	–	–

1	2	3			4		5	
6.	भगवानी **बनाम** मध्य प्रदेश राज्य (18 जनवरी, 2022)	[2022] 1	108	2022	527	(2022)	–	–
7.	पप्पू तिवारी **बनाम** झारखंड राज्य (31 जनवरी, 2022)		132		758		–	–
8.	ऋषिपाल सिंह सोलंकी **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य (18 नवंबर, 2021)		159		630		8	602
9.	उत्तर प्रदेश राज्य **बनाम** जय दत्त और एक अन्य (19 जनवरी, 2022)		209		–		3	184
10.	सुनील कुमार **बनाम** बिहार राज्य और एक अन्य (25 जनवरी, 2022)		222		715		3	245
11.	सुभाष **बनाम** उत्तर प्रदेश राज्य (1 फरवरी, 2022)		238		–		6	508
12.	एन. राजेन्द्रन **बनाम** एस. वल्ली (3 फरवरी, 2022)		252		–		–	–
13.	उत्तराखंड राज्य **बनाम** सचेन्दर सिंह रावत (4 फरवरी, 2022)		291		–		–	–
14.	उत्तर प्रदेश राज्य **बनाम** वीरपाल और एक अन्य (1 फरवरी, 2022)		315		–		4	741

1	2	3	4	5
15.	ओंकार सिंह **बनाम** जयप्रकाश नारायण सिंह और एक अन्य (9 फरवरी, 2022)	[2022] 1	336	2022 – (2022) 3 281
16.	मनोज **उर्फ** मोनू **उर्फ** विशाल चौधरी **बनाम** हरियाणा राज्य और एक अन्य (15 फरवरी, 2022)		348	– – –
17.	सत्य सिंह और एक अन्य **बनाम** उत्तराखंड राज्य (15 फरवरी, 2022)		375	– 5 438
18.	पंजाब नेशनल बैंक **बनाम** भारत संघ और अन्य (24 फरवरी, 2022)		394	1475 7 260
19.	मध्य प्रदेश राज्य **बनाम** रामजी लाल शर्मा और एक अन्य (9 मार्च, 2022)		440	1366 – –
20.	तरलोचन सिंह **उर्फ** राणा **बनाम** पंजाब राज्य (29 मार्च, 2022)		451	– – –

[2022] 1 उम. नि. प. 315

उत्तर प्रदेश राज्य

बनाम

वीरपाल और एक अन्य

[2022 की दांडिक अपील सं. 34]

1 फरवरी, 2022

न्यायमूर्ति एम. आर. शाह और न्यायमूर्ति बी. वी. नागरत्ना

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302/34 – हत्या – अभियुक्तों द्वारा मृतका पर मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगाया जाना – मृतका को पहुंची दाह-क्षतियों के कारण उसकी मृत्यु हो जाना – मृतका द्वारा अस्पताल में भर्ती रहने के दौरान दो दिन के अंतराल में दो मृत्युकालिक कथन किया जाना – एक मृत्युकालिक कथन अन्वेषक अधिकारी के समक्ष और दूसरा कथन उप मंडल मजिस्ट्रेट के समक्ष किया जाना – मृतका द्वारा पुलिस अधिकारी के समक्ष किए गए पहले मृत्युकालिक कथन में ससुर द्वारा धन की मांग को लेकर उसकी पिटाई करने के लिए उसके पीछे भागना और मृतका द्वारा कमरे में बंद होकर मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगाने का कथन किया जाना – उप मंडल मजिस्ट्रेट के समक्ष किए गए दूसरे मृत्युकालिक कथन में अभियुक्तों द्वारा उस पर मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगाने का कथन किया जाना – मृतका को पहुंची क्षतियों से पहले कथन की संपुष्टि न होना – विचारण न्यायालय द्वारा उप मंडल मजिस्ट्रेट के समक्ष किए गए मृत्युकालिक कथन का अवलंब लेकर अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया जाना – अपील न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को दोषमुक्त किया जाना – संधार्यता – जहां मृतका ने पूरे होशोहवाश में उप मंडल मजिस्ट्रेट के समक्ष किए गए मृत्युकालिक कथन में अभियुक्तों द्वारा उस पर हमला करने और मिट्टी का तेल छिड़क कर आग लगाने का

कथन किया और अभिलेख पर इस बात का कोई साक्ष्य नहीं होने पर कि मजिस्ट्रेट कथन अभिलिखित करने में हितबद्ध था या अभियुक्तों के प्रति कोई विद्वेष था, वहां मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में अभियुक्तों को दोषसिद्ध करना न्यायोचित होगा ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि मामले में अभि. सा. 1 द्वारा आरंभ में अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 326 के अधीन अपराधों के लिए इस आशय की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दी थी कि उसे मृतका की पुत्री से एक कॉल प्राप्त हुई कि उसकी माता जल गई है । वह तुरंत अस्पताल पहुंचा और उस समय उप मंडल मजिस्ट्रेट मृतका का कथन ले रहा था । उसके अनुसार, लड़की ने यह बताया था कि उसके ससुर और सास ने धन की मांग की थी और जब उसने इनकार कर दिया तो उस पर हमला किया गया तथा उसके पश्चात् उन्होंने उसके ऊपर मिट्टी का तेल छिड़क दिया और एक जलती हुई दियासलाई से उसे आग लगा दी । अन्वेषक अधिकारी द्वारा अन्वेषण आरंभ किया गया और अन्वेषण पूर्ण होने के पश्चात् अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराधों के लिए आरोप पत्र फाइल किया गया । विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभियुक्तों के विरुद्ध पूर्वोक्त अपराधों के लिए आरोप विरचित किया । अभियोजन पक्ष द्वारा अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप को साबित करने के लिए कुल मिलाकर 10 साक्षियों की परीक्षा की गई और अभिलेख पर दस्तावेजी साक्ष्य भी लाया गया, जिसमें दो मृत्युकालिक कथन भी सम्मिलित थे, जिनमें से एक पुलिस अधिकारी द्वारा अभिलिखित किया गया था और दूसरा मजिस्ट्रेट/उप मंडल मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किया गया था । विद्वान् विचारण न्यायालय ने साक्ष्य का मूल्यांकन करने पर और दो मृत्युकालिक कथनों पर विचार करते हुए मजिस्ट्रेट द्वारा तारीख 22 दिसंबर, 2011 को अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन को विश्वसनीय माना और यह भी मत व्यक्त किया कि अभियुक्तों की ओर से प्रस्तुत की गई यह प्रतिरक्षा कि मृतका ने स्वयं अपने ऊपर मिट्टी का तेल छिड़का था, अभिलेख पर के चिकित्सा साक्ष्य पर विचार करते हुए विश्वसनीय नहीं

है । उसके पश्चात् विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया और अभियुक्तों को आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया । अभियुक्तों ने विचारण न्यायालय द्वारा अधिरोपित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को मुख्य रूप से इस आधार पर दोषमुक्त कर दिया गया कि दो मृत्युकालिक कथन किए गए थे, एक तारीख 20 दिसंबर, 2011 को अभिलिखित किया गया था और दूसरा तारीख 22 दिसंबर, 2011 को अभिलिखित किया गया था तथा इन दो मृत्युकालिक कथनों के बीच दो दिनों का अंतराल था । उच्च न्यायालय ने उप मंडल मजिस्ट्रेट/उपायुक्त, आगरा द्वारा अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन पर विश्वास करने की बजाय दोनों मृत्युकालिक कथनों पर अविश्वास करते हुए अभियुक्तों को यह मत व्यक्त करते हुए दोषमुक्त कर दिया कि मृतका के अनुसार जब उसे धन देने के लिए मजबूर किया गया और जब उसने धन देने के लिए इनकार कर दिया, तो अभियुक्तों ने उस पर हमला करने की कोशिश की और वह भाग गई तथा इसी दबाव में उसने अपने ऊपर मिट्टी का तेल छिड़क लिया होगा । उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराधों के लिए दोषमुक्त करते हुए पारित किए गए आक्षेपित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर राज्य द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – इस न्यायालय द्वारा पूर्ववर्ती निर्णयों में अधिकथित की गई विधि को इस मामले के तथ्यों को लागू करते हुए, इस बात पर विचार किया जाना आवश्यक है कि क्या मजिस्ट्रेट द्वारा तारीख 22 दिसंबर, 2011 को अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन पर विश्वास किया जाना चाहिए या नहीं । अभिलेख पर मजिस्ट्रेट/उप मंडल मजिस्ट्रेट के विरुद्ध इस आशय के किसी अभिकथन के संबंध में कुछ नहीं है कि वह पक्षपाती था या अभियुक्तों के विरुद्ध मृत्युकालिक कथन अभिलिखित

करने में हितबद्ध था । उसे अन्वेषण के दौरान बुलाया गया था और उसने अन्वेषण के दौरान मृतका का मृत्युकालिक कथन और बयान अभिलिखित किया था । यहां तक कि उच्च न्यायालय ने भी विद्वेष के आधार पर मजिस्ट्रेट/उप मंडल मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन की विश्वसनीयता पर संदेह नहीं किया था । उच्च न्यायालय द्वारा मजिस्ट्रेट/उप मंडल मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन पर विश्वास न करने के लिए दिया गया कारण सुसंगत नहीं है और इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता है । इस न्यायालय को मजिस्ट्रेट द्वारा तारीख 22 दिसंबर, 2011 को अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन पर संदेह करने का कोई कारण दिखाई नहीं देता है, जिसमें मृतका ने विनिर्दिष्ट रूप से यह कथन किया था कि धन की मांग करने को लेकर झगड़ा होने के कारण प्रत्यर्थी-अभियुक्तों ने उस पर मिट्टी का तेल छिड़कने के पश्चात् उसे जला दिया था । अत: मजिस्ट्रेट द्वारा तारीख 22 दिसंबर, 2011 को अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन में प्रत्यर्थी-मूल अभियुक्तों को विनिर्दिष्ट रूप से नामित किया गया है और इसमें विनिर्दिष्ट रूप से यह कहा गया है कि उन्होंने उस पर मिट्टी का तेल छिड़का था । इस प्रक्रम पर, यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि जहां तक तारीख 20 दिसंबर, 2011 को अन्वेषक अधिकारी द्वारा अभिलिखित किए गए कथन का संबंध है, जिसमें यह अभिलिखित किया गया था कि ससुर ने धन की मांग की थी और मृतका की एक छड़ी से पिटाई करनी शुरू कर दी, तो वह भाग गई और उसने अंदर से दरवाजा बंद कर लिया तथा गुस्से में उसने कमरे में रखा मिट्टी का तेल छिड़क लिया और स्वयं को आग लगा ली थी, अभिलेख पर के चिकित्सा साक्ष्य पर विचार करते हुए पुलिस अधिकारी द्वारा तारीख 20 दिसंबर, 2011 को अभिलिखित किए गए उक्त कथन/मृत्युकालिक कथन से कोई विश्वास प्रेरित नहीं होता है । उक्त मृत्युकालिक कथन में उल्लिखित वृत्तांत का चिकित्सीय साक्ष्य से समर्थन नहीं होता है । यह उल्लेखनीय है कि यहां तक कि अभियुक्तों के अनुसार भी, मृतका का ससुर उसे अस्पताल लेकर गया था । यदि प्रथम मृत्युकालिक कथन में मृतका के इस कथन को स्वीकार किया जाता है कि उसने अंदर से दरवाजा बंद कर लिया था और गुस्से में उसने अपने

ऊपर मिट्टी का तेल छिड़क लिया था, उस दशा में भी अभियुक्तों द्वारा यह स्पष्ट नहीं किया गया है कि उसे अस्पताल कैसे ले जाया गया था क्योंकि अभिलेख पर ऐसा कुछ नहीं है कि ससुर-अभियुक्त द्वारा दरवाजा तोड़ा गया था/खोला गया था और उसके पश्चात् उसे अस्पताल ले जाया गया था । यहां तक कि अभिलेख पर के चिकित्सीय साक्ष्य और मृतका को पहुंची क्षतियों पर विचार करते हुए यह पाया गया है कि छाती पर कतई कोई क्षतियां नहीं थीं और क्षतियां सिर और पीछे की ओर पाई गई थीं । जैसा कि विचारण न्यायालय द्वारा ठीक ही मत व्यक्त किया गया है, यदि उसने मिट्टी का तेल छिड़ककर आत्महत्या की होती, तो छाती पर क्षतियां होतीं तथा सिर और पीछे की ओर क्षतियां नहीं पहुंचतीं । इस न्यायालय के मत में, मृतका के शरीर पर जो क्षतियां पाई गई थीं, वे केवल तभी संभव हो सकती थीं यदि किसी व्यक्ति द्वारा उसके पीछे से उस पर मिट्टी का तेल छिड़का गया हो । पूर्वोक्त पहलू पर उच्च न्यायालय द्वारा कतई विचार नहीं किया गया था । अत: उप मंडल मजिस्ट्रेट/मजिस्ट्रेट द्वारा तारीख 22 दिसंबर, 2011 को अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन पर विचार करते हुए अभियुक्तों को उस अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जा सकता है, जिसके लिए उनका विचारण किया गया था । अत: हमारा यह मत है कि उच्च न्यायालय ने अभियुक्तों को दोषमुक्त करके गंभीर गलती की है । उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषमुक्त करते हुए पारित किया गया आक्षेपित निर्णय और आदेश असंधार्य है और यह अभिखंडित और अपास्त किए जाने योग्य है । (पैरा 10 और 11)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2019]	(2019) 8 एस. सी. सी. 779 : **जगबीर सिंह** बनाम **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली)** ;	5.3, 9.1.2
[2008]	(2008) 5 एस. सी. सी. 468 : **अमोल सिंह** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य** ;	5.4

[2008] (2008) 2 एस. सी. सी. 516 :
विकास और अन्य बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ; 5.3, 9.1.2

[2002] (2002) 6 एस. सी. सी. 710 :
लक्ष्मण बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ; 5.3, 9.1.1

[1999] (1999) 6 एस. सी. सी. 545 :
हरजीत कौर बनाम **पंजाब राज्य** ; 5.3, 9.1.2

[1999] (1999) 9 एस. सी. सी. 562 :
कोली चुन्नीलाल सावजी और एक अन्य
बनाम **गुजरात राज्य** ; 5.3, 9.1.2

[1998] (1998) 9 एस. सी. सी. 303 :
रवि चंद्र और अन्य बनाम **पंजाब राज्य** ; 5.3, 9.1.2

[1993] (1993) 2 एस. सी. सी. 684 :
कुंडुला बाला सुब्रहमण्यम और एक अन्य
बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य** ; 5.4

[1992] (1992) 2 एस. सी. सी. 474 :
पाणीबेन (श्रीमती) बनाम **गुजरात राज्य** ; 10.1

[1985] [1985] 2 उम. नि. प. 121 =
(1985) 1 एस. सी. सी. 552 :
उत्तर प्रदेश राज्य बनाम **राम सागर यादव**
और अन्य ; 10.1

[1983] (1983) 1 एस. सी. सी. 211 :
रामवती देवी बनाम **बिहार राज्य** ; 10.1

[1976] [1976] 4 उम. नि. प. 50 = (1976) 3
एस. सी. सी. 104 :
मुन्नु राजा और एक अन्य बनाम **मध्य**
प्रदेश राज्य ; 5.4, 10.1

[1958] ए. आई. आर. 1958 एस. सी. 22 =
[1958] एस. सी. आर. 552 :
कुशाल राव बनाम **बाम्बे राज्य** । 10.2

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2022 की दांडिक अपील सं. 34.

2015 की दांडिक अपील सं. 4658 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा तारीख 30 मई, 2020 को पारित किए गए निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सुश्री गरिमा प्रसाद, ज्येष्ठ अधिवक्ता

प्रत्यर्थियों की ओर से श्री पी. एस. खुराना

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति एम. आर. शाह ने दिया ।

न्या. शाह – 2015 की दांडिक अपील सं. 4658 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ द्वारा तारीख 30 मई, 2020 को पारित किए गए उस आक्षेपित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर राज्य ने यह अपील फाइल की है, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने इस अपील में प्रत्यर्थी-मूल अभियुक्तों द्वारा फाइल की गई उक्त अपील मंजूर की थी और अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराधों के लिए दोषमुक्त कर दिया था ।

2. इस अपील के तथ्य संक्षेप में निम्नलिखित हैं ।

2.1 अभि. सा. 1 बंगाली बाबू ने आरंभ में भारतीय दंड संहिता की धारा 326 के अधीन अपराधों के लिए इस आशय की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट, जिसे अपराध मामला सं. 1144/11 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया था, दी थी कि तारीख 20 दिसंबर, 2011 को लगभग 2.30 बजे अपराह्न में उसे राधा – मृतका की पुत्री से एक कॉल प्राप्त हुई कि उसकी माता जल गई है । वह तुरंत अस्पताल पहुंचा और उस समय उप मंडल मजिस्ट्रेट मृतका का कथन ले रहा था । उसके अनुसार, लड़की ने यह बताया था कि उसके ससुर और सास ने धन की मांग की थी और जब उसने इनकार कर दिया तो उस पर हमला किया गया तथा उसके पश्चात् उन्होंने उसके ऊपर मिट्टी का तेल छिड़क दिया और एक जलती हुई दियासलाई से उसे आग लगा दी । अन्वेषक अधिकारी ने अन्वेषण आरंभ किया । उसने सुसंगत साक्षियों के कथन अभिलिखित किए और चिकित्सा साक्ष्य सहित आवश्यक साक्ष्य एकत्रित किया । अन्वेषण पूर्ण

होने के पश्चात्, अन्वेषक अधिकारी ने अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराधों के लिए आरोप पत्र फाइल किया । विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभियुक्तों के विरुद्ध पूर्वोक्त अपराधों के लिए आरोप विरचित किया । अभियुक्तों ने आरोप से इनकार किया और दोषी न होने का अभिवाक् किया । इसलिए उन्होंने पूर्वोक्त अपराधों के लिए विचारण न्यायालय द्वारा विचारण किए जाने का दावा किया ।

2.2 अभियोजन पक्ष ने अभियुक्तों के विरुद्ध आरोप को साबित करने के लिए कुल मिलाकर 10 साक्षियों की परीक्षा की । अभि. सा. 5 पक्षद्रोही हो गया था । अभियोजन पक्ष अभिलेख पर दस्तावेजी साक्ष्य भी लाया, जिसमें दो मृत्युकालिक कथन भी सम्मिलित थे, जिनमें से एक पुलिस अधिकारी द्वारा अभिलिखित किया गया था और दूसरा मजिस्ट्रेट/उप मंडल मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किया गया था । विद्वान् विचारण न्यायालय ने साक्ष्य का मूल्यांकन करने पर और दो मृत्युकालिक कथनों पर विचार करते हुए मजिस्ट्रेट द्वारा तारीख 22 दिसंबर, 2011 को अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन को विश्वसनीय माना और यह भी मत व्यक्त किया कि अभियुक्तों की ओर से प्रस्तुत की गई यह प्रतिरक्षा कि मृतका ने स्वयं अपने ऊपर मिट्टी का तेल छिड़का था, अभिलेख पर के चिकित्सा साक्ष्य पर विचार करते हुए विश्वसनीय नहीं है । उसके पश्चात् विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया और अभियुक्तों को आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया ।

3. अभियुक्तों ने विचारण न्यायालय द्वारा अधिरोपित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर उच्च न्यायालय के समक्ष अपील (2015 की दांडिक अपील सं. 4658) फाइल की । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा अभियुक्तों को मुख्य रूप से इस आधार पर दोषमुक्त कर दिया कि दो मृत्युकालिक कथन किए गए थे, एक तारीख 20 दिसंबर, 2011 को अभिलिखित किया गया था और दूसरा तारीख 22 दिसंबर, 2011 को अभिलिखित

किया गया था तथा इन दो मृत्युकालिक कथनों के बीच दो दिनों का अंतराल था । उच्च न्यायालय ने उप मंडल मजिस्ट्रेट/उपायुक्त, आगरा द्वारा अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन पर विश्वास करने की बजाय दोनों मृत्युकालिक कथनों पर अविश्वास करते हुए अभियुक्तों को यह मत व्यक्त करते हुए दोषमुक्त कर दिया कि मृतका के अनुसार जब उसे धन देने के लिए मजबूर किया गया और जब उसने धन देने के लिए इनकार कर दिया, तो अभियुक्तों ने उस पर हमला करने की कोशिश की और वह भाग गई तथा इसी दबाव में उसने अपने ऊपर मिट्टी का तेल छिड़क लिया होगा ।

4. उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराधों के लिए दोषमुक्त करते हुए पारित किए गए आक्षेपित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर राज्य ने यह अपील फाइल की है ।

5. राज्य की ओर से हाजिर होने वाली विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता सुश्री गरिमा प्रसाद ने जोरदार रूप से यह दलील दी कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में उच्च न्यायालय ने अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन गंभीर अपराधों के लिए दोषमुक्त करके भारी गलती कारित की थी ।

5.1 राज्य की ओर से हाजिर होने वाली विद्वान् ज्येष्ठ अधिवक्ता द्वारा यह भी दलील दी गई कि प्रस्तुत मामले में उच्च न्यायालय को सक्षम मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन पर विश्वास और विचार किया जाना चाहिए था ।

5.2 यह दलील दी गई कि विचारण न्यायालय द्वारा साक्ष्य का मूल्यांकन करने पर तर्कपूर्ण कारण दिए गए थे कि अन्वेषक अधिकारी के समक्ष किए गए कथन से, जो तारीख 20 दिसंबर, 2011 को किया गया प्रथम मृत्युकालिक कथन समझा गया था, कोई विश्वास प्रेरित नहीं होता है । यह दलील दी गई कि विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभिलिखित किया गया पूर्वोक्त निष्कर्ष अभिलेख पर उपलब्ध साक्ष्य, विशिष्ट रूप से चिकित्सा साक्ष्य, के मूल्यांकन पर आधारित था ।

5.3 यह दलील दी गई कि उच्च न्यायालय को यह मूल्यांकन करना चाहिए था कि एक सक्षम मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किया गया मृत्युकालिक कथन दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अन्वेषक अधिकारी को किए गए कथन की अपेक्षा अधिक महत्व रखता है । **रवि चंद्र और अन्य** बनाम **पंजाब राज्य**[1] ; **हरजीत कौर** बनाम **पंजाब राज्य**[2] ; **कोली चुन्नीलाल सावजी और एक अन्य** बनाम **गुजरात राज्य**[3] ; **विकास और अन्य** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[4] ; **लक्ष्मण** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[5] और **जगबीर सिंह** बनाम **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र, दिल्ली)**[6] वाले मामलों में इस न्यायालय के विनिश्चयों का अवलंब लिया गया ।

5.4 यह दलील दी गई कि प्रस्तुत मामले में उच्च न्यायालय ने विनिर्दिष्ट रूप से यह मत व्यक्त किया था कि दोनों मृत्युकालिक कथनों पर विश्वास नहीं किया जा सकता है और मृतका के एक से अधिक मृत्युकालिक कथनों का अवलंब लेना सुरक्षित नहीं है । यह दलील दी गई कि उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था कि मृतका के एक से अधिक मृत्युकालिक कथनों का किसी संपुष्टिकारी साक्ष्य के अभाव में अवलंब लेना सुरक्षित नहीं होगा । यह दलील दी गई कि यह मत **अमोल सिंह** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[7]; **कुंडुला बाला सुब्रहमण्यम और एक अन्य** बनाम **आंध्र प्रदेश राज्य**[8] और **मुन्नु राजा और एक अन्य** बनाम **मध्य प्रदेश राज्य**[9] वाले मामलों में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित विधि के प्रतिकूल है । यह दलील दी गई कि जैसा कि इस न्यायालय द्वारा पूर्वोक्त विनिश्चयों में अभिनिर्धारित किया गया है, अभिलेख पर किसी

---

[1] (1998) 9 एस. सी. सी. 303.

[2] (1999) 6 एस. सी. सी. 545.

[3] (1999) 9 एस. सी. सी. 562.

[4] (2008) 2 एस. सी. सी. 516.

[5] (2002) 6 एस. सी. सी. 710.

[6] (2019) 8 एस. सी. सी. 779.

[7] (2008) 5 एस. सी. सी. 468.

[8] (1993) 2 एस. सी. सी. 684.

[9] [1976] 4 उम. नि. प. 50 = (1976) 3 एस. सी. सी. 104.

संपुष्टिकारी साक्ष्य के बिना मृतका के मृत्युकालिक कथन के आधार पर दोषसिद्धि की जा सकती है ।

5.5 यह दलील दी गई कि प्रस्तुत मामले में उच्च न्यायालय ने किसी तर्कपूर्ण कारण के बिना मृत्युकालिक कथनों, विशिष्ट रूप से मजिस्ट्रेट/उप मंडल मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन का अवलंब न लेकर गलती की थी । यह दलील दी गई कि उच्च न्यायालय ने कार्यपालक मजिस्ट्रेट, जिसने तारीख 22 दिसंबर, 2011 को कथन अभिलिखित किया था, की विश्वसनीयता पर संदेह नहीं किया था/या द्वेष होने के संबंध में कोई मत व्यक्त नहीं किया था । यह दलील दी गई कि अत: उच्च न्यायालय को मजिस्ट्रेट/उप मंडल मजिस्ट्रेट द्वारा तारीख 22 दिसंबर, 2011 को अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन का अवलंब लेकर दोषसिद्धि को कायम रखा जाना चाहिए था ।

5.6 अत: यह दलील दी गई कि उच्च न्यायालय द्वारा पारित किया गया आक्षेपित निर्णय और आदेश संधार्य नहीं है और आक्षेपित निर्णय और आदेश अभिखंडित और अपास्त किए जाने योग्य है तथा विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दोषसिद्ध करते हुए पारित किया गया निर्णय और आदेश कायम रखे जाने/प्रत्यावर्तित किए जाने योग्य है ।

6. प्रत्यर्थी-मूल अभियुक्तों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री पी. एस. खुराना द्वारा इस अपील का पुरजोर विरोध किया गया । मूल अभियुक्तों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा जोरदार रूप से यह दलील दी गई कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में और एक से अधिक मृत्युकालिक कथनों को ध्यान में रखते हुए उच्च न्यायालय ने अभियुक्तों को ठीक ही दोषमुक्त किया था ।

6.1 यह दलील दी गई कि जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा ठीक ही मत व्यक्त किया गया है, जब एक बार पुलिस अधिकारी द्वारा तारीख 20 दिसंबर, 2011 को मृत्युकालिक कथन अभिलिखित किया गया था, तो उसके पश्चात् तारीख 22 दिसंबर, 2011 को एक अन्य मृत्युकालिक कथन अभिलिखित करने का कोई कारण नहीं था ।

6.2 यह दलील दी गई कि तारीख 20 दिसंबर, 2011 को अभिलिखित किए गए प्रथम मृत्युकालिक कथन में मृतका ने यह कहा था कि ससुर के डर के कारण उसने आत्महत्या की है और उसके तारीख 20 दिसंबर, 2011 के प्रथम मृत्युकालिक कथन में प्रत्यर्थी सं. 1 ससुर की बताई गई भूमिका केवल यह थी कि वह उसकी पिटाई करने के लिए उसके पीछे भाग रहा था और न कि उसे जलाने के लिए, और मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किए गए द्वितीय मृत्युकालिक कथन में कायापलट किया गया और विपदग्रस्त-मृतका ने परिवार के सभी अन्य सदस्यों को आलिप्त किया था, इसलिए उच्च न्यायालय ने मजिस्ट्रेट/उप मंडल मजिस्ट्रेट द्वारा तारीख 22 दिसंबर, 2011 को अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन का अवलंब लेने के लिए ठीक ही इनकार किया था ।

6.3 यह दलील दी गई कि उच्च न्यायालय ने साक्ष्य का मूल्यांकन करने पर यह मत व्यक्त किया था कि मृतका मानसिक रूप से कमजोर थी । यह दलील दी गई कि अत: ऐसी मानसिक अवस्था में और जब उसने धन देने से इनकार कर दिया था, तो अपने ससुर के इस भय के कारण कि उसकी पिटाई की जाएगी, उसने अपने ऊपर मिट्टी का तेल छिड़क कर आत्महत्या कर ली थी, इसलिए हत्या का कोई मामला सिद्ध नहीं किया गया था और इसलिए उच्च न्यायालय ने अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए ठीक ही दोषमुक्त किया था ।

7. उपरोक्त दलीलें देते हुए इस अपील को खारिज करने का अनुरोध किया गया ।

8. हमने संबंधित पक्षकारों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेलों को विस्तारपूर्वक सुना ।

9. प्रारंभ में, प्रस्तुत मामले में यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि इसमें दो मृत्युकालिक कथन हैं, एक तारीख 20 दिसंबर, 2011 को पुलिस अधिकारी द्वारा अभिलिखित किया गया था और दूसरा तारीख 22 दिसंबर, 2011 को मजिस्ट्रेट/उप मंडल मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किया गया था । यहां तक कि आक्षेपित निर्णय और आदेश में भी उच्च न्यायालय ने विनिर्दिष्ट रूप से यह मत व्यक्त किया था कि कोई भी

मृत्युकालिक कथन विश्वासोत्पादक नहीं है । उच्च न्यायालय ने मजिस्ट्रेट/उप मंडल मजिस्ट्रेट द्वारा तारीख 22 दिसंबर, 2011 को अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन पर मुख्य रूप से इस आधार पर विश्वास नहीं किया था कि जब मृत्युकालिक कथन तारीख 20 दिसंबर, 2011 को पहले ही पुलिस अधिकारी द्वारा अभिलिखित किया गया था, तो दूसरा मृत्युकालिक कथन अभिलिखित करने का कोई कारण नहीं था । तथापि, यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि पुलिस अधिकारी द्वारा तारीख 20 दिसंबर, 2011 को जो अभिलिखित किया गया था, वह दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन किया गया कथन था । इसलिए यह उचित समझा गया कि मजिस्ट्रेट द्वारा मृतका का मृत्युकालिक कथन अभिलिखित किया जाए और यही कारण है कि तारीख 22 दिसंबर, 2011 को मृतका का मृत्युकालिक कथन अभिलिखित करने के लिए उप मंडल मजिस्ट्रेट को बुलाया गया था । पुनरावृत्ति करते हुए, यह पाया गया है कि यहां तक कि उच्च न्यायालय ने भी विनिर्दिष्ट रूप से यह मत व्यक्त किया था कि पुलिस द्वारा तारीख 20 दिसंबर, 2011 को अभिलिखित किए गए कथन/मृत्युकालिक कथन से कोई विश्वास प्रेरित नहीं होता है । मामले को इस दृष्टि से देखते हुए, इस बात पर विचार किया जाना आवश्यक है कि क्या तारीख 22 दिसंबर, 2011 को मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन पर विश्वास किया जाना चाहिए या नहीं और क्या मजिस्ट्रेट/उप मंडल मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किए गए ऐसे मृत्युकालिक कथन के आधार पर अभियुक्तों को दोषसिद्ध किया जा सकता है या नहीं ।

9.1 पूर्वोक्त प्रश्न/विवाद्यक पर विचार करते हुए मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन की विश्वसनीयता पर इस न्यायालय के कुछेक विनिश्चयों को निर्दिष्ट किया जाना आवश्यक है ।

9.1.1 **लक्ष्मण** (उपर्युक्त) वाले मामले में मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन की विश्वसनीयता पर पूर्ववर्ती विनिश्चयों को निर्दिष्ट करने और विचार करने के पश्चात् यह मत व्यक्त किया गया था कि मजिस्ट्रेट एक निष्पक्ष साक्षी और उत्तरदायी

अधिकारी होने के कारण तथा यह संदेह करने के लिए कोई परिस्थिति या सामग्री न होने के कारण कि मजिस्ट्रेट की अभियुक्तों से कोई दुश्मनी थी या मृत्युकालिक कथन गढ़ने के लिए किसी प्रकार से हितबद्ध था, मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किए गए कथन पर संदेह करने का प्रश्न उद्भूत नहीं होता है ।

9.1.2 **जगबीर सिंह** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय के पास मृत्युकालिक कथन से संबंधित विधि और एक से अधिक मृत्युकालिक कथनों की समस्या पर विस्तारपूर्वक विचार करने का अवसर आया था । यह मत और अभिनिर्धारित किया गया कि मात्र इस कारण कि मामले में दो/एक से अधिक मृत्युकालिक कथन हैं, सभी मृत्युकालिक कथनों को नामंजूर नहीं किया जाना चाहिए । यह मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया कि जब एक से अधिक मृत्युकालिक कथन हों, तो प्रत्येक मामले के तथ्यों के आधार पर मामले का विनिश्चय किया जाना चाहिए और न्यायालय अभिलेख पर की संपूर्ण सामग्री के साथ-साथ उन परिवर्ती परिस्थितियों, जिनमें भिन्न-भिन्न मृत्युकालिक कथन किए गए थे, की भी सावधानीपूर्वक परीक्षा करने के अपने कर्तव्य से मुक्त नहीं हो जाएगा । अंततः, इस न्यायालय ने पैरा 32 में निम्नलिखित निष्कर्ष निकाला :–

> **"एक से अधिक मृत्युकालिक कथन पर हमारा निष्कर्ष**
>
> 32. हमारा यह विचार है कि उस विधि का, जो इस न्यायालय द्वारा अधिकथित की गई है, सिंहावलोकन करने पर कि जब एक से अधिक मृत्युकालिक कथन हों और पूर्ववर्ती मृत्युकालिक कथन में अभियुक्त को आलिप्त किया जाना न चाहा गया हो किंतु बाद में किए गए मृत्युकालिक कथन में मृतक द्वारा उलट-फेर किया गया हो, तो ऐसे मामले का विनिश्चय हर मामले के तथ्यों के आधार पर किया जाना चाहिए । न्यायालय अभिलेख पर की संपूर्ण सामग्री के साथ-साथ उन परिवर्ती परिस्थितियों, जिनमें भिन्न-भिन्न मृत्युकालिक कथन किए गए थे, की भी सावधानीपूर्वक परीक्षा करने के अपने कर्तव्य से मुक्त नहीं हो जाएगा । यदि न्यायालय यह पाता है कि अपराध में आलिप्त करने वाले

> मृत्युकालिक कथन से, विशिष्ट रूप से मृतक के ऐसे कथन करने के सामर्थ्य के साथ-साथ, उस स्वेच्छया से जिससे यह कथन किया गया था, निस्संदेह, सिखाने-पढ़ाने और सुझाव देने की बात को नकारते हुए और ऐसे अन्य साक्ष्य से, जिससे अपराध में आलिप्त करने वाले मृत्युकालिक कथन की अंतर्वस्तुओं का समर्थन होता है, सत्य स्थिति प्रकट होती है, तो ऐसे कथन के आधार पर कार्यवाही की जा सकती है । समान रूप से, पूर्ववर्ती मृत्युकालिक कथन को स्वीकार या अस्वीकार करने योग्य बनाने वाली परिस्थितियों पर भी विचार किया जा सकता है ।"

रवि चंद्र और अन्य (उपर्युक्त), **हरजीत कौर** (उपर्युक्त), **कोली चुनीलाल सावजी और एक अन्य** (उपर्युक्त) और **विकास और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामलों में इस न्यायालय द्वारा इसी प्रकार का मत व्यक्त किया गया था ।

10. पूर्वोक्त विनिश्चयों में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित की गई विधि को इस मामले के तथ्यों को लागू करते हुए, इस बात पर विचार किया जाना आवश्यक है कि क्या मजिस्ट्रेट द्वारा तारीख 22 दिसंबर, 2011 को अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन पर विश्वास किया जाना चाहिए या नहीं । अभिलेख पर मजिस्ट्रेट/उप मंडल मजिस्ट्रेट के विरुद्ध इस आशय के किसी अभिकथन के संबंध में कुछ नहीं है कि वह पक्षपाती या अभियुक्तों के विरुद्ध मृत्युकालिक कथन अभिलिखित करने में हितबद्ध था । उसे अन्वेषण के दौरान बुलाया गया था और उसने अन्वेषण के दौरान मृतका का मृत्युकालिक कथन और बयान अभिलिखित किया था । यहां तक कि उच्च न्यायालय ने भी विद्वेष के आधार पर मजिस्ट्रेट/उप मंडल मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन की विश्वसनीयता पर संदेह नहीं किया था । उच्च न्यायालय द्वारा मजिस्ट्रेट/उप मंडल मजिस्ट्रेट द्वारा अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन पर विश्वास न करने के लिए दिया गया कारण सुसंगत नहीं है और इसे स्वीकार नहीं किया जा सकता है । हमें मजिस्ट्रेट द्वारा तारीख 22 दिसंबर, 2011 को अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन पर संदेह करने का कोई कारण दिखाई नहीं देता है,

जिसमें मृतका ने विनिर्दिष्ट रूप से यह कथन किया था कि धन की मांग करने को लेकर झगड़ा होने के कारण प्रत्यर्थी-अभियुक्तों ने उस पर मिट्टी का तेल छिड़कने के पश्चात् उसे जला दिया था । अत: मजिस्ट्रेट द्वारा तारीख 22 दिसंबर, 2011 को अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन में प्रत्यर्थी-मूल अभियुक्तों को विनिर्दिष्ट रूप से नामित किया गया है और इसमें विनिर्दिष्ट रूप से यह कहा गया है कि उन्होंने उस पर मिट्टी का तेल छिड़का था । इस प्रक्रम पर, यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि जहां तक तारीख 20 दिसंबर, 2011 को अन्वेषक अधिकारी द्वारा अभिलिखित किए गए कथन का संबंध है, जिसमें यह अभिलिखित किया गया था कि ससुर ने धन की मांग की थी और मृतका की एक छड़ी से पिटाई करनी शुरू कर दी, तो वह भाग गई और उसने अंदर से दरवाजा बंद कर लिया तथा गुस्से में उसने कमरे में रखा मिट्टी का तेल छिड़क लिया और स्वयं को आग लगा ली थी, अभिलेख पर के चिकित्सा साक्ष्य पर विचार करते हुए पुलिस अधिकारी द्वारा तारीख 20 दिसंबर, 2011 को अभिलिखित किए गए उक्त कथन/मृत्युकालिक कथन से कोई विश्वास प्रेरित नहीं होता है । उक्त मृत्युकालिक कथन में उल्लिखित वृत्तांत का चिकित्सीय साक्ष्य से समर्थन नहीं होता है । यह उल्लेखनीय है कि यहां तक कि अभियुक्तों के अनुसार भी, मृतका का ससुर उसे अस्पताल लेकर गया था । यदि प्रथम मृत्युकालिक कथन में मृतका के इस कथन को स्वीकार किया जाता है कि उसने अंदर से दरवाजा बंद कर लिया था और गुस्से में उसने अपने ऊपर मिट्टी का तेल छिड़क लिया था, उस दशा में भी अभियुक्तों द्वारा यह स्पष्ट नहीं किया गया है कि उसे अस्पताल कैसे ले जाया गया था क्योंकि अभिलेख पर ऐसा कुछ नहीं है कि ससुर-अभियुक्त द्वारा दरवाजा तोड़ा गया था/खोला गया था और उसके पश्चात् उसे अस्पताल ले जाया गया था । यहां तक कि अभिलेख पर के चिकित्सीय साक्ष्य और मृतका को पहुंची क्षतियों पर विचार करते हुए यह पाया गया है कि छाती पर कतई कोई क्षतियां नहीं थीं और क्षतियां सिर और पीछे की ओर पाई गई थीं । जैसा कि विचारण न्यायालय द्वारा ठीक ही मत व्यक्त किया गया है, यदि उसने मिट्टी का तेल छिड़ककर आत्महत्या की होती, तो छाती पर क्षतियां होती तथा सिर और पीछे की ओर क्षतियां

नहीं पहुंचती । हमारे मत में, मृतका के शरीर पर जो क्षतियां पाई गई थीं, वे केवल तभी संभव हो सकती थीं यदि किसी व्यक्ति द्वारा उसके पीछे से उस पर मिट्टी का तेल छिड़का गया हो । पूर्वोक्त पहलू पर उच्च न्यायालय द्वारा कतई विचार नहीं किया गया था ।

10.1 अब, जहां तक इस पहलू का संबंध है कि क्या किसी संपुष्टिकारी साक्ष्य के अभाव में केवल मृत्युकालिक कथन का अवलंब लेकर दोषसिद्धि की जा सकती है, **मुन्नु राजा और एक अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में और **पाणीबेन (श्रीमती)** बनाम **गुजरात राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय के पश्चात्वर्ती विनिश्चय को निर्दिष्ट किया जाना आवश्यक है । पूर्वोक्त विनिश्चयों में, यह विनिर्दिष्ट रूप से मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया है कि इस आशय का न तो विधि का और न ही प्रज्ञा का नियम है कि किसी मृत्युकालिक कथन पर संपुष्टि के बिना कार्यवाही नहीं की जा सकती है । यह मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया गया है कि यदि न्यायालय का यह समाधान हो जाता है कि मृत्युकालिक कथन सत्य है और स्वेच्छा से किया गया है, तो संपुष्टि के बिना भी इसके आधार पर दोषसिद्धि की जा सकती है । **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **राम सागर यादव और अन्य**[2] और **रामवती देवी** बनाम **बिहार राज्य**[3] वाले मामलों में भी इसी प्रकार का मत व्यक्त किया गया था । इसलिए एकमात्र मृत्युकालिक कथन के आधार पर संपुष्टि के बिना दोषसिद्धि की जा सकती है ।

10.2 **कुशाल राव** बनाम **बाम्बे राज्य**[4] वाला मामला मृत्युकालिक कथनों के साक्ष्यिक महत्व की विधि पर एक महत्वपूर्ण निर्णय है । इस न्यायालय ने उन परिस्थितियों के बारे में निम्नलिखित सिद्धांत अधिकथित किए हैं, जिनके अधीन किसी मृत्युकालिक कथन को संपुष्टि के बिना स्वीकार किया जा सकेगा :–

---

[1] (1992) 2 एस. सी. सी. 474.

[2] [1985] 2 उम. नि. प. 121 = (1985) 1 एस. सी. सी. 552.

[3] (1983) 1 एस. सी. सी. 211.

[4] ए. आई. आर. 1958 एस. सी. 22 = [1958] एस. सी. आर. 552.

"16. साक्ष्य अधिनियम के सुसंगत उपबंधों और भारत में विभिन्न उच्च न्यायालयों तथा इस न्यायालय के विनिश्चित मामलों का पुनर्विलोकन करने पर हम मद्रास उच्च न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ की पूर्वोक्त राय से सहमत होते हुए इस निष्कर्ष पर पहुंचे हैं कि (1) विधि के आत्यंतिक नियम के रूप में यह अधिकथित नहीं किया जा सकता है कि कोई मृत्युकालिक कथन तब तक दोषसिद्धि का एकमात्र आधार नहीं हो सकता है, जब तक इसकी संपुष्टि न हुई हो ; (2) प्रत्येक मामले का अवधारण अवश्य उसके स्वयं के तथ्यों के आधार पर उन परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए, जिनमें मृत्युकालिक कथन किया गया था ; (3) एक साधारण प्रतिपादना रूप में यह अधिकथित नहीं किया जा सकता है कि मृत्युकालिक कथन अन्य साक्ष्य की बजाय एक कमजोर प्रकार का साक्ष्य होता है ; (4) मृत्युकालिक कथन का महत्व किसी अन्य साक्ष्य जैसा होता है और उसकी परख परिवर्ती परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए और साक्ष्य के विचार-मनन को शासित करने वाले सिद्धांतों के प्रतिनिर्देश करके की जानी चाहिए ; (5) ऐसा मृत्युकालिक कथन, जो किसी सक्षम मजिस्ट्रेट द्वारा उचित रीति में, अर्थात् प्रश्नों और उत्तरों के रूप में और यथासाध्य, कथन करने वाले के शब्दों में अभिलिखित किया गया है, तो उसका महत्व मौखिक परिसाक्ष्य पर निर्भर करने वाले मृत्युकालिक कथन की अपेक्षा अधिक होता है, जो मानवीय यादाश्त और मानवीय चरित्र की सभी खामियों से ग्रस्त हो सकता है ; और (6) किसी मृत्युकालिक कथन की विश्वसनीयता की जांच करने के लिए, न्यायालय को मर रहे व्यक्ति के पास अवलोकन करने का अवसर होने, उदाहरण के लिए, क्या वहां पर्याप्त प्रकाश था यदि अपराध रात्रि में किया गया था ; क्या व्यक्ति का कथित तथ्यों को स्मरण रखने का सामर्थ्य उसके नियंत्रण के परे परिस्थितियों द्वारा उस समय क्षीण हो गया था, जब वह कथन कर रहा था ; उसका कथन आद्योपान्त समनुरूप रहा था यदि उसे मृत्युकालिक कथन करने के इसके शासकीय अभिलेख के अतिरिक्त कई अवसर मिले थे ; और कथन शीघ्रतम अवसर पर किया गया था तथा हितबद्ध

पक्षकारों द्वारा सिखाए-पढ़ाए जाने का परिणाम नहीं था, जैसी परिस्थितियों को ध्यान में रखना चाहिए ।"

उक्त मामले के सुसंगत तथ्य यह हैं कि उस मामले में मृतक ने दो घंटे के अंतराल के भीतर क्रमश: तीन मृत्युकालिक कथन किए थे, जो कतिपय सीमा तक एक-दूसरे के विरोधाभासी थे । तथापि, एक पहलू, जो सामान्य रहा था और मृतक द्वारा सभी तीनों मृत्युकालिक कथनों में वर्णित किया गया था, यह था कि उस पर दो व्यक्तियों अर्थात् कुशल राव और तुकाराम ने तलवार और भाले से आक्रमण किया था । इस न्यायालय ने सभी मृत्युकालिक कथनों में सामान्य बात का अवलंब लेते हुए, जो इस चिकित्सा साक्ष्य के अनुरूप थी, जिसमें यह उल्लेख किया गया था कि शरीर के विभिन्न भागों पर छेदन और विछिन्न घाव थे, यह अभिनिर्धारित किया कि अभियुक्तों, जिनको सभी तीनों मृत्युकालिक कथनों में नामित किया गया था, को दोषसिद्ध करने के लिए उक्त कथनों का अवलंब लिया जा सकता है ।

उक्त तथ्यों को प्रस्तुत मामले के तथ्यों से सहबद्ध करते हुए, हमने यह पाया है कि यद्यपि मृतका द्वारा दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किए गए उसके कथन में अभियुक्त को विनिर्दिष्ट रूप से उस व्यक्ति के रूप में नामित नहीं किया गया था, जिसने मृतका को आग लगाई थी, तो भी उसके मृत्युकालिक कथन में उसे नामित किया गया था । यहां तक कि दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 161 के अधीन अभिलिखित किए गए कथन में भी मृतका ने यह कहा था कि उसके ससुर ने उस पर एक छड़ी से उसे जान से मारने के आशय से आक्रमण किया था और इसके परिणामस्वरूप उसने स्वयं को एक कमरे में बंद कर लिया था और स्वयं को आग लगा ली थी । अत: हम यह पाते हैं कि मृतका के कथनों में एक सामान्य बात यह है कि उस पर इस अपील में अभियुक्त-प्रत्यर्थी द्वारा आक्रमण किया गया था । इसके अतिरिक्त, हम यह भी पाते हैं कि मृतका द्वारा अपने मृत्युकालिक कथन में किए गए कथन चिकित्सा साक्ष्य के अनुरूप हैं, जिससे यह प्रकट होता है कि छाती और उदर के दोनों तरफ के भागों और पीठ को छोड़कर उसके शरीर के सभी भागों पर दाह-क्षतियां थीं ।

दाह-क्षतियां ऐसे भागों पर हैं जो तभी पहुंच सकती थीं, जब मृतका से भिन्न किसी व्यक्ति ने मिट्टी का तेल छिड़का हो और आग लगा दी हो । जैसा कि पहले उल्लेख किया गया है, यदि मृतका ने स्वयं आग लगाई होती, तो उसकी छाती जल गई होती । पूर्वोक्त चर्चा और **कुशल राव** (उपर्युक्त) वाले मामले में के विनिश्चय को ध्यान में रखते हुए हमारा यह निष्कर्ष है कि चिकित्सा साक्ष्य मृत्युकालिक कथन के अनुरूप है और यह न्यायालय मृत्युकालिक कथनों का अवलंब ले सकता है ।

विचारण न्यायालय ने मृतक के मृत्युकालिक कथन के महत्व और उस अवलंब के बारे में ठीक ही मत व्यक्त किया गया था, जो अवलंब लिया जाना चाहिए । उच्च न्यायालय के लिए मृतका के मृत्युकालिक कथन की उपेक्षा करने का कोई कारण नहीं था । यह पाया गया है कि मृतका द्वारा मृत्युकालिक कथन उप मंडल मजिस्ट्रेट (एसडीएम) बाल किशन अग्रवाल को किया गया था और उसकी भी विचारण न्यायालय के समक्ष अभियोजन साक्षी (अभि. सा. 6) के रूप में परीक्षा की गई थी । उसके कथन से यह प्रकट होता है कि मृतका कथन करने के समय पूरी तरह होश में थी और उस अधिकारी द्वारा किए गए प्रश्नों को समझने में समर्थ थी, जिसके समक्ष कथन किया गया था । इस मृत्युकालिक कथन का साक्ष्यिक महत्व इस तथ्य से भी बढ़ जाता है कि इसके साथ उस चिकित्सक का प्रमाण पत्र संलग्न था, जो मृतका का उसकी मृत्यु से पूर्व उपचार कर रहा था, जिसमें यह उल्लेख किया गया था कि मृतका कथन करते समय पूरी तरह होश में रही थी । विचारण न्यायालय ने मृतका द्वारा ऐसा कथन करने के समय उसकी चिकित्सीय हालत के बारे में चिकित्सक द्वारा किए गए कथन पर सम्यक् रूप से विचार करते हुए मृत्युकालिक कथन का ठीक ही अवलंब लिया था । विचारण न्यायालय ने ठीक ही यह उल्लेख किया था कि उप मंडल मजिस्ट्रेट और चिकित्सक के कथनों से, जो विचारण में स्वतंत्र साक्षी थे, अभियोजन के पक्षकथन को प्रबल हुआ था क्योंकि वे विद्वेष से उत्प्रेरित नहीं हो सकते थे ।

11. अत: उप मंडल मजिस्ट्रेट/मजिस्ट्रेट द्वारा तारीख 22 दिसंबर, 2011 को अभिलिखित किए गए मृत्युकालिक कथन पर विचार करते हुए

अभियुक्तों को उस अपराध के लिए दोषसिद्ध किया जा सकता है, जिसके लिए उनका विचारण किया गया था । अत: हमारा यह मत है कि उच्च न्यायालय ने अभियुक्तों को दोषमुक्त करके गंभीर गलती की है । उच्च न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषमुक्त करते हुए पारित किया गया आक्षेपित निर्णय और आदेश असंधार्य है और यह अभिखंडित और अपास्त किए जाने योग्य है ।

12. उपरोक्त को दृष्टिगत करते हुए और ऊपर उल्लिखित कारणों से यह अपील मंजूर की जाती है । अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषमुक्त करते हुए पारित किए गए आक्षेपित निर्णय और आदेश को तद्द्वारा अभिखंडित और अपास्त किया जाता है । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध करते हुए पारित किए गए निर्णय और आदेश को तद्द्वारा प्रत्यावर्तित किया जाता है । प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 - मूल अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषी अभिनिर्धारित किया जाता है और आजीवन कारावास भुगतने तथा प्रत्येक पर 10,000/- रुपये के जुर्माने का दंडादेश दिया जाता है, जैसा कि विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अधिनिर्णीत किया गया है । अभियुक्त आजीवन कारावास के दंडादेश को भुगतने के लिए तुरंत संबंधित न्यायालय या जेल प्राधिकारी के समक्ष अभ्यर्पण करेंगे । यह अपील पूर्वोक्त सीमा तक मंजूर की जाती है ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

[2022] 1 उम. नि. प. 336

ओंकार सिंह

बनाम

जयप्रकाश नारायण सिंह और एक अन्य

[2022 की दांडिक अपील सं. 84]

9 फरवरी, 2022

न्यायमूर्ति एम. आर. शाह और न्यायमूर्ति संजीव खन्ना

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302/34 – हत्या – सामान्य आशय – प्रत्यर्थी सं. 1 अभियुक्त सं. 2 और उसके पुत्र द्वारा रात्रि में मृतक के ट्यूबवेल पर जाकर उसके उकसाने पर पुत्र द्वारा गोली मारकर मृतक की हत्या किया जाना – सामान्य आशय के आधार पर दोनों अभियुक्तों को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – अपील में उच्च न्यायालय द्वारा अपीलार्थी की घटनास्थल पर मौजूदगी पर संदेह करते हुए उसे दोषमुक्त किया जाना – संधार्यता – जहां पक्षकारों के बीच भूमि विवाद को लेकर पुरानी दुश्मनी हो और घटना के प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों द्वारा आरंभ से ही पिता और पुत्र, दोनों को अभियुक्तों के रूप में नामित किया हो और प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों द्वारा अभियुक्त सं. 2 प्रत्यर्थी सं. 1 (पिता) की उकसाने की विनिर्दिष्ट भूमिका का उल्लेख किया गया हो, सामान्य आशय और हेतु को सिद्ध और साबित किया गया हो, वहां अपील न्यायालय द्वारा अभियुक्त (सं. 2) की घटनास्थल पर मौजूदगी पर संदेह करते हुए की गई दोषमुक्ति को कायम नहीं रखा जा सकता है और विचारण न्यायालय के दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय को प्रत्यावर्तित करना उचित होगा ।

इस अपील के तथ्य इस प्रकार हैं कि ओंकार सिंह पुत्र पारसनाथ सिंह द्वारा पुलिस थाने में एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट यह कथन करते हुए दर्ज की गई थी कि उसके परिवार के सदस्यों की उदयभान सिंह और उसके पिता जयप्रकाश नारायण सिंह **उर्फ** लाला (मूल अभियुक्त सं. 1 और 2) के बीच चल रही दुश्मनी के कारण उसके पिता की हत्या कर दी गई है । अभिकथन के अनुसार, इत्तिलाकर्ता अपने ताऊ और चचेरे भाई

के साथ अपने ट्यूबवेल पर सोने के लिए गया था, जहां उसका पिता पारसनाथ पहले से लेटा हुआ था । वह और उसका चचेरा भाई इन्द्रदेव सिंह एक चारपाई पर सोए हुए थे, जबकि उसका ताऊ एक अन्य चारपाई पर सोया हुआ था । वहां एक लालटेन जल रही थी, जो एक लाठी पर टंगी हुई थी । रात्रि में 2.30-3.00 बजे के बीच अभियुक्त उदयभान सिंह उसकी चारपाई के निकट आया और चादर को खींचा, जिस पर वह और उसका चचेरा भाई जाग गए और उसका ताऊ भी जाग गया । उस क्षण जयप्रकाश नारायण सिंह **उर्फ** लाला (अभियुक्त 2) ने ललकार दी और कहा कि पारस यहां लेटा हुआ है, जल्दी आओ और उसे गोली मार दो, जिस पर उदयभान सिंह (अभियुक्त-1) उसके पिता पारसनाथ की चारपाई के निकट गया और देशी पिस्तौल से बिल्कुल निकट से उसकी छाती पर गोली मार दी और जब इत्तिलाकर्ता और साक्षियों ने शोर मचाया, तो उदयभान सिंह ने पुन: अपनी देशी पिस्तौल में गोली भरी और उन्हें धमकी दी, जिसके कारण वे चुप हो गए । उसके पश्चात् दोनों अभियुक्त भाग गए । अन्वेषण के दौरान, अन्वेषक अधिकारी ने प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों सहित संबंधित साक्षियों के कथन अभिलिखित किए और सुसंगत साक्ष्य भी एकत्रित किए । अन्वेषण पूर्ण होने पर अन्वेषक अधिकारी ने दोनों अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराधों के लिए आरोप पत्र फाइल किया । विद्वान् सेशन न्यायालय द्वारा उन दोनों का क्रमश: भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए विचारण किया गया । विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर के संपूर्ण साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् और प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों पर विश्वास करते हुए अभियुक्त 1 - उदयभान सिंह को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए और अभियुक्त 2 - जयप्रकाश नारायण सिंह **उर्फ** लाला को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया और उन्हें आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को दोषसिद्ध करते हुए पारित किए गए दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर अभियुक्तों ने उच्च

न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । जहां तक अभियुक्त 1 - उदयभान का संबंध है, उच्च न्यायालय ने यद्यपि आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों - अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 4 को विश्वसनीय माना और विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त 1 - उदयभान को दोषसिद्ध करते हुए पारित किए गए दोषसिद्धि के निर्णय और आदेश की पुष्टि की, किंतु अभियुक्त 2 - जयप्रकाश नारायण सिंह **उर्फ** लाला को मुख्यत: इस आधार पर दोषमुक्त कर दिया कि तीन अभियोजन साक्षियों ने उसकी भूमिका केवल उकसाने की बताई थी और उस पर कोई स्पष्ट कृत्य अधिरोपित नहीं किया गया है इसलिए हो सकता है साक्षियों द्वारा पक्षकारों के बीच संपत्ति विवाद के कारण उसकी भूमिका को बढ़ा-चढ़ा कर बताया गया हो और यह देखने के लिए मिथ्या फंसाया गया हो कि दोनों अभियुक्त - पिता और पुत्र सलाखों के पीछे चले जाएं । उच्च न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थी सं. 1 - मूल अभियुक्त सं. 2 को दोषमुक्त करते हुए पारित किए गए आक्षेपित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर मूल इत्तिलाकर्ता द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – मामले में आरंभ से ही प्रत्यर्थी सं. 1 के नाम को प्रकटित किया गया था । प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त सं. 2 प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में नामित था । घटना के तीन प्रत्यक्षदर्शी साक्षी अर्थात् अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 4 हैं तथा सभी अभियोजन साक्षियों ने प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त सं. 2 को नामित किया था और उन सभी ने यह कथन किया था कि दोनों अभियुक्त ट्यूबवेल पर आए थे जहां मृतक सो रहा था और उस समय पर मृतक को अलग चारपाई पर सोता हुआ पाकर प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त सं. 2 ने अपने पुत्र को मृतक की हत्या करने के लिए उकसाया और उसके पुत्र - अभियुक्त सं. 1 ने अग्न्यायुध से मृतक की हत्या कर दी । सभी तीनों अभियोजन साक्षी एक मत हैं और अभियोजन के पक्षकथन का पूरी तरह से समर्थन किया है । यहां तक कि उच्च न्यायालय ने भी विनिर्दिष्ट रूप से यह मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया था कि सभी तीनों अभियोजन साक्षी विश्वसनीय और भरोसेमंद हैं तथा उन पर संदेह करने का कोई कारण

नहीं है । अत: यहां तक कि जब एक बार उच्च न्यायालय ने भी सभी तीनों अभियोजन साक्षियों - अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 4 को भरोसेमंद और विश्वसनीय पाया था तथा वास्तव में अभियुक्त सं. 1 की भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्धि की पुष्टि की थी, तो उच्च न्यायालय को उसके पश्चात् इस अपील में प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त सं. 2 की मौजूदगी पर संदेह नहीं करना चाहिए था । यहां तक कि जब एक बार उच्च न्यायालय ने सभी तीनों प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों का अवलंब लेते हुए अभियुक्त सं. 1 की दोषसिद्धि की पुष्टि की थी, तो उच्च न्यायालय को तीनों प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों का अवलंब लेते हुए प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त सं. 2 की दोषसिद्धि की भी पुष्टि की जानी चाहिए थी । उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए तर्काधारों से यह प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त सं. 2 को केवल इस आधार पर दोषमुक्त किया था कि सभी तीनों प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों ने उसकी भूमिका उकसाने की बताई थी और उसके द्वारा कोई स्पष्ट कृत्य करने के बारे में नहीं बताया गया था तथा ऐसा उसकी भूमिका को बढ़ा-चढ़ाकर बताने के कारण हो सकता है जिससे उसे मिथ्या रूप से फंसाया जा सके और यह देखा जा सके कि पिता और पुत्र सलाखों के पीछे चले जाएं । तथापि, यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि अभियुक्त - पिता और पुत्र दोनों एक-साथ उस स्थल/ट्यूबवेल पर गए थे, जहां मृतक सो रहा था । यहां तक कि उच्च न्यायालय के अनुसार भी हेतु को सिद्ध और साबित किया गया था । उच्च न्यायालय ने यह भी मत व्यक्त किया था कि भूमि विवाद के कारण पक्षकारों के बीच दुश्मनी थी । इसलिए उच्च न्यायालय को इस बात का मूल्यांकन करना चाहिए था कि प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त सं. 2 को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 की सहायता से ठीक ही दोषसिद्ध किया गया था क्योंकि वह मृतक की हत्या करने के सामान्य आशय से अपने पुत्र के साथ गया था और मृतक को अलग चारपाई पर सोता हुआ पाए जाने पर अपने पुत्र को उसकी हत्या करने के लिए उकसाया और उसके पश्चात् उसके पुत्र ने अग्न्यायुध से मृतक की हत्या कर दी । इसलिए जब एक बार उसकी मौजूदगी को सिद्ध और साबित किया गया है और उसकी उकसाने की विनिर्दिष्ट भूमिका बताई गई थी, तो उच्च

न्यायालय को प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त सं. 2 की भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्धि की पुष्टि करनी चाहिए थी । यह भी उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि उच्च न्यायालय ने अभियुक्त सं. 1 की भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्धि को कायम रखा था/पुष्टि की थी । इसलिए जब एक बार अभियुक्त सं. 1 की भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्धि को कायम रखा गया था/पुष्टि की गई थी, तो उच्च न्यायालय को अभियुक्त सं. 2 की दोषसिद्धि को कायम रखना चाहिए था/पुष्टि की जानी चाहिए थी, जिसे भी भारतीय दंड संहित की धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आरोपित किया गया था । दोनों अभियुक्त सामान्य आशय से अर्ध-रात्रि में मृतक के स्थान पर गए थे और जैसा कि इसमें ऊपर मत व्यक्त किया गया है, हेतु को सिद्ध और साबित किया गया है, इसलिए उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त सं. 2 को दोषमुक्त करके गंभीर गलती कारित की है । उच्च न्यायालय द्वारा अभिलिखित किया गया निष्कर्ष अभिलेख पर के साक्ष्य के एकदम विपरीत है । आक्षेपित निर्णय और आदेश विधि और तथ्यों, दोनों के आधार पर असंधार्य है । (पैरा 12, 12.1 और 12.2)

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2022 की दांडिक अपील सं. 84.

1984 की दांडिक अपील सं. 304 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 15 मार्च, 2019 को पारित निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री डी. पी. सिंह यादव

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री गर्वेश काबरा और आर. एम. सिन्हा

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति एम. आर. शाह ने दिया ।

न्या. शाह – 1983 की दांडिक अपील सं. 304 में इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 15 मार्च, 2019 को पारित किए गए उस आक्षेपित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर मृतक के

पुत्र ने यह अपील फाइल की है, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने इस अपील में प्रत्यर्थी सं. 1 - मूल अभियुक्त सं. 2 द्वारा फाइल की गई उक्त अपील मंजूर की थी और उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषमुक्त कर दिया था ।

2. अभियोजन के पक्षकथन के अनुसार, ओंकार सिंह पुत्र पारसनाथ सिंह द्वारा पुलिस थाना कारंदा, जिला गाजीपुर में एक प्रथम इत्तिला रिपोर्ट यह कथन करते हुए दर्ज की गई थी कि उसके परिवार के सदस्यों की उदयभान सिंह और उसके पिता जयप्रकाश नारायण सिंह **उर्फ** लाला (मूल अभियुक्त सं. 1 और 2) के बीच चल रही दुश्मनी के कारण उसके पिता की हत्या कर दी गई । अभिकथन के अनुसार, तारीख 21 अप्रैल, 1982 को कैलाशु विश्वकर्मा नामक व्यक्ति, जो उसका पड़ोसी था, की पुत्री का विवाह था, जहां वह अपने ताऊ विक्रम सिंह और अपने चचेरे भाई इन्द्रदेव सिंह के साथ गया था । रात्रि में लगभग 12.00 बजे भोजन करने के पश्चात् वह अपने ताऊ और चचेरे भाई के साथ अपने ट्यूबवेल पर सोने के लिए गया था, जहां उसका पिता पारसनाथ पहले से लेटा हुआ था । वह और उसका चचेरा भाई इन्द्रदेव सिंह एक चारपाई पर सोए हुए थे, जबकि उसका ताऊ एक अन्य चारपाई पर सोया हुआ था । वहां एक लालटेन जल रही थी, जो एक लाठी पर टंगी हुई थी । रात्रि में 2.30-3.00 बजे के बीच अभियुक्त उदयभान सिंह उसकी चारपाई के निकट आया और चादर को खींचा, जिस पर वह और उसका चचेरा भाई जाग गए और उसका ताऊ भी जाग गया । उस क्षण जयप्रकाश नारायण सिंह **उर्फ** लाला (अभियुक्त 2) ने प्रबोधन किया और कहा कि पारस यहां लेटा हुआ है, जल्दी आओ और उसे गोली मार दो, जिस पर उदयभान सिंह (अभियुक्त 1) उसके पिता पारसनाथ की चारपाई के निकट गया और देशी पिस्तौल से बिल्कुल निकट से उसकी छाती पर गोली मार दी और जब इत्तिलाकर्ता और साक्षियों ने शोर मचाया, तो उदयभान सिंह ने पुन: अपनी देशी पिस्तौल में गोली भरी और उन्हें धमकी दी, जिसके कारण वे चुप हो गए । उसके पश्चात् दोनों अभियुक्त उत्तर दिशा की ओर भाग गए । अन्वेषण के दौरान, अन्वेषक अधिकारी ने प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों सहित संबंधित साक्षियों के कथन अभिलिखित किए

और सुसंगत साक्ष्य भी एकत्रित किए । अन्वेषण पूर्ण होने पर अन्वेषक अधिकारी ने दोनों अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराधों के लिए आरोप पत्र फाइल किया । चूंकि मामला अनन्य रूप से विद्वान् सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय था, इसलिए मामले को विचारण न्यायालय के सुपुर्द किया गया । अभियुक्तों ने दोषी न होने का अभिवाक् किया और इसलिए विद्वान् सेशन न्यायालय द्वारा उन दोनों का क्रमश: भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए विचारण किया गया ।

3. अभियोजन पक्ष ने अभियुक्तों की दोषिता को सिद्ध करने के लिए अभि. सा. 1 ओंकार सिंह - इत्तिलाकर्ता और अभि. सा. 2 इन्द्रदेव सिंह और अभि. सा. 4 विक्रम सिंह (सभी प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों) तथा अभि. सा. 3 डा. पी. सी. श्रीवास्तव, जिसने मृतक की मरणोत्तर परीक्षा की थी और अभि. सा. 5 उप निरीक्षक काम्ता सिंह की परीक्षा की । अभियोजन पक्ष की ओर से साक्ष्य का समापन होने पर दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभियुक्तों के भी कथन अभिलिखित किए गए । उसके पश्चात् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर के संपूर्ण साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् और अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 4 (प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों) पर विश्वास करते हुए अभियुक्त 1 - उदयभान सिंह को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए और अभियुक्त 2 - जयप्रकाश नारायण सिंह **उर्फ** लाला को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध किया और उन्हें आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया ।

4. विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों को क्रमश: भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध करते हुए पारित किए गए दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर अभियुक्तों ने उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की । जहां तक अभियुक्त सं. 1 - उदयभान का संबंध है, उच्च न्यायालय ने यद्यपि आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों - अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और

अभि. सा. 4 को विश्वसनीय माना और विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्त 1 - उदयभान को दोषसिद्ध करते हुए पारित किए गए दोषसिद्धि के निर्णय और आदेश की पुष्टि की, किंतु अभियुक्त 2 - जयप्रकाश नारायण सिंह **उर्फ** लाला को मुख्यत: इस आधार पर दोषमुक्त कर दिया कि तीन अभियोजन साक्षियों ने उसकी भूमिका केवल उकसाने की बताई थी और उस पर कोई स्पष्ट कृत्य अधिरोपित नहीं किया गया है इसलिए हो सकता है साक्षियों द्वारा पक्षकारों के बीच संपत्ति विवाद के कारण उसकी भूमिका को बढ़ा-चढ़ा कर बताया गया हो और यह देखने के लिए मिथ्या फंसाया गया हो कि दोनों अभियुक्त - पिता और पुत्र सलाखों के पीछे चले जाएं ।

5. उच्च न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थी सं. 1 - मूल अभियुक्त सं. 2 को दोषमुक्त करते हुए पारित किए गए आक्षेपित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर मूल इत्तिलाकर्ता ने यह अपील फाइल की है ।

6. अपीलार्थी की ओर हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री डी. पी. सिंह यादव ने यह दलील दी कि मामले के तथ्यों और परिस्थितियों में उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थी सं. 1 - मूल अभियुक्त सं. 2 को दोषमुक्त करते हुए गंभीर गलती कारित की थी ।

6.1 अपीलार्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा जोरदार रूप से दलील दी गई कि प्रत्यर्थी सं. 1 प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में नामित था । यह दलील दी गई कि सभी तीनों प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों - अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 4 ने प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त को नामित किया था, जो ट्यूबवेल पर गए थे, जहां मृतक सो रहा था और प्रत्यर्थी सं. 1 मृतक की हत्या करने के सामान्य आशय से अपने पुत्र - अभियुक्त 1 के साथ गया था और मृतक को एक अलग चारपाई पर पाए जाने पर अपने पुत्र को उसे मार देने के लिए उकसाया और उसके पश्चात् अभियुक्त सं. 1 ने अग्न्यायुध से मृतक की हत्या कर दी । यह दलील दी गई कि अत: विद्वान् विचारण न्यायालय ने प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 की सहायता से ठीक ही दोषसिद्ध किया था ।

6.2 यह भी दलील दी गई कि यहां तक कि उच्च न्यायालय द्वारा

अभिलिखित किए गए निष्कर्ष के अनुसार भी अभियोजन पक्ष द्वारा हेतु को सिद्ध और साबित किया गया था । यह दलील दी गई कि दुर्भाग्यवश उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त को इस एकमात्र आधार पर दोषमुक्त कर दिया था कि प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त सं. 2 पर आरोपित स्पष्ट कृत्य केवल उकसाने का है और इसलिए उसकी अंतर्ग्रस्तता संदेहास्पद प्रतीत होती है ।

6.3 यह दलील दी गई कि उक्त निष्कर्ष/मताभिव्यक्ति अनुमान और अटकलबाजी पर आधारित है तथा अभिलेख पर के साक्ष्य के एकदम विपरीत है । यह दलील दी गई कि अभियुक्त की मौजूदगी को अभियोजन पक्ष द्वारा अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 4, जो प्रत्यक्षदर्शी साक्षी हैं, की परीक्षा करके सिद्ध किया गया है और उनके साक्ष्य को उच्च न्यायालय द्वारा विश्वसनीय माना गया है । यह दलील दी गई कि अत: अभियुक्त - प्रत्यर्थी सं. 1 की घटनास्थल पर मौजूदगी पर संदेह करने का कोई कारण नहीं है ।

7. उपरोक्त दलीलें देने के पश्चात् इस अपील को मंजूर करने का अनुरोध किया गया ।

8. राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री गर्वेश काबरा ने अपीलार्थी का समर्थन किया और यह दलील दी कि उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त सं. 2 को दोषमुक्त करके गलती की है ।

9. प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त सं. 2 की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल श्री आर. एन. सिन्हा द्वारा इस अपील का विरोध किया गया । प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त सं. 2 की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेल द्वारा यह दलील दी गई कि उच्च न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषमुक्त करते हुए तर्कपूर्ण कारण दिए गए हैं और इसलिए इस न्यायालय द्वारा भारत के संविधान के अनुच्छेद 136 के अधीन प्रदत्त शक्ति का प्रयोग करते हुए हस्तक्षेप किए जाने की आवश्यकता नहीं है ।

9.1 यह भी दलील दी गई कि जैसा कि उच्च न्यायालय द्वारा

ठीक ही मत व्यक्त किया गया है, सभी तीनों अभियोजन साक्षियों ने अभियुक्त की भूमिका केवल उकसाने की बताई थी और उसके द्वारा किए गए किसी स्पष्ट कृत्य को नहीं बतलाया गया है तथा अभियोजन साक्षियों के अनुसार भी और यहां तक कि अभियोजन पक्ष के अनुसार भी अग्न्यायुध का प्रयोग अभियुक्त सं. 1 द्वारा किया गया था और प्रत्यर्थी सं. 1 - मूल अभियुक्त सं. 2 के विरुद्ध एकमात्र अभिकथन उकसाने का था । उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त को भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए ठीक ही दोषमुक्त किया था ।

10. उपरोक्त दलीलें देने के पश्चात् इस अपील को खारिज करने का अनुरोध किया गया ।

11. हमने संबंधित पक्षकारों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेलों को विस्तारपूर्वक सुना ।

12. प्रारंभ में यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि प्रस्तुत मामले में आरंभ से ही प्रत्यर्थी सं. 1 के नाम को प्रकटित किया गया था । प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त सं. 2 प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में नामित था । घटना के तीन प्रत्यक्षदर्शी साक्षी अर्थात् अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 4 हैं तथा सभी अभियोजन साक्षियों ने प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त सं. 2 को नामित किया था और उन सभी ने यह कथन किया था कि दोनों अभियुक्त ट्यूबवेल पर आए थे जहां मृतक सो रहा था और उस समय पर मृतक को अलग चारपाई पर सोता हुआ पाकर प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त सं. 2 ने अपने पुत्र को मृतक की हत्या करने के लिए उकसाया और उसके पुत्र - अभियुक्त सं. 1 ने अग्न्यायुध से मृतक की हत्या कर दी । सभी तीनों अभियोजन साक्षी एक मत हैं और अभियोजन के पक्षकथन का पूरी तरह से समर्थन किया है । यहां तक कि उच्च न्यायालय ने भी विनिर्दिष्ट रूप से यह मत व्यक्त और अभिनिर्धारित किया था कि सभी तीनों अभियोजन साक्षी विश्वसनीय और भरोसेमंद हैं तथा उन पर संदेह करने का कोई कारण नहीं है । अत: यहां तक कि जब एक बार उच्च न्यायालय ने भी सभी तीनों अभियोजन साक्षियों - अभि. सा. 1, अभि. सा. 2 और अभि. सा. 4 को भरोसेमंद और

विश्वसनीय पाया था तथा वास्तव में अभियुक्त सं. 1 की भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्धि की पुष्टि की थी, तो उच्च न्यायालय को उसके पश्चात् इस अपील में प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त सं. 2 की मौजूदगी पर संदेह नहीं करना चाहिए था । यहां तक कि जब एक बार उच्च न्यायालय ने सभी तीनों प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों का अवलंब लेते हुए अभियुक्त सं. 1 की दोषसिद्धि की पुष्टि की थी, तो उच्च न्यायालय को तीनों प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों का अवलंब लेते हुए प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त सं. 2 की दोषसिद्धि की भी पुष्टि की जानी चाहिए थी ।

12.1 उच्च न्यायालय द्वारा दिए गए तर्काधारों से यह प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त सं. 2 को केवल इस आधार पर दोषमुक्त किया था कि सभी तीनों प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों ने उसकी भूमिका उकसाने की बताई थी और उसके द्वारा कोई स्पष्ट कृत्य करने के बारे में नहीं बताया गया था तथा ऐसा उसकी भूमिका को बढ़ा-चढ़ाकर बताने के कारण हो सकता है जिससे उसे मिथ्या रूप से फंसाया जा सके और यह देखा जा सके कि पिता और पुत्र सलाखों के पीछे चले जाएं । तथापि, यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि अभियुक्त - पिता और पुत्र दोनों एक-साथ उस स्थल/ट्यूबवेल पर गए थे, जहां मृतक सो रहा था । यहां तक कि उच्च न्यायालय के अनुसार भी हेतु को सिद्ध और साबित किया गया था । उच्च न्यायालय ने यह भी मत व्यक्त किया था कि भूमि विवाद के कारण पक्षकारों के बीच दुश्मनी थी । इसलिए उच्च न्यायालय को इस बात का मूल्यांकन करना चाहिए था कि प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त सं. 2 को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 की सहायता से ठीक ही दोषसिद्ध किया गया था क्योंकि वह मृतक की हत्या करने के सामान्य आशय से अपने पुत्र के साथ गया था और मृतक को अलग चारपाई पर सोता हुआ पाए जाने पर अपने पुत्र को उसकी हत्या करने के लिए उकसाया और उसके पश्चात् उसके पुत्र ने अग्न्यायुध से मृतक की हत्या कर दी । इसलिए जब एक बार उसकी मौजूदगी को सिद्ध और साबित किया गया है और उसकी उकसाने की विनिर्दिष्ट भूमिका बताई गई थी, तो उच्च न्यायालय को प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त सं. 2 की भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन

दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्धि की पुष्टि करनी चाहिए थी ।

12.2 यह भी उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि उच्च न्यायालय ने अभियुक्त सं. 1 की भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्धि को कायम रखा था/पुष्टि की थी । इसलिए जब एक बार अभियुक्त सं. 1 की भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्धि को कायम रखा गया था/पुष्टि की गई थी, तो उच्च न्यायालय को अभियुक्त सं. 2 की दोषसिद्धि को कायम रखना चाहिए था/पुष्टि की जानी चाहिए थी, जिसे भी भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए आरोपित किया गया था । दोनों अभियुक्त सामान्य आशय से अर्ध-रात्रि में मृतक के स्थान पर गए थे और जैसा कि इसमें ऊपर मत व्यक्त किया गया है, हेतु को सिद्ध और साबित किया गया है, इसलिए उच्च न्यायालय ने प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त सं. 2 को दोषमुक्त करके गंभीर गलती कारित की है । उच्च न्यायालय द्वारा अभिलिखित किया गया निष्कर्ष अभिलेख पर के साक्ष्य के एकदम विपरीत है । आक्षेपित निर्णय और आदेश विधि और तथ्यों, दोनों के आधार पर असंधार्य है ।

13. उपरोक्त को दृष्टिगत करते हुए और ऊपर उल्लिखित कारणों से यह अपील सफल होती है । उच्च न्यायालय द्वारा प्रत्यर्थी सं. 1 - अभियुक्त सं. 2 जयप्रकाश नारायण सिंह को दोषमुक्त करते हुए पारित किए गए आक्षेपित निर्णय और आदेश को तद्द्वारा अभिखंडित और अपास्त किया जाता है तथा विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा उसे भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 के अधीन दंडनीय अपराध के लिए दोषसिद्ध करते हुए और उसे आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश देते हुए पारित किए गए निर्णय और आदेश को तद्द्वारा प्रत्यावर्तित किया जाता है । अब प्रत्यर्थी सं. 1 - मूल अभियुक्त सं. 2 आजीवन कारावास भुगतने के लिए चार सप्ताह की अवधि के भीतर अभ्यर्पण करेगा ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

[2022] 1 उम. नि. प. 348

मनोज उर्फ **मोनू** उर्फ **विशाल चौधरी**

बनाम

हरियाणा राज्य और एक अन्य

[2022 की दांडिक अपील सं. 207]

15 फरवरी, 2022

न्यायमूर्ति हेमंत गुप्ता और न्यायमूर्ति वी. रामसुब्रमण्यन

किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2000 (2000 का 56) – धारा 7क [सपठित किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) नियम, 2007 का नियम 12(3)(ख)] – विधि का उल्लंघन करने वाला किशोर – विद्यालय छोड़ने के प्रमाणपत्र के आधार पर किशोरावस्था का दावा – कोई मैट्रीकुलेशन या समतुल्य प्रमाणपत्र प्रस्तुत न किया जाना – अभियुक्त-किशोर की आयु का अवधारण – जहां अभियुक्त द्वारा किशोरावस्था का दावा सद्भावी और सत्य रीति में न किया गया हो और ऐसे दस्तावेजों का अवलंब लिया गया हो जो विश्वसनीय और भरोसेमंद न हो तथा संदिग्ध प्रकृति के हों, वहां ऐसे अभियुक्त को किशोर समझते हुए किशोरावस्था का फायदा नहीं दिया जा सकता है ।

इस अपील के सुसंगत तथ्य ये हैं कि अपीलार्थी को तारीख 18 जनवरी, 2011 को घटी एक घटना के संबंध में अभियुक्त के रूप में नामित किया गया था, जिसमें अपीलार्थी के विरुद्ध यह अभिकथन था कि उसने ताक में बैठकर एक कार को रुकवाया और कार में बैठे व्यक्तियों से 22 लाख रुपए छीन लिए । शिकायतकर्ता कार में बैठा एक व्यक्ति था, जबकि कार में बैठा एक अन्य व्यक्ति-भीम सिंह की उस पर चलाई गई गोली के कारण मृत्यु हो गई थी । विचारण के लंबित रहने के दौरान अपीलार्थी ने तारीख 7 अक्तूबर, 2014 को यह दावा करते हुए एक आवेदन दिया कि वह घटना की तारीख को एक किशोर था और उसने अपने विद्यालय के अभिलेख का अवलंब लिया जिसमें उसकी

जन्म तारीख 13 मई, 1993 प्रकट हो रही थी । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश ने अपीलार्थी के अभिवाक् को स्वीकार किया और उसे किशोर घोषित किया । इस आदेश को एक पुनरीक्षण आवेदन द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई । इस पुनरीक्षण को तारीख 4 मई, 2016 को मंजूर किया गया और मामले को नए सिरे से न्यायनिर्णयन करने के लिए विचारण न्यायालय को वापस प्रेषित कर दिया गया । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश ने प्रतिप्रेषण के पश्चात् अपीलार्थी की आयु अस्थि-विकास जांच की रिपोर्ट के अनुसार घटना की तारीख को 16 वर्ष 8 माह और 5 दिन पाई । तथापि, उच्च न्यायालय द्वारा विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश के आदेश को अपास्त कर दिया गया । उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील खारिज करते हुए,

अभिनिर्धारित – अपीलार्थी ने किशोर होने के अपने अभिवाक् के समर्थन में तीन दस्तावेजों यथा- जन्म प्रमाणपत्र, विद्यालय छोड़ने के प्रमाणपत्र और अस्थि-विकास जांच रिपोर्ट का अवलंब लिया था, जबकि राज्य ने परिवार रजिस्टर नियमों द्वारा विहित परिवार रजिस्टर का अवलंब लिया था । पहले, यह न्यायालय उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा जारी किए गए जन्म प्रमाणपत्र की सत्यता पर विचार करेगा, जिसमें जन्म की तारीख 13 मई, 1993 के रूप में वर्णित है । यह जन्म की तारीख अधिनियम की धारा 7क के अधीन तारीख 7 अक्तूबर, 2014 को आवेदन फाइल करने के पश्चात् तारीख 19 नवंबर, 2014 को रजिस्ट्रीकृत की गई थी । इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि ऐसे जन्म प्रमाणपत्र का प्रबंध अधिनियम, 2000 के अधीन फायदे का दावा करने के लिए किया गया था । अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत किए गए जन्म प्रमाणपत्र का अवलंब नहीं लिया जा सकता है क्योंकि इसे तारीख 7 अक्तूबर, 2014 को अधिनियम की धारा 7क के अधीन आवेदन फाइल करने के पश्चात् अभिप्राप्त किया गया था । अत: न्यायालयों ने जन्म की तारीख के उस प्रमाणपत्र का ठीक ही अवलंब नहीं लिया था, जो तारीख 19 नवंबर, 2014 को प्रदान किया गया था क्योंकि इसे आवेदन फाइल किए जाने के पश्चात् अभिप्राप्त किया गया था और इसे जन्म के कई वर्षों के पश्चात्,

न कि जन्म के कुछ पश्चात् या विहित समयावधि के भीतर, रजिस्ट्रीकृत किया गया था । विद्यालय छोड़ने के प्रमाणपत्र (प्रदर्श ए-3) को आदर्श शिक्षा सदन, पिन्ना के मुख्याध्यापक, उमेश कुमार की परीक्षा करके साबित किया गया है । इस साक्षी के कथन के अनुसार, यह विद्यालय वर्ष 1999 में गांव खेड़ी, दूदाधारी में कार्य कर रहा था, जहां यह साक्षी वर्ष 2000 से मुख्याध्यापक के रूप में कार्यरत था और इसे गांव पिन्ना में वर्ष 2009-10 में स्थानांतरित किया गया था । प्रमाणपत्र के अनुसार, अपीलार्थी तारीख 12 जुलाई, 1999 से 2 जुलाई, 2003 तक इस विद्यालय का विद्यार्थी था । इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया था कि यह विद्यालय एक प्राइवेट विद्यालय है और अपीलार्थी के पिता ने अपीलार्थी का पहली कक्षा में दाखिला लेने वाला कोई प्रमाणपत्र प्रस्तुत नहीं किया था । अपीलार्थी को सीधे दूसरी कक्षा में दाखिल किया गया था । इस साक्षी ने यह स्वीकार किया था कि प्रदर्श ए-1, दाखिला प्ररूप उसकी लिखाई में तैयार किया गया एक अलग कागज है और इस पर किसी उच्चतर प्राधिकारी के कोई प्रति-हस्ताक्षर नहीं हैं । उसने शिक्षा विभाग से इस विद्यालय के रजिस्ट्रीकरण का भी कोई सबूत पेश नहीं किया था । तथाकथित दाखिला प्ररूप उसके द्वारा वर्ष 1999 में भरा गया था और इसी प्रकार विद्यालय छोड़ने का प्रमाणपत्र वर्ष 2003 में भरा गया था । विद्यालय छोड़ने के प्रमाणपत्र के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि इसे तारीख 19 सितंबर, 2014 को आदर्श शिक्षा सदन, गांव खेड़ी, दूदाधारी के प्रधानाध्यापक द्वारा जारी किया गया था, यद्यपि यह विद्यालय गांव पिन्ना में वर्ष 2009-10 में स्थानांतरित हुआ था । यह अस्पष्ट और हास्यास्पद बात है कि किसी ऐसे विशिष्ट विद्यालय द्वारा कोई प्रमाणपत्र कैसे जारी किया गया था, जो किसी दूसरे गांव में स्थानांतरित हो गया था । इस बात से प्रमाणपत्र जारी किए जाने की प्रक्रिया संदेहास्पद हो जाती है । दूसरी ओर, प्रदर्श आर-1 राज्य द्वारा यह कथन करते हुए प्रस्तुत किया गया प्रमाणपत्र है कि गांव खेड़ी, दूदाधारी में आदर्श शिक्षा सदन नाम से कोई विद्यालय नहीं है । यह प्रमाणपत्र प्राथमिक विद्यालय, खेड़ी के कनिष्कवीर सिंह द्वारा जारी किया गया था । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश या उच्च न्यायालय ने इस प्रमाणपत्र पर विश्वास नहीं किया था । इस न्यायालय

का यह निष्कर्ष है कि विद्यालय छोड़ने का ऐसा प्रमाणपत्र अविश्वसनीय है और यह प्रमाणपत्र न्यायालय के समक्ष किशोरावस्था को साबित करने के लिए केवल उपाप्त किया गया एक दस्तावेज है । अपीलार्थी ने अधिनियम, 2000 की धारा 7क के अधीन फाइल किए गए अपने आवेदन में किशोरावस्था का अवलंब केवल विद्यालय छोड़ने के प्रमाणपत्र के आधार पर लेने की ईप्सा की थी । विद्यालय का ऐसा अभिलेख विश्वसनीय नहीं है और केवल किशोरावस्था के अभिवाक् का समर्थन करने के लिए उपाप्त किया गया प्रतीत होता है । अपीलार्थी ने अपने आवेदन में जन्म प्रमाणपत्र की तारीख को निर्दिष्ट नहीं किया है क्योंकि इसे बाद में अभिप्राप्त किया गया था । यह कहने की आवश्यकता नहीं है, किशोरावस्था का अभिवाक् सद्भावी और सत्य रीति में किया जाना चाहिए । यदि किशोरावस्था की ईप्सा करने के लिए अवलंब ऐसे दस्तावेज का लिया गया है, जो विश्वसनीय नहीं है या संदिग्ध प्रकृति का है, तो इस बात को ध्यान में रखते हुए कि अधिनियम एक फायदाप्रद विधान है, अपीलार्थी को किशोर होना नहीं समझा जा सकता है । कानून के उपबंधों का निर्वचन उदारतापूर्वक किया जाना चाहिए किंतु इसका फायदा ऐसे अपीलार्थी को प्रदान नहीं किया जा सकता है जो असत्य कथन के साथ न्यायालय में आया है । अत: इस न्यायालय ने यह पाया है कि अपीलार्थी असत्य कथन के साथ न्यायालय में आया है चूंकि उसके द्वारा अवलंब लिए गए दस्तावेज असली और भरोसेमंद नहीं हैं । अत: इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि अपीलार्थी को किशोरावस्था का फायदा नहीं दिया जा सकता है । उच्च न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण विधि के अनुसार एक संभाव्य दृष्टिकोण है और इस अपील में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है । (पैरा 7, 8, 9, 10, 11, 12, 13, 14, 38 और 39)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2021]	2021 एस. सी. सी. ऑनलाइन इला. 260 : **राम मूर्ति देवी** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य** ;	26, 31

[2017] (2017) 2 एस. सी. सी. 210 :
मुकर्रब बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ; 19

[2016] (2016) 12 एस. सी. सी. 744 :
पराग भाटी बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ; 19

[2015] 2015 एस. सी. सी. ऑनलाइन इला. 5201 :
अब्दुल हकीम प्रधान और अन्य बनाम
उत्तर प्रदेश राज्य ; 26, 30

[2013] 2013 एस. सी. सी. ऑनलाइन इला. 14202 :
शिव पत्ता बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ; 34

[2012] (2012) 10 एस. सी. सी. 489 :
अबुजार हुसैन बनाम **पश्चिमी बंगाल राज्य** ; 19

[2010] 2010 एस. सी. सी. ऑनलाइन इला. 695 :
कृष्ण पाल बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ; 33

[2009] 2009 एस. सी. सी. ऑनलाइन इला. 671 :
अनिल कुमार बनाम **सुचिता** ; 26, 28

[2009] 2009 एस. सी. सी. ऑनलाइन इला. 1757 :
बहादुर बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ; 26, 29

[2008] (2008) 13 एस. सी. सी. 133 :
बबलू पासी बनाम **झारखंड राज्य और**
एक अन्य ; 20, 38

[2008] (2008) 15 एस. सी. सी. 223 :
ज्योति प्रकाश राय बनाम **बिहार राज्य** ; 18

[2006] (2006) 5 एस. सी. सी. 584 :
रविन्द्र सिंह गोर्खी बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ; 32

[2001] (2001) 5 एस. सी. सी. 714 :
रामदेव चौहान बनाम **असम राज्य** ; 21

[1989] 1989 एस. सी. सी. ऑनलाइन इला. 438 :
हरे राम चौधरी बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य** ; 26, 27

[1989] 1989 एस. सी. सी. ऑनलाइन इला. 125 :
प्रमोद कुमार मंगलिक बनाम **श्रीमती साधना रानी** । 27

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2022 की दांडिक अपील सं. 207.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 134 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री राजूल भार्गव, ज्येष्ठ अधिवक्ता और कार्तिकेय भार्गव

प्रत्यर्थियों की ओर से सर्वश्री दिनेश चंद्र यादव, अपर महाधिवक्ता, हरियाणा, ईश्वर चंद, डा. मोनिका गुसेन और नरेंद्र कुमार वर्मा

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति हेमंत गुप्ता ने दिया ।

न्या. गुप्ता – इस अपील में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ द्वारा तारीख 30 जुलाई, 2019 को पारित किए गए उस निर्णय को चुनौती दी गई है, जिसके द्वारा विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश, फतेहाबाद द्वारा प्रस्तुत अपीलार्थी को विधि का उल्लंघन करने वाला किशोर घोषित करते हुए पारित किए गए आदेश को अपास्त कर दिया था और अपीलार्थी को एक वयस्क के रूप में विचारण का सामना करने का आदेश दिया गया था ।

2. इस अपील का अवधारण करने के लिए सुसंगत तथ्य ये हैं कि अपीलार्थी को तारीख 18 जनवरी, 2011 को घटी एक घटना के संबंध में अभियुक्त के रूप में नामित किया गया था, जिसमें अपीलार्थी के विरुद्ध यह अभिकथन था कि उसने ताक में बैठकर एक कार को रुकवाया और कार में बैठे व्यक्तियों से 22 लाख रुपए छीन लिए । शिकायतकर्ता कार में बैठा एक व्यक्ति था, जबकि कार में बैठा एक अन्य व्यक्ति-भीम सिंह की उस पर चलाई गई गोली के कारण मृत्यु हो गई थी । विचारण के लंबित रहने के दौरान अपीलार्थी ने तारीख 7 अक्तूबर, 2014 को यह दावा करते हुए एक आवेदन दिया कि वह घटना की तारीख को एक किशोर था और उसने अपने विद्यालय के अभिलेख का अवलंब लिया जिसमें उसकी जन्म तारीख 13 मई, 1993 प्रकट हो रही थी । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश ने अपीलार्थी के अभिवाक् को स्वीकार किया और

तारीख 9 जनवरी, 2015 के आदेश द्वारा उसे किशोर घोषित किया । इस आदेश को एक पुनरीक्षण आवेदन द्वारा उच्च न्यायालय के समक्ष चुनौती दी गई । इस पुनरीक्षण को तारीख 4 मई, 2016 को मंजूर किया गया और मामले को नए सिरे से न्यायनिर्णयन करने के लिए विचारण न्यायालय को वापस प्रेषित कर दिया गया ।

3. विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश ने प्रतिप्रेषण के पश्चात् अपीलार्थी की आयु अस्थि-विकास जांच की रिपोर्ट के अनुसार घटना की तारीख को 16 वर्ष 8 माह और 5 दिन पाई । डाक्टरों के बोर्ड द्वारा रिपोर्ट में यथा अवधारित अपीलार्थी की आयु 23-24 वर्ष थी । तथापि, उच्च न्यायालय ने विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश के आदेश को अपास्त करते हुए उत्तर प्रदेश पंचायत राज (परिवार रजिस्टर का रखरखाव) नियम, 1970 (संक्षेप में परिवार रजिस्टर नियम) के अधीन बनाए गए परिवार रजिस्टर का यह अभिनिर्धारित करने के लिए अवलंब लिया कि अपीलार्थी के किशोरावस्था के अभिवाक् को मंजूर नहीं किया जा सकता है । यह आदेश इस अपील में चुनौती की विषयवस्तु है ।

4. आयु का अवधारण करने के लिए अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) नियम, 2007 (संक्षेप में नियम) के नियम 12(3)(ख) के अधीन उपबंधित है, जो निम्न प्रकार से है :–

> "**12. आयु का अवधारण करने के लिए अनुसरण की जाने वाली प्रक्रिया** – (1) किसी बालक या विधि का उल्लंघन करने वाले किसी किशोर से संबंधित प्रत्येक मामले में, न्यायालय या बोर्ड या, यथास्थिति, इन नियमों के नियम 19 में निर्दिष्ट समिति द्वारा ऐसे किशोर या बालक या विधि का उल्लंघन करने वाले किसी किशोर की आयु का अवधारण उस प्रयोजन के लिए आवेदन करने की तारीख से तीस दिन की अवधि के भीतर किया जाएगा ।
>
> (2) न्यायालय या बोर्ड या, यथास्थिति, समिति द्वारा किशोर की किशोरावस्था या अन्यथा का या बालक होने या, यथास्थिति, विधि का उल्लंघन करने वाले किशोर के बारे में विनिश्चय प्रथम दृष्ट्या शारीरिक प्रतीति या दस्तावेजों के आधार पर, यदि उपलब्ध

हों, किया जाएगा और उसे संप्रेषण गृह या जेल में भेजेगा ।

(3) किसी बालक या विधि का उल्लंघन करने वाले किशोर से संबंधित प्रत्येक मामले में, आयु के अवधारण की जांच न्यायालय या बोर्ड या, यथास्थिति, समिति द्वारा निम्नलिखित साक्ष्य अभिप्राप्त करके की जाएगी –

(क) (i) मैट्रिकुलेशन या समतुल्य प्रमाणपत्र, यदि उपलब्ध हो, और उसके अभाव में ;

(ii) प्रथम बार दाखिला लिए गए विद्यालय (बाल विद्यालय से भिन्न) के जन्म प्रमाणपत्र की तारीख और उसके अभाव में ;

(iii) निगम या नगरपालिका प्राधिकारी या पंचायत द्वारा दिया गया जन्म प्रमाणपत्र ;

(ख) और केवल उपरोक्त खंड (क) के (i), (ii) या (iii) के अभाव में, किसी सम्यक् रूप से गठित चिकित्सा बोर्ड से चिकित्सीय राय की ईप्सा की जाएगी, जिसमें किशोर या बालक की आयु की घोषणा की जाएगी । यदि आयु का सही निर्धारण नहीं किया जा सकता है, तो न्यायालय या बोर्ड या, यथास्थिति, समिति उनके द्वारा लेखबद्ध किए गए कारणों से, यदि आवश्यक समझे, बालक या किशोर को एक वर्ष के मार्जिन के भीतर निम्नतर आधार पर ऐसे बालक या बालिका की आयु पर विचार करते हुए फायदा दे सकेगा, और ऐसे मामले में आदेश पारित करते समय, यथास्थिति, ऐसे साक्ष्य पर विचार करते हुए, जो उपलब्ध हो सके, या चिकित्सीय राय पर विचार करने के पश्चात् उसकी आयु के संबंध में निष्कर्ष अभिलिखित करेगा और खंड (क) (i), (ii), (iii) के किसी खंड में विनिर्दिष्ट किसी साक्ष्य या उसके अभाव में खंड (ख) में विनिर्दिष्ट साक्ष्य ऐसे बालक या विधि का उल्लंघन करने वाले किशोर की आयु का निश्चायक सबूत होगा ।"

5. किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम,

2000 (संक्षेप में अधिनियम, 2000) को किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) अधिनियम, 2015 (संक्षेप में अधिनियम, 2015) द्वारा निरसित कर दिया गया था । आयु का अवधारण करने के लिए प्रक्रिया अब अधिनियम, 2015 का भाग है जो पहले ऊपर उल्लिखित नियमों के नियम, 12 में उपबंधित थी ।

6. स्वीकृत रूप से, कोई मैट्रिकुलेशन या समतुल्य प्रमाणपत्र नहीं है, जैसा कि नियम 12(3)(क)(i) के अधीन अनुध्यात है । अपीलार्थी ने पहली बार दाखिला लिए गए विद्यालय द्वारा जारी किए गए जन्म प्रमाणपत्र का अवलंब लिया है । दूसरी ओर विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश ने डाक्टरों के बोर्ड द्वारा अस्थि-विकास जांच के आधार पर तारीख 13 मई, 2016 को दी गई रिपोर्ट प्रदर्श ए. डब्ल्यू. 1/ए का अवलंब लिया था, जिसमें अपीलार्थी की आयु 23 से 24 वर्ष होना पाई गई थी । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश ने फेरफार का फायदा दिया और रिपोर्ट की तारीख को 22 वर्ष की आयु होना अवधारित किया और इस प्रकार उसकी आयु 16 वर्ष 8 माह और 5 दिन पाई गई थी । इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी को नियमों के नियम 12(3)(ख) के निबंधनों के अनुसार एक वर्ष के अतिरिक्त फायदे का हकदार पाया गया था, इसलिए अपीलार्थी को विधि का उल्लंघन करने वाला किशोर अभिनिर्धारित किया गया था । विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश ने विद्यालय छोड़ने के प्रमाणपत्र या अपीलार्थी द्वारा अवलंबित जन्म प्रमाणपत्र का अवलंब नहीं लिया था ।

7. अपीलार्थी ने किशोर होने के अपने अभिवाक् के समर्थन में तीन दस्तावेजों यथा- जन्म प्रमाणपत्र, विद्यालय छोड़ने के प्रमाणपत्र और अस्थि-विकास जांच रिपोर्ट का अवलंब लिया था, जबकि राज्य ने परिवार रजिस्टर नियमों द्वारा विहित परिवार रजिस्टर का अवलंब लिया था ।

i. जन्म प्रमाणपत्र

8. पहले, हम उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा जारी किए गए जन्म प्रमाणपत्र की सत्यता पर विचार करेंगे, जिसमें जन्म की तारीख 13 मई, 1993 के रूप में वर्णित है । यह जन्म की तारीख अधिनियम की धारा 7क के अधीन तारीख 7 अक्तूबर, 2014 को आवेदन फाइल करने के

पश्चात् तारीख 19 नवंबर, 2014 को रजिस्ट्रीकृत की गई थी ।

9. हमारा यह निष्कर्ष है कि ऐसे जन्म प्रमाणपत्र का प्रबंध अधिनियम, 2000 के अधीन फायदे का दावा करने के लिए किया गया था । अपीलार्थी द्वारा प्रस्तुत किए गए जन्म प्रमाणपत्र का अवलंब नहीं लिया जा सकता है क्योंकि इसे तारीख 7 अक्तूबर, 2014 को अधिनियम की धारा 7क के अधीन आवेदन फाइल करने के पश्चात् अभिप्राप्त किया गया था । जन्म प्रमाणपत्र के अनुसार, अपीलार्थी का जन्म घर पर हुआ था । इसलिए जन्म और मृत्यु रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1969 की धारा 8(1)(क) और धारा 10(1)(i) के निबंधनों के अनुसार रजिस्ट्रार को जन्म की इत्तिला घर के मुखिया द्वारा या घर में मौजूद मुखिया के निकटतम संबंधी द्वारा या घर में मौजूद सबसे वयस्क पुरुष द्वारा दी जानी चाहिए । यदि जन्म की सूचना तीस दिनों के भीतर दी जाती है, तो इसे उतने विलंब शुल्क का संदाय करने पर, जो विहित किया जाए, रजिस्ट्रीकृत किया जाएगा । तीस दिनों के पश्चात् जन्म का रजिस्ट्रीकरण करने के लिए अन्य शर्तें भी हैं । अधिनियम के सुसंगत उपबंध निम्न प्रकार से हैं :–

> "**8. जन्म और मृत्यु का रजिस्ट्रीकरण कराने के लिए अपेक्षित व्यक्ति** – (1) नीचे विनिर्दिष्ट व्यक्तियों का यह कर्तव्य होगा कि वे धारा 16 उप धारा (1) के अधीन राज्य सरकार द्वारा विहित प्ररूपों में प्रविष्ट किए जाने के लिए अपेक्षित विभिन्न विशिष्टियों की इत्तिला अपने सर्वोत्तम ज्ञान और विश्वास के अनुसार, ऐसे समय के भीतर, जो विहित किया जाए, मौखिक या लिखित रूप में रजिस्ट्रार को दें या दिलवाएं –
>
> (क) खंड (ख) से (ड़) तक में निर्दिष्ट स्थान से भिन्न किसी घर में, चाहे वह निवासीय हो या अनिवासीय, हुए जन्म और मृत्यु की बाबत, उस घर का ऐसा मुखिया, या यदि उस घर में एक से अधिक गृहस्थियां निवास करती हों तो उस गृहस्थी का ऐसा मुखिया, जो उस घर या गृहस्थी द्वारा माननीय मुखिया हो और यदि किसी ऐसी कालावधि के दौरान, जिसमें जन्म या मृत्यु की रिपोर्ट की जानी हो, किसी

समय ऐसा व्यक्ति घर में उपस्थित न हो तो मुखिया का वह निकटतम संबंधी जो घर में उपस्थित हो और ऐसे किसी व्यक्ति की अनुपस्थिति में उक्त कालावधि के दौरान उसमें उपस्थित सबसे बड़ा वयस्क पुरुष ;

* * * *

10. जन्म और मृत्यु की सूचना देने और मृत्यु के कारण को प्रमाणित करने का कुछ व्यक्तियों का कर्तव्य – (1) (i) जन्म या मृत्यु के समय उपस्थित दाई या किसी अन्य चिकित्सीय या स्वास्थ्य परिचारक का,

(ii) शवों के व्ययन के लिए अलग कर दिए गए किसी स्थान के प्रबंधक या स्वामी या ऐसे स्थान पर उपस्थित रहने के लिए स्थानीय प्राधिकारी द्वारा अपेक्षित किसी व्यक्ति का, अथवा

(iii) किसी अन्य व्यक्ति का, जिसे राज्य सरकार इसके पदनाम से इस निमित्त विनिर्दिष्ट करे,

यह कर्तव्य होगा कि वह प्रत्येक ऐसे जन्म या मृत्यु या दोनों की, जिसमें उसने परिचर्या की हो या वह उपस्थित था, या जो ऐसे क्षेत्र में, जैसा विहित किया जाए, हुई है, सूचना रजिस्ट्रार को इतने समय के भीतर और ऐसी रीति से दे, जिसे विहित किया जाए ।"

10. अत: न्यायालयों ने जन्म की तारीख के उस प्रमाणपत्र का ठीक ही अवलंब नहीं लिया था, जो तारीख 19 नवंबर, 2014 को प्रदान किया गया था क्योंकि इसे आवेदन फाइल किए जाने के पश्चात् अभिप्राप्त किया गया था और इसे जन्म के कई वर्षों के पश्चात्, न कि जन्म के कुछ पश्चात् या विहित समयावधि के भीतर, रजिस्ट्रीकृत किया गया था ।

ii. विद्यालय छोड़ने का प्रमाणपत्र

11. विद्यालय छोड़ने के प्रमाणपत्र (प्रदर्श ए-3) को आदर्श शिक्षा

सदन, पिन्ना के मुख्याध्यापक, उमेश कुमार की परीक्षा करके साबित किया गया है । इस साक्षी के कथन के अनुसार, यह विद्यालय वर्ष 1999 में गांव खेड़ी, दूदाधारी में कार्य कर रहा था, जहां यह साक्षी वर्ष 2000 से मुख्याध्यापक के रूप में कार्यरत था और इसे गांव पिन्ना में वर्ष 2009-10 में स्थानांतरित किया गया था । प्रमाणपत्र के अनुसार, अपीलार्थी तारीख 12 जुलाई, 1999 से 2 जुलाई, 2003 तक इस विद्यालय का विद्यार्थी था । इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया था कि यह विद्यालय एक प्राइवेट विद्यालय है और अपीलार्थी के पिता ने अपीलार्थी का पहली कक्षा में दाखिला लेने वाला कोई प्रमाणपत्र प्रस्तुत नहीं किया था । अपीलार्थी को सीधे दूसरी कक्षा में दाखिल किया गया था । इस साक्षी ने यह स्वीकार किया था कि प्रदर्श ए-1, दाखिला प्ररूप उसकी लिखाई में तैयार किया गया एक अलग कागज है और इस पर किसी उच्चतर प्राधिकारी के कोई प्रति-हस्ताक्षर नहीं हैं । उसने शिक्षा विभाग से इस विद्यालय के रजिस्ट्रीकरण का भी कोई सबूत पेश नहीं किया था ।

12. तथाकथित दाखिला प्ररूप उसके द्वारा वर्ष 1999 में भरा गया था और इसी प्रकार विद्यालय छोड़ने का प्रमाणपत्र वर्ष 2003 में भरा गया था । विद्यालय छोड़ने के प्रमाणपत्र के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि इसे तारीख 19 सितंबर, 2014 को आदर्श शिक्षा सदन, गांव खेड़ी, दूदाधारी के प्रधानाध्यापक द्वारा जारी किया गया था, यद्यपि यह विद्यालय गांव पिन्ना में वर्ष 2009-10 में स्थानांतरित हुआ था । यह अस्पष्ट और हास्यास्पद बात है कि किसी ऐसे विशिष्ट विद्यालय द्वारा कोई प्रमाणपत्र कैसे जारी किया गया था, जो किसी दूसरे गांव में स्थानांतरित हो गया था । इस बात से प्रमाणपत्र जारी किए जाने की प्रक्रिया संदेहास्पद हो जाती है ।

13. दूसरी ओर, प्रदर्श आर-1 राज्य द्वारा यह कथन करते हुए प्रस्तुत किया गया प्रमाणपत्र है कि गांव खेड़ी, दूदाधारी में आदर्श शिक्षा सदन नाम से कोई विद्यालय नहीं है । यह प्रमाणपत्र प्राथमिक विद्यालय, खेड़ी के कनिष्कवीर सिंह द्वारा जारी किया गया था ।

14. विद्वान् अपर सेशन न्यायाधीश या उच्च न्यायालय ने इस प्रमाणपत्र पर विश्वास नहीं किया था । हमारा यह निष्कर्ष है कि विद्यालय छोड़ने का ऐसा प्रमाणपत्र अविश्वसनीय है और यह प्रमाणपत्र न्यायालय के समक्ष किशोरावस्था को साबित करने के लिए केवल उपाप्त किया गया एक दस्तावेज है ।

iii. अस्थि-विकास जांच रिपोर्ट

15. जब तारीख 13 मई, 2016 को अपीलार्थी की परीक्षा की गई थी, तब चिकित्सा बोर्ड ने अपीलार्थी की आयु 23 से 24 वर्ष के बीच होने के बारे में राय व्यक्त की थी । अपर सेशन न्यायाधीश द्वारा अपीलार्थी द्वारा किए गए किशोरावस्था के अभिवाक् को मंजूर करने के लिए इस रिपोर्ट का अवलंब लिया गया था । तथापि, यह उल्लेखनीय है कि अस्थि-विकास जांच का परिणाम व्यक्तिगत लक्षणों के आधार पर भिन्न-भिन्न होता है और इसलिए प्रत्येक मामले में इसकी विश्वसनीयता की परीक्षा की जानी चाहिए ।

16. मोदी की मेडीकल जूरिसप्रुडेंस एंड टॉक्सिकोलॉजी पाठ्य पुस्तक, 26वां संस्करण, पृष्ठ 221 पर आयु का अवधारण करने के लिए सुसंगत बातों का उल्लेख किया गया है :–

> (1) **ऊंचाई और वजन** – यह राय व्यक्त की गई है कि आयु के अनुसार व्यक्तियों की ऊंचाई और वजन में उत्तरोत्तर वृद्धि से इतनी अत्यधिक भिन्नता होती है कि चिकित्सा-विधिक मामलों में आयु का प्राक्कलन करने के लिए इस पर निर्भर नहीं किया जा सकता है ।
>
> (2) **अस्थियों का विकास** – यह चिह्न तब तक आयु का अवधारण करने के लिए मददगार है, जब तक अस्थि-विकास पूर्ण नहीं होता है, क्योंकि स्कियाग्राफी से अब जीवित व्यक्तियों में भी अस्थि-विकास की सीमा और अस्थियों में अंतर्वृद्धि के संयोजन का अवधारण करना संभव हो गया है ।

17. अत: भारत के विभिन्न राज्यों के मौसम, खान-पान, वंशानुगत

संबंधी अंतर और लोगों को प्रभावित करने वाले अन्य कारकों के कारण अस्थियों में अंतर्वृद्धि के संयोजन से आयु का अवधारण करने के लिए किसी एकरूप मानदंड को निश्चित करने की युक्तियुक्त रूप से प्रत्याशा नहीं की जा सकती है ।

18. इसके अतिरिक्त, **ज्योति प्रकाश राय** बनाम **बिहार राज्य**[1] वाले मामले में संप्रकाशित निर्णय में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि किसी व्यक्ति की आयु का अवधारण करने के लिए चिकित्सा रिपोर्ट को न्यायालयों तथा आयुर्विज्ञान वैज्ञानिकों द्वारा कभी भी निश्चायक प्रकृति का नहीं माना गया है । यह भी पाया गया था कि यद्यपि यह अधिनियम एक फायदाप्रद विधान है किंतु फायदाप्रद विधान के सिद्धांतों को केवल कानून के निर्वचन के प्रयोजनार्थ लागू किया जाना चाहिए न कि इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कि क्या कोई व्यक्ति किशोर है या नहीं । इस न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया है :–

> "12. अधिनियम, 2012 निर्विवाद रूप से एक फायदाप्रद विधान है । तथापि, फायदाप्रद विधान के सिद्धांतों को केवल कानून के निर्वचन के प्रयोजनार्थ प्रयोग किया जाना चाहिए, न कि इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए कि कोई व्यक्ति किशोर है या नहीं । क्या अपराधी अपराध कारित करने की तारीख को किशोर था या नहीं, आवश्यक रूप से एक तथ्य का प्रश्न है जिसका अवधारण पक्षकारों द्वारा अभिलेख पर लाई गई सामग्री के आधार पर किया जाना चाहिए । ऐसे किसी साक्ष्य के अभाव में, जो साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 35 के अधीन अनुध्यात अनुसार उक्त प्रयोजन के लिए सुसंगत है, इस बात का अवधारण प्रत्येक मामले में अंतर्वलित तथ्यात्मक पृष्ठभूमि को ध्यान में रखते हुए किया जाना चाहिए । उक्त प्रयोजन के लिए, न केवल सुसंगत सामग्री पर विचार किया जाना चाहिए, अपितु न्यायालय द्वारा पूर्ववर्ती अवसरों पर पारित किए गए आदेश भी सुसंगत होंगे ।

---

[1] (2008) 15 एस. सी. सी. 223.

13. किसी व्यक्ति की आयु का अवधारण करने के लिए चिकित्सा रिपोर्ट को न्यायालयों द्वारा तथा आयुर्विज्ञान वैज्ञानिकों द्वारा कभी भी निश्चायक प्रकृति का नहीं माना गया है । कतिपय आयु के पश्चात् अस्थि-विकास जांच या अन्य जांचों के आधार पर संबंधित व्यक्ति की सटीक आयु का अवधारण करना कठिन है । विष्णु **बनाम** महाराष्ट्र राज्य [(2006) 1 एस. सी. सी. 283 = (2006) 1 एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 217] वाले मामले में इस न्यायालय ने यह राय व्यक्त की थी –

> '20. श्री ललित द्वारा हमारे समक्ष यह आग्रह किया गया है कि अभियोक्त्री की आयु का अस्थि-विकास जांच करके अवधारण करना वैज्ञानिक रूप से साबित है और इसलिए डाक्टर की इस राय को स्वीकार किया जाना चाहिए कि लड़की की आयु 18-19 वर्ष थी । हम इस दलील को स्वीकार करने में असमर्थ हैं और इसका कारण यह है कि विशेषज्ञ चिकित्सा साक्ष्य प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य पर आबद्धकर नहीं है । चिकित्सा अधिकारी की राय न्यायालय की सहायता करने के लिए है क्योंकि वह तथ्य का साक्षी नहीं है और चिकित्सा अधिकारी द्वारा दिया गया साक्ष्य वास्तव में एक परामर्शी प्रकृति का होता है और तथ्य के साक्षी पर आबद्धकर नहीं होता है ।'

पूर्वोल्लिखित स्थिति में, इस न्यायालय ने अनेक निर्णयों में यह अभिनिर्धारित किया है कि डाक्टरों द्वारा अवधारित की गई आयु में दोनों ओर दो वर्षों की नम्यता दी जानी चाहिए ।"

19. **मुकर्रब** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1] के रूप में संप्रकाशित निर्णय में यह मत व्यक्त किया गया था कि विकिरण-चिकित्सा विज्ञान परीक्षण द्वारा किसी व्यक्ति की आयु के संबंध में दी गई चिकित्सीय राय के एकमात्र आधार पर एक अविवेचित और यांत्रिक दृष्टिकोण नहीं अपनाया जा सकता है । यह भी अभिनिर्धारित किया गया था कि अधिनियम, 2000 का प्रयोजन गंभीर और जघन्य अपराधों के अभियुक्तों को आश्रय

[1] (2017) 2 एस. सी. सी. 210.

देना नहीं है । **अबुजार हुसैन** बनाम **पश्चिमी बंगाल राज्य**[1] और **पराग भाटी** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[2] के रूप में संप्रकाशित इस न्यायालय के निर्णय का अवलंब लेते हुए निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया था :–

> "27. मध्य प्रदेश राज्य **बनाम** अनूप सिंह [(2015) 7 एस. सी. सी. 773 = (2015) 4 एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 208] वाले हाल ही के निर्णय में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि आयु का अवधारण करने के लिए अस्थि-विकास जांच एकमात्र मानदंड नहीं है । बबलू पासी [बबलू पासी **बनाम** झारखंड राज्य (2008) 13 एस. सी. सी. 133 = (2009) 3 एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 266] और अनूप सिंह [मध्य प्रदेश राज्य **बनाम** अनूप सिंह (2015) 7 एस. सी. सी. 773 = (2015) 4 एस. सी. सी. (क्रिमिनल) 208] वाले मामलों का अनुसरण करते हुए हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि अस्थि-विकास जांच को निश्चायक नहीं समझा जा सकता है, जब इसे किसी व्यक्ति की आयु को अभिनिश्चित करने के लिए किया जाता है । इतना ही नहीं, इस अपील में अपीलार्थियों ने निश्चित रूप से 30 वर्ष की आयु पार कर ली थी, जोकि ध्यान में रखे जाने वाला एक महत्वपूर्ण पहलू है क्योंकि आयु को यर्थाथत: अवधारित नहीं किया जा सकता है । वास्तव में, अपीलार्थियों की चिकित्सा रिपोर्ट में यह उल्लेख किया गया है कि दंत एक्सरे के लिए कोई संकेत नहीं किया गया है चूंकि दोनों अभियुक्तों की आयु 25 वर्ष से ऊपर थी ।"

20. **बबलू पासी** बनाम **झारखंड राज्य और एक अन्य**[3] के रूप में संप्रकाशित निर्णय में इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि किसी व्यक्ति की आयु का अवधारण करने के लिए एक निरपेक्ष सिद्धांत अधिकथित करना न तो व्यवहार्य है और न ही वांछनीय । निम्नलिखित

---

[1] (2012) 10 एस. सी. सी. 489.

[2] (2016) 12 एस. सी. सी. 744.

[3] (2008) 13 एस. सी. सी. 133.

अभिनिर्धारित किया गया था :–

> "22. यह सुस्थिर है कि किसी व्यक्ति की आयु का अवधारण करने के लिए एक निरपेक्ष सिद्धांत अधिकथित करना न तो व्यवहार्य है और न ही वांछनीय । जन्म की तारीख का अवधारण अभिलेख पर की सामग्री के आधार पर और पक्षकारों द्वारा प्रस्तुत किए गए साक्ष्य का मूल्यांकन करके किया जाना चाहिए । किसी व्यक्ति की आयु के बारे में चिकित्सीय साक्ष्य हालांकि एक अति उपयोगी मार्गदर्शक कारक है, तो भी निश्चायक नहीं है और इस पर अन्य सटीक साक्ष्य के साथ विचार किया जाना चाहिए ।"

21. **रामदेव चौहान** बनाम **असम राज्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि किसी व्यक्ति की आयु का अवधारण करने के लिए चिकित्सा विशेषज्ञ की राय की बजाय एक्स-रे अस्थि-विकास जांच से अधिक निश्चित आधार उपलब्ध हो सकता है, किंतु यह जांच भी किसी तरह से इतनी अचूक और सटीक नहीं हो सकती है कि संबंधित व्यक्ति की यथार्थ जन्म की तारीख उपदर्शित हो सके । निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया गया था :–

> "21. जया माला **बनाम** गृह सचिव, जम्मू और कश्मीर सरकार [(1982) 2 एस. सी. सी. 538 = ए. आई. आर. 1982 एस. सी. 1297 = 1982 क्रिमिनल ला जर्नल 1777] वाले मामले में इस न्यायालय के निर्णय का अवलंब लेते हुए प्रतिरक्षा पक्ष के विद्वान् काउंसेल ने यह निवेदन किया कि न्यायालय इस बात की अवेक्षा कर सकता है कि विकिरण-चिकित्सा विज्ञान परीक्षण द्वारा अभिनिश्चित की गई आयु में गलती की गुंजाइश दोनों ओर दो वर्ष है । पूर्वोक्त मामले से अभियुक्त को कोई सहायता नहीं मिलती है क्योंकि उस मामले में न्यायालय निवारक अभिरक्षा में लिए गए एक निरुद्ध व्यक्ति की आयु पर विचार कर रहा था और किसी अपराध की दोषसिद्धि उपरांत अधिनिर्णीत किए जाने वाले दंडादेश की सीमा का अवधारण नहीं कर रहा था । अन्यथा भी, यदि

---

[1] (2001) 5 एस. सी. सी. 714.

पूर्वोक्त निर्णय में की गई मताभिव्यक्तियों पर विचार किया जाए, तो इससे अभियुक्त को किसी भी दशा में सहायता नहीं मिलती है । डाक्टर ने अभियुक्त की आयु स्वीकृत रूप से 20 वर्ष से अधिक और 25 वर्ष से कम होने के बारे में राय व्यक्त की थी । डाक्टर का कथन एक राय से अधिक कुछ नहीं है, इसलिए न्यायालय को अपने निष्कर्ष उस व्यक्ति की शारीरिक बनावट, जिसकी आयु को प्रश्नगत किया गया है, की परीक्षा करने पर प्रकट होने वाले सभी तथ्यों और परिस्थितियों के साथ-साथ मौखिक परिसाक्ष्य, जो उपलब्ध हो, के आधार पर निकालने चाहिएं । किसी व्यक्ति की आयु का अवधारण करने के लिए चिकित्सा विशेषज्ञ की राय की बजाय एक्स-रे अस्थि-विकास जांच से अधिक निश्चित आधार उपलब्ध हो सकता है, किंतु यह जांच भी किसी तरह से इतनी अचूक और सटीक नहीं हो सकती है कि संबंधित व्यक्ति की यथार्थ जन्म की तारीख उपदर्शित हो सके । किसी अभियुक्त की आयु का अवधारण करते हुए, पाठ्य पुस्तकों, चिकित्सा विधिशास्त्र और विष विज्ञान का बहुत अधिक अवलंब नहीं लिया जा सकता है । विभिन्न अक्षांशों, ऊंचाइयों, पर्यावरण, वनस्पति और आहार वाले इस विशाल देश में ऊंचाई और वजन एक-जैसा होने की प्रत्याशा नहीं की जा सकती है ।"

22. यहां यह उल्लेख करना प्रासंगिक है कि चिकित्सा बोर्ड के सदस्य, डा. राजीव चौहान ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया था कि 30 से 32 वर्ष की आयु के मनुष्य में भी वैसा ही विलयन (फ्यूज़न) पाया जाता है जैसा उस मनुष्य में पाया जाता है जिसने 22 वर्ष की आयु पार कर ली है । उक्त कथन को ध्यान में रखते हुए, हमारा यह निष्कर्ष है कि चिकित्सा बोर्ड के इस निष्कर्ष को कि अपीलार्थी 23 से 24 वर्ष का था, निश्चायक या अपराध कारित करने की तारीख को अपीलार्थी की आयु 18 वर्ष से कम होने के बारे में अवधारण करने के लिए मददगार नहीं कहा जा सकता है ।

iv. परिवार रजिस्टर

23. परिवार रजिस्टर नियमों में उत्तर प्रदेश राज्य में एक ऐसा

परिवार रजिस्टर तैयार किया जाना विहित किया गया है, जिसमें परिवार-वार नामों और गांव सभा से संबंधित ग्राम में मामूली तौर पर निवास करने वाले सभी व्यक्तियों की विशिष्टियां अंतर्विष्ट हों । ऐसे नियम उत्तर प्रदेश पंचायत राज अधिनियम, 1947 की धारा 110 के अधीन विरचित किए गए हैं । उच्च न्यायालय ने ऐसे प्रमाणपत्र का यह अभिनिर्धारित करने के लिए अवलंब लिया है कि अपीलार्थी किशोर नहीं है । ये नियम निम्न प्रकार से हैं :–

"1. (1) इन नियमों को उत्तर प्रदेश पंचायत राज (परिवार रजिस्टरों का रख-रखाव) नियम, 1970 कहा जा सकेगा ।

2. परिवार रजिस्टर का प्ररूप और तैयार किया जाना – प्ररूप-क में एक ऐसा परिवार रजिस्टर तैयार किया जाएगा, जिसमें परिवार-वार नामों और गांव सभा से संबंधित ग्राम में मामूली तौर पर निवास करने वाले सभी व्यक्तियों की विशिष्टियां अंतर्विष्ट हों । रजिस्टर में साधारणतया प्रत्येक परिवार को एक पृष्ठ आबंटित किया जाएगा । अनुसूचित जातियों से संबंधित परिवारों के लिए रजिस्टर में एक अलग भाग होगा । रजिस्टर हिंदी में देवनागरी लिपि में तैयार किया जाएगा ।

3. रजिस्टर में रजिस्ट्रीकरण के लिए साधारण शर्तें – प्रत्येक व्यक्ति, जो गांव सभा के क्षेत्र के भीतर मामूली तौर पर निवासी है, परिवार रजिस्टर में रजिस्ट्रीकृत किए जाने का हकदार होगा ।

स्पष्टीकरण – किसी व्यक्ति को किसी गांव में मामूली तौर पर निवासी होना तब समझा जाएगा यदि वह उस गांव में मामूली तौर पर निवास कर रहा है या उस गांव में अधिभोग के लिए तैयार आवासीय मकान पर काबिज है ।

4. परिवार रजिस्टर में त्रैमासिक प्रविष्टि – हर वर्ष अप्रैल से आरंभ होने वाली प्रत्येक तिमाही की शुरुआत में, गांव सभा का सचिव जन्म और मृत्यु, यदि किसी परिवार में पूर्ववर्ती तिमाही में हुए हैं, के परिणामस्वरूप परिवार रजिस्टर में आवश्यक परिवर्तन

करेगा । ऐसे परिवर्तनों को सूचना के लिए गांव पंचायत की अगली सभा के समक्ष रखा जाएगा ।

5. किसी विद्यमान प्रविष्टि का संशोधन – सहायक विकास अधिकारी (पंचायत) इस निमित्त उसे किए गए आवेदन पर परिवार रजिस्टर में विद्यमान प्रविष्टि का संशोधन करने का आदेश दे सकेगा और फिर गांव सभा का सचिव तद्नुसार रजिस्टर में सुधार करेगा ।

6. रजिस्टर में नामों को सम्मिलित किया जाना – (1) कोई व्यक्ति, जिसका नाम परिवार रजिस्टर में सम्मिलित नहीं है, उसमें अपना नाम सम्मिलित करने के लिए सहायक विकास अधिकारी (पंचायत) को आवेदन कर सकेगा ।

(2) सहायक विकास अधिकारी (पंचायत), यदि उसका ऐसी जांच करने के पश्चात्, जो वह ठीक समझे, यह समाधान हो जाता है कि आवेदक रजिस्टर में रजिस्ट्रीकृत किए जाने का हकदार है, यह निदेश देगा कि आवेदक का नाम रजिस्टर में सम्मिलित किया जाए और गांव सभा का सचिव तद्नुसार नाम सम्मिलित करेगा ।

6क. नियम 5 या नियम 6 के अधीन किए गए किसी आदेश से व्यथित कोई व्यक्ति ऐसे आदेश की तारीख से 30 दिनों के भीतर उपमंडल अधिकारी को अपील कर सकेगा, जिसका विनिश्चय अंतिम होगा ।

7. रजिस्टर की अभिरक्षा और परिरक्षण – (1) गांव सभा का सचिव परिवार रजिस्टर की सुरक्षित अभिरक्षा के लिए उत्तरदायी होगा ।

(2) प्रत्येक व्यक्ति को रजिस्टर का निरीक्षण करने और उससे किसी प्रविष्टि या उद्धरण की प्रमाणित प्रति ऐसी रीति में और ऐसी फीस, यदि कोई है, जो उत्तर प्रदेश पंचायत राज नियमों के नियम 73 में विनिर्दिष्ट की जाए, का संदाय करने पर प्राप्त करने का अधिकार होगा ।

प्ररूप-क

(नियम 2 देखें)

* * *

टिप्पण – अभियुक्त स्तंभ में आदेश का संख्यांक और तारीख, यदि कोई है, जिसके द्वारा कोई नाम जोड़ा गया है या काटा गया है, प्रविष्टि करने वाले व्यक्ति के हस्ताक्षर सहित दिया जाना चाहिए ।"

24. नियमों के परिशीलन से यह दर्शित होता है कि प्रत्येक परिवार को एक पृष्ठ आबंटित किया गया है और जन्म तथा मृत्यु के परिणामस्वरूप परिवार में किसी परिवर्तन को ऐसे पृष्ठ पर सम्मिलित किए जाने की अपेक्षा की गई है । इन परिवर्तनों को ग्राम पंचायत की अगली सभा के समक्ष रखे जाने की अपेक्षा की गई है । इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि ये नियम अधिनियम के अनुसरण में कानूनी रूप से विरचित किए गए हैं । रजिस्टर में प्रविष्टियां ग्राम पंचायत के पदधारियों द्वारा अपने पदीय कर्तव्य के भाग रूप किया जाना अपेक्षित है । बरवाला खंड के ग्राम पंचायत अधिकारी, नीरज कुमार की परीक्षा की गई थी, जिसमें उसने यह कथन किया था कि रजिस्टर में प्रविष्टियां परिवार के सदस्यों द्वारा दी गई इत्तिला के आधार पर की जाती हैं, यद्यपि वह यह अभिसाक्ष्य नहीं दे सका कि किसने ये प्रविष्टियां की थीं ।

25. अपीलार्थी के पिता, जगपाल सिंह यह अभिसाक्ष्य देने के लिए साक्षी के रूप में उपसंजात हुआ था कि अपीलार्थी का जन्म तारीख 13 मई, 1993 को हुआ था । उसने यह अभिसाक्ष्य दिया कि अपीलार्थी के जन्म के पश्चात् तारीख 15 अप्रैल, 1996 को एक पुत्री का और उसके पश्चात् तारीख 21 सितंबर, 1997 को एक पुत्र का जन्म हुआ था । उच्च न्यायालय ने नीरज कुमार, प्रत्यर्थी साक्षी 2 द्वारा प्रस्तुत किए गए परिवार रजिस्टर (प्रदर्श आर-4) का अवलंब लिया, जिसमें अपीलार्थी के जन्म का वर्ष 1990 के रूप में और पुत्री के जन्म का वर्ष 1996 के रूप में तथा एक अन्य पुत्र के जन्म का वर्ष 1998 के रूप में वर्णित था । अपीलार्थी के भाई और बहिन के जन्म के वर्ष लगभग वहीं हैं जो

अपीलार्थी के पिता द्वारा बताए गए थे । उच्च न्यायालय ने यह पाया था कि ऐसे दस्तावेज को इस कारण से विचार में लिए जाने के लिए अपवर्जित नहीं किया जाता है कि यह दस्तावेज ग्राम पंचायत के कारबार के मामूली अनुक्रम में तैयार किया गया था ।

26. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री भार्गव ने यह दलील दी कि परिवार रजिस्टर को अधिनियम के उपबंधों और उसके अधीन बनाए गए नियमों के अधीन किशोर की आयु का अवधारण करने का आधार नहीं बनाया जा सकता है । इस दलील के समर्थन में, **हरे राम चौधरी** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1] ; **अनिल कुमार** बनाम **सुचिता**[2] ; **बहादुर** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[3] ; **अब्दुल हकीम प्रधान और अन्य** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[4] और **राम मूर्ति देवी** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य और अन्य**[5] वाले मामलों में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के निर्णयों का अवलंब लिया गया ।

27. **हरे राम चौधरी** (उपर्युक्त) वाले मामले में यह आदेश किया गया था कि मामले को पूर्ण न्यायपीठ को निर्देशित किया जाए कि क्या **प्रमोद कुमार मंगलिक** बनाम **श्रीमती साधना रानी**[6] वाले मामले में उच्च न्यायालय का विनिश्चय सही रूप से विनिश्चित किया गया है या नहीं । चूंकि अंतत: किसी विवाद्यक को निर्देशित नहीं किया गया था इसलिए निर्देशित आदेश में की गई कोई मताभिव्यक्ति सुसंगत नहीं है ।

28. **अनिल कुमार** (उपर्युक्त) वाले मामले में विवाद सुचिता नामक एक अभ्यर्थी की जन्म की तारीख के संबंध में चुनाव याचिका से संबंधित था । उसने विद्यालय के अभिलेख में जन्म की तारीख की प्रविष्टि के विरुद्ध अपना जन्म 3 जुलाई, 1984 को होने का दावा किया था । उसकी माता की मृत्यु को साबित करने के लिए परिवार रजिस्टर

---

[1] 1989 एस. सी. सी. ऑनलाइन इला. 438.

[2] 2009 एस. सी. सी. ऑनलाइन इला. 671.

[3] 2009 एस. सी. सी. ऑनलाइन इला. 1757.

[4] 2015 एस. सी. सी. ऑनलाइन इला. 5201.

[5] 2021 एस. सी. सी. ऑनलाइन इला. 260.

[6] 1989 एस. सी. सी. ऑनलाइन इला. 125.

का अवलंब लिया गया था । विद्वान् एकल न्यायाधीश की न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया कि परिवार रजिस्टर केवल एक ऐसा दस्तावेज है जिसमें परिवार के सदस्यों के नामों और वे संबंधित गांव के मामूली तौर पर निवासी हैं, को दर्शित किया गया है । यह रजिस्टर इसमें वर्णित परिवार के किसी सदस्य की जन्म की तारीख या मृत्यु के बारे में निश्चायक सबूत नहीं हो सकता है ।

29. **बहादुर** (उपर्युक्त) वाले मामले में, अभियुक्त ने उत्तर प्रदेश किशोर न्याय (बालकों की देखरेख और संरक्षण) नियम, 2004 का अवलंब लेते हुए उसे किशोर के रूप में घोषणा करने के लिए परिवार रजिस्टर में की गई प्रविष्टियों का अवलंब लिया था । उच्च न्यायालय ने परिवार रजिस्टर को इस आधार पर नामंजूर कर दिया था कि प्रस्तुत की गई प्रविष्टि वर्ष 2000 में तैयार किए गए रजिस्टर के आधार पर थी, जिसे 1970 के मूल रजिस्टर के आधार पर तैयार किया गया था किंतु वर्ष 1970 के मूल रजिस्टर को प्रस्तुत नहीं किया गया था ।

30. **अब्दुल हकीम प्रधान** (उपर्युक्त) वाले मामले में, उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ ने यह अभिनिर्धारित किया था कि परिवार रजिस्टर में की गई प्रविष्टियां कभी भी पदीय कर्तव्यों के नियमित अनुक्रम में नहीं की गई थीं । परिवार रजिस्टर यह दर्शित करने के लिए एक साक्ष्य हो सकता है कि व्यक्ति परिवार में रह रहा है किंतु आयु का अभिनिश्चय करने के लिए साक्ष्य नहीं है ।

31. **राम मूर्ति देवी** (उपर्युक्त) वाले मामले में परिवार रजिस्टर में की प्रविष्टि को जिला मजिस्ट्रेट के कार्यालय द्वारा परिवर्तित किया गया था । उक्त विवाद्यक इस न्यायालय के समक्ष विचार के लिए उद्भूत नहीं हो रहा है । पक्षकारों को परिवार रजिस्टर नियमों के नियम 6क के निबंधनों के अनुसार उपचार की ईप्सा करने के लिए निर्दिष्ट किया गया था ।

32. साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 35 सिविल और दांडिक दोनों कार्यवाहियों में लागू होती है । इसमें यह अनुध्यात है कि किसी लोक सेवक द्वारा अपने पदीय कर्तव्य के निर्वहन में या उस देश की,

जिसमें ऐसा रजिस्टर रखा जाता है, विधि द्वारा विशेष रूप से व्यादिष्ट कर्तव्य पालन के रूप में किसी व्यक्ति द्वारा बनाया रखा गया रजिस्टर एक सुसंगत तथ्य होगा । **रविन्द्र सिंह गोर्खी** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1] के रूप में संप्रकाशित निर्णय में इस न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया था :–

> "23. साक्ष्य अधिनियम की धारा 35 सिविल और दांडिक दोनों कार्यवाहियों में लागू होगी । साक्ष्य अधिनियम किसी सिविल कार्यवाही और दांडिक कार्यवाही के बीच कोई विभेद नहीं करता है । जब तक विनिर्दिष्ट रूप से उपबंधित न हो, साक्ष्य अधिनियम की धारा 35 के निबंधनों के अनुसार किसी लोक सेवक द्वारा अपने पदीय कर्तव्य के निर्वहन में या उस देश की, जिसमें ऐसा रजिस्टर रखा जाता है, विधि द्वारा विशेष रूप से व्यादिष्ट कर्तव्य पालन के रूप में किसी व्यक्ति द्वारा, अन्य के साथ-साथ, बनाया रखा गया ऐसा रजिस्टर एक सुसंगत तथ्य होगा । इस प्रकार, इससे पूर्व कि धारा 35 के अधीन किसी दस्तावेज को ग्राह्य होना अभिनिर्धारित किया जाए, निम्नलिखित शर्तों को पूर्ण किया जाना अपेक्षित है : (i) यह किसी लोक या शासकीय रजिस्टर में प्रविष्टि की प्रकृति में होना चाहिए ; (ii) इसमें विवाद्यक तथ्य या सुसंगत तथ्य का उल्लेख होना चाहिए ; (iii) प्रविष्टि किसी लोक सेवक द्वारा अपने पदीय कर्तव्य के निर्वहन में, या किसी व्यक्ति द्वारा देश की विधि द्वारा विनिर्दिष्ट रूप से व्यादिष्ट किसी कर्तव्य के पालन में की जानी चाहिए ; और (iv) सभी संबंधित व्यक्तियों की निर्विवाद रूप से उस तक पहुंच होनी चाहिए ।"

33. **कृष्ण पाल** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[2] वाले मामले में इलाहाबाद उच्च न्यायालय के विद्वान् एकल न्यायाधीश ने यह अभिनिर्धारित किया था कि परिवार रजिस्टर साक्ष्य अधिनियम के निबंधनों के अनुसार एक लोक अभिलेख है क्योंकि इसे उत्तर प्रदेश

---

[1] (2006) 5 एस. सी. सी. 584.

[2] 2010 एस. सी. सी. ऑनलाइन इला. 695.

पंचायत राज अधिनियम की धारा 15(xxiii)(ङ) के साथ पठित उत्तर प्रदेश पंचायत राज नियम, 1947 के नियम 2, नियम 67, नियम 142 से 144 के कानूनी उपबंधों के अधीन तैयार किया जाता है । परिवार रजिस्टर उत्तर प्रदेश पंचायत राज (परिवार रजिस्टरों का बनाए रखना) नियम, 1970 के अधीन तैयार किया जाता है । यह उल्लेखनीय है कि प्ररूप-क में भी परिवार के किसी सदस्य की मृत्यु की तारीख अभिलिखित की जाती है । एक और अन्य प्ररूप अर्थात् प्ररूप-घ भी है जो जन्म और मृत्यु की तारीख का रजिस्ट्रीकरण करने के लिए है । अत: इन दोनों प्ररूपों में किसी व्यक्ति की मृत्यु की तारीख को अभिलिखित किया जाता है और ये दोनों प्ररूप नियमों के अधीन विहित किए गए हैं । यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि नियम राज्य सरकार द्वारा विरचित किए जाते हैं और विशिष्ट प्रयोजनों के लिए विहित किए गए रजिस्टरों को नियमों के अधीन अधिसूचित किया जाता है । उक्त प्रयोजन के लिए अधिनियम, 1947 की धारा 110(vii) के प्रति निर्देश किया जा सकता है । न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया था :–

> "मेरी राय में, उक्त लोक दस्तावेज के संबंध में एक उपधारणा की जानी चाहिए और इसे मात्र इसलिए अविश्वसनीय नहीं माना जा सकता है यदि ग्राम पंचायत अधिकारी को इसे साबित करने के लिए पेश न किया गया हो । परिवार रजिस्टर की प्रति एक लोक दस्तावेज है और इसकी असलियत के बारे में उपधारणा भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 79 के अधीन स्वीकार की जाती है ।"

34. **शिव पत्ता** बनाम **उत्तर प्रदेश राज्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया गया था कि परिवार रजिस्टर को उत्तर प्रदेश पंचायत राज (परिवार रजिस्टरों का बनाए रखना) नियम, 1970 के अधीन कानूनी कर्तव्यों के निर्वहन में बनाए रखा जाता है । इसी प्रकार, मृत्यु की तारीख जन्म और मृत्यु रजिस्ट्रीकरण अधिनियम, 1969 के अधीन कानूनी कर्तव्य के निर्वहन में बनाए रखी जाती है और यह साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 74 के अर्थांतर्गत एक लोक दस्तावेज है ।

---

[1] 2013 एस. सी. सी. ऑनलाइन इला. 14202.

इन दस्तावेजों की प्रमाणित प्रति साक्ष्य अधिनियम की धारा 70 के अधीन साक्ष्य में ग्राह्य है और अधिनियम की धारा 79 के अधीन इसकी सत्यता की उपधारणा की जाती है । उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि यह साबित करने के लिए किसी साक्ष्य के अभाव में कि यह असत्य है, साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 79 के अधीन इसकी सत्यता की उपधारणा की जानी चाहिए ।

35. अत: ऐसे नियम विसंगत नहीं हैं, जैसा कि श्री भार्गव द्वारा तर्क दिया गया है । इस परिवार रजिस्टर में न केवल जन्म की तारीख अंतर्विष्ट होती है, अपितु परिवार में किसी परिवर्धन का भी अभिलेख रखा जाता है, यद्यपि प्रत्येक मामले में साक्ष्यिक महत्व की परीक्षा किए जाने की आवश्यकता है ।

36. हम उच्च न्यायालय द्वारा कुछ मामलों में अपनाए गए इस व्यापक दृष्टिकोण का अनुमोदन करने में असमर्थ हैं कि परिवार रजिस्टर परिवार के सदस्यों की आयु का अवधारण करने के लिए सुसंगत नहीं है । यह एक तथ्य का प्रश्न है कि परिवार रजिस्टर को कितना साक्ष्यिक महत्व दिया जाना है, किंतु यह कहना कि यह पूर्णतया सुसंगत नहीं है, विधि की सही प्रतिपादना नहीं होगी । रजिस्टर कानून के अधीन विरचित नियमों के अनुसार बनाए रखा जाता है । इस प्रकार, पंचायत के काम-काज के नियमित अनुक्रम में की गई प्रविष्टियां सुसंगत होंगी किंतु इनका अवलंब लेने की सीमा प्रत्येक मामले के विशिष्ट तथ्यों और परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए होगी ।

37. नियमों के नियम 12(3)(iii) के निबंधनों के अनुसार, निगम या नगर पालिका प्राधिकारी या किसी पंचायत द्वारा जारी किया गया जन्म प्रमाणपत्र किशोरावस्था को साबित करने के लिए एक सुसंगत दस्तावेज है । परिवार रजिस्टर एक जन्म प्रमाणपत्र नहीं है । इसलिए यह पूर्ण रूप से नियमों के नियम 12(3) के खंड (iii) के अंतर्गत नहीं आएगा । यहां तक कि अधिनियम, 2015 की धारा 94(2)(ii) में भी आयु का अवधारण करने के लिए किसी पंचायत द्वारा जारी किया गया जन्म प्रमाणपत्र अनुध्यात है ।

38. अपीलार्थी ने अधिनियम, 2000 की धारा 7क के अधीन फाइल किए गए अपने आवेदन में किशोरावस्था का अवलंब केवल विद्यालय छोड़ने के प्रमाणपत्र के आधार पर लेने की ईप्सा की थी । विद्यालय का ऐसा अभिलेख विश्वसनीय नहीं है और केवल किशोरावस्था के अभिवाक् का समर्थन करने के लिए उपाप्त किया गया प्रतीत होता है । अपीलार्थी ने अपने आवेदन में जन्म प्रमाणपत्र की तारीख को निर्दिष्ट नहीं किया है क्योंकि इसे बाद में अभिप्राप्त किया गया था । यह कहने की आवश्यकता नहीं है, किशोरावस्था का अभिवाक् सद्भावी और सत्य रीति में किया जाना चाहिए । यदि किशोरावस्था की ईप्सा करने के लिए अवलंब ऐसे दस्तावेज का लिया गया है, जो विश्वसनीय नहीं है या संदिग्ध प्रकृति का है, तो इस बात को ध्यान में रखते हुए कि अधिनियम एक फायदाप्रद विधान है, अपीलार्थी को किशोर होना नहीं समझा जा सकता है । जैसा कि **बबलू पासी** (उपर्युक्त) वाले मामले में भी अभिनिर्धारित किया गया है, कानून के उपबंधों का निर्वचन उदारतापूर्वक किया जाना चाहिए किंतु इसका फायदा ऐसे अपीलार्थी को प्रदान नहीं किया जा सकता है जो असत्य कथन के साथ न्यायालय में आया है ।

39. अत: हमने यह पाया है कि अपीलार्थी असत्य कथन के साथ न्यायालय में आया है चूंकि उसके द्वारा अवलंब लिए गए दस्तावेज असली और भरोसेमंद नहीं हैं । अत: हमारा यह निष्कर्ष है कि अपीलार्थी को किशोरावस्था का फायदा नहीं दिया जा सकता है । उच्च न्यायालय द्वारा अपनाया गया दृष्टिकोण विधि के अनुसार एक संभाव्य दृष्टिकोण है और इस अपील में किसी हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं है । तद्नुसार, यह अपील खारिज की जाती है ।

अपील खारिज की गई ।

जस.

[2022] 1 उम. नि. प. 375

सत्य सिंह और एक अन्य

बनाम

उत्तराखंड राज्य

[2014 की दांडिक अपील सं. 2374]

15 फरवरी, 2022

न्यायमूर्ति संजीव खन्ना और न्यायमूर्ति बेला एम. त्रिवेदी

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302 और 201 [साक्ष्य अधिनियम, 1872 की धारा 106] – हत्या और साक्ष्य का विलोपन – मृतका द्वारा सायंकाल में अपनी ससुराल के मकान से चला जाना और बाद में जली हुई हालत में उसका शव पाया जाना – कोई प्रत्यक्षदर्शी साक्षी न होना – पारिस्थितिक साक्ष्य – अभियुक्तों (पति और सास) को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – संधार्यता – जहां मामले के तथ्यों और परिस्थितियों तथा साक्षियों के साक्ष्य से यह दर्शित न होता हो कि मृतका की मृत्यु कब और कैसे हुई और अभियोजन पक्ष परिस्थितियों की श्रृंखला को पूर्ण करने में सफल न रहा हो, वहां मात्र संदेह, अटकलबाजी और अनुमान के आधार पर की गई अभियुक्तों की दोषसिद्धि को कायम न रखते हुए दोषमुक्त करना न्यायोचित होगा ।

इस मामले के तथ्य संक्षेप में इस प्रकार हैं कि मृतका शशि देवी का विवाह अभियुक्त-सत्य सिंह के साथ घटना, जो तारीख 27 जून, 2009 की सायं से 28 जून, 2009 की सुबह के बीच घटी थी, की तारीख से 4 वर्ष पूर्व हुआ था । अभियुक्त-इंद्रा देवी, अभियुक्त-सत्य सिंह की माता है । तारीख 28 जून, 2009 को लगभग 8.40 बजे पूर्वाह्न में अभियुक्तों के गांव-गेर के प्रधान, राय सिंह (अभि. सा. 8) ने विरेन्द्र राज, नायब तहसीलदार, राजस्व पुलिस को दूरभाष पर सूचित किया कि एक महिला की दाह-क्षतियों के कारण मृत्यु हो गई है । अत: नायब तहसीलदार (अभि. सा. 11) उक्त इत्तिला की साधारण डायरी में प्रविष्टि करने के पश्चात् घटनास्थल अर्थात् छान (झोपड़ी) पर पहुंचा और देखा कि छान के कमरे में मृतका का शव जली हुई हालत में पड़ा

हुआ था । मृतका का पिता भी अभियुक्त-सत्य सिंह से फोन काल प्राप्त होने पर घटनास्थल पर पहुंचा । उसने नायब तहसीलदार को अभियुक्त-सत्य सिंह (पति), इंद्रा देवी (सास) और संगीता देवी (ननद) के विरुद्ध एक लिखित शिकायत दी, जिसे राजस्व पुलिस द्वारा रजिस्ट्रीकृत किया गया । उक्त नायब तहसीलदार ने पंचनामा तैयार करने और अन्य कार्यवाहियां करने के पश्चात् अभियुक्त-सत्य सिंह को गिरफ्तार किया । उसने अन्य साक्षियों के कथन भी अभिलिखित किए । उसके पश्चात्, उसका स्थानांतरण होने के पश्चात् आगामी अन्वेषण एक अन्य नायब तहसीलदार को सौंपा गया । उक्त अन्वेषक अधिकारी ने अन्वेषण पूर्ण करने के पश्चात् अभियुक्त-सत्य सिंह और इंद्रा देवी के विरुद्ध, अभियुक्त संगीता देवी को फरार घोषित करते हुए, भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और 201 के अधीन अपराधों के लिए मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, टिहरी गढ़वाल के न्यायालय में आरोप पत्र फाइल किया । उक्त मामला सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय होने के कारण इसे विचारण के लिए सेशन न्यायालय, टिहरी गढ़वाल को सुपुर्द किया गया । विचारण न्यायालय द्वारा अभिलेख पर के साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् दोनों अभियुक्तों को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया । विचारण न्यायालय के निर्णय से व्यथित होकर अभियुक्तों द्वारा उच्च न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्च न्यायालय द्वारा दोषसिद्धि और दंडादेश के आदेश को कायम रखा गया । अभियुक्तों द्वारा उच्च न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – स्वीकार्य रूप से अभियोजन का संपूर्ण पक्षकथन पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित था क्योंकि अभिकथित घटना का कोई प्रत्यक्षदर्शी साक्षी नहीं था । यद्यपि अभियुक्तों ने यह कहानी प्रतिपादित करने की कोशिश की थी कि मृतका ने आत्महत्या की है, तो भी दोनों न्यायालयों ने उक्त कहानी को डा. संजय कावडवल, जिसने मृतका की मरणोत्तर परीक्षा की थी और मृतका के शव पर पाई गई क्षतियां अभिलिखित की थी, जो मृत्यु-पूर्व प्रकृति की थीं, के विश्वसनीय साक्ष्य को ध्यान में रखते हुए ठीक ही स्वीकार नहीं किया था । उक्त डाक्टर ने यह राय व्यक्त की थी कि मृत्यु का कारण मृत्यु-पूर्व की क्षतियों की

वजह से हुआ रक्तस्राव और सदमा था । उक्त डाक्टर की यह साबित करने के लिए प्रतिपरीक्षा की गई थी कि क्षतियां मृत्यु-पूर्व की नहीं थीं और केवल जलने के कारण पहुंची थीं, तथापि, डाक्टर ने इस बात से स्पष्ट रूप से इनकार किया था और आगे यह भी स्पष्ट किया था कि जलने के कारण शरीर पर कैसे और कब फफोले बनते हैं । डाक्टर के उक्त साक्ष्य से संदेह की कोई गुंजाइश नहीं रह जाती है कि मृतका की मृत्यु एक मानववध मृत्यु थी । यह बात न्यायालय को अगले इस प्रश्न पर ले जाती है कि शशि की मृत्यु कैसे हुई थी और किसने कारित की थी । अभियोजन पक्ष ने अभियुक्तों के विरुद्ध लगाए गए आरोपों को साबित करने के लिए 11 साक्षियों की परीक्षा की थी । तथापि, किसी भी साक्षी को अभिकथित घटना के बारे में कोई जानकारी नहीं थी । अभि. सा. 1 अर्थात् जोंतरा देवी, मृतका की चाची ने, अन्य बातों के साथ-साथ, यह अभिसाक्ष्य दिया था कि 27 तारीख को लगभग 11.00 बजे पूर्वाह्न में सत्य सिंह ने यह पूछने के लिए उसे एक फोन काल की थी कि क्या शशि उसके घर आई है और अगले दिन उसे यह पता चला कि शशि की जलने के कारण मृत्यु हो गई है । इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया था कि अभियुक्त सत्य सिंह और उसके परिवार के सभी सदस्यों ने कभी भी उसकी मौजूदगी में दहेज की कोई मांग नहीं की थी, न ही उसकी मौजूदगी में उनके द्वारा कोई हमला किया गया था । मृतका के पिता-शरद सिंह (अभि. सा. 2) ने, निस्संदेह, अपने साक्ष्य में यह कथन किया था कि अभियुक्त अर्थात् मृतका का पति और उसके परिवार के सदस्य उसकी पुत्री-शशि को दहेज के लिए तंग करते थे और बहुत बार शशि भागकर उसके घर आती रहती थी । उसने यह भी कथन किया था कि प्रश्नगत घटना से एक माह पूर्व शशि उसके घर आई थी और उसे बताया था कि अभियुक्तों द्वारा दहेज के लिए उस पर हमला किया जाता है और गाली-गलौच की जाती है । जहां तक प्रश्नगत घटना का संबंध है, उसने यह कथन किया था कि सत्य सिंह ने सुबह लगभग 10.00-11.00 बजे उसे यह सूचित करने के लिए फोन किया था कि शशि ने स्वयं को आग लगाकर आत्महत्या कर ली है । इसलिए वह ग्रामवासियों के साथ अभियुक्तों की छान पर गया और देखा कि वहां शशि का शव जली हुई हालत में पड़ा हुआ था । उसने प्रश्नगत घटना के संबंध में पुलिस को लिखित शिकायत दी थी । उसने प्रतिपरीक्षा में यह

स्वीकार किया था कि उसने मृतका के शव पर कभी कोई क्षति नहीं देखी थी और न ही उसने अभियुक्तों द्वारा अभिकथित रूप से तंग किए जाने के बारे में कोई शिकायत दर्ज की थी । उसने यह भी कथन किया था कि छान अर्थात् अभियुक्तों का गाय बांधने का स्थान गांव गेर में अभियुक्तों के मकान से डेढ़ घंटे की दूरी पर स्थित था और गांव तथा छान के बीच में बांज, बुरांश का एक जंगल था । उसने यह भी कथन किया था कि सत्य सिंह का पिता गूंगा और बहरा था । उसने यह भी स्वीकार किया था कि पूर्ववर्ती सायंकाल में जब जोंतरा देवी ने उसे सत्य सिंह से शशि के बारे में पूछताछ करने के लिए आईफोन काल के बारे में सूचित किया था, तब वह यह सोचकर अभियुक्तों के गांव नहीं गया था कि वे ऐसा झगड़ा करते रहते हैं । उसने यह भी स्वीकार किया कि सत्य सिंह और उसके परिवार के सभी सदस्य उस समय मौजूद थे, जब वह घटनास्थल अर्थात् छान पर पहुंचा था । उसने यह स्वीकार किया था कि वह नहीं जानता कि उसकी पुत्री कैसे जली थी, तथापि, उसने इस सुझाव से इनकार किया कि शशि को चूल्हे से आग लग गई थी । उसने अभियुक्तों द्वारा उसकी पुत्री को तंग न करने की बात से भी इनकार किया । अभियोजन पक्ष द्वारा मृतका की माता, अभि. सा. 3 भागदेयी देवी, मृतका के चाचा अभि. सा. 5 (भरत सिंह) और अन्य ग्रामवासियों अभि. सा. 4 (भगत सिंह), अभि. सा. 6 (बलबीर सिंह) और अभि. सा. 7 (गब्बर सिंह) की परीक्षा की गई थी, तथापि, किसी को भी यह जानकारी नहीं थी कि कैसे, कब और कहां मृतका की हत्या की गई थी और जलाया गया था । यह उल्लेख करना भी अति महत्वपूर्ण है कि अन्वेषक अधिकारियों गुणानंद बहुगुणा (अभि. सा. 10) और विरेन्द्र राज (अभि. सा. 11) द्वारा किया गया संपूर्ण अन्वेषण सरसरी और लापरवाह रीति में किया गया था । गांव के प्रधान, श्री राय सिंह से सूचना प्राप्त होने पर नायब तहसीलदार (विरेन्द्र राज) घटनास्थल अर्थात् छान पर पहुंचा था और शिकायतकर्ता शरद सिंह की प्रेरणा पर अभियुक्त सत्य सिंह, इंद्रा देवी और संगीता देवी के विरुद्ध शिकायत रजिस्ट्रीकृत की थी, तथापि, यह अन्वेषण करने का कष्ट नहीं किया था कि घटना कैसे घटित हुई थी । दोनों में से किसी भी अन्वेषक अधिकारी द्वारा इस बारे में कोई अन्वेषण नहीं किया गया था कि मृतका की हत्या किस स्थान पर की गई थी और उसे जलाया गया था और कैसे तथा किसके द्वारा

उसके जले हुए शरीर को छान में लाया गया था । यद्यपि, अन्वेषक अधिकारी के अनुसार, यह संदेह किया गया था कि अपराध सत्य सिंह के पिता, अतर सिंह द्वारा किया गया था, फिर भी उसे कभी भी मामले में आलिप्त नहीं किया गया था । अन्वेषण के दौरान अभियुक्तों से अपराध में आलिप्त करने वाली कोई वस्तु बरामद नहीं की गई थी और तलाश नहीं की गई थी तथा अभियुक्तों को अभिकथित अपराध से संपृक्त करने के लिए सटीक साक्ष्य तो दूर कोई साक्ष्य ही एकत्रित करने का प्रयत्न नहीं किया गया था । संपूर्ण परिस्थितियों और अभिलेख पर के साक्ष्य के आधार पर मृतका के माता-पिता के साक्ष्य से अधिक से अधिक यह कहा जा सकता है कि अभियुक्तों द्वारा मृतका को तंग किया गया था, हालांकि विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन कोई आरोप विरचित नहीं किया गया था । इसके अतिरिक्त, अभिलेख पर के साक्ष्य से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि मृतका शशि अभिकथित घटना की पूर्ववर्ती संध्या में मकान से गई थी और पूरी रात्रि के दौरान वह पाई नहीं थी, तो भी इस परिस्थिति को स्वत: इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए पर्याप्त सबूत होना नहीं कहा जा सकता है कि अभियुक्तों ने शशि की हत्या की थी और जलाया था, जैसा कि अभिकथन किया गया है । विधि की यह स्थिर स्थिति है कि परिस्थितियां चाहे कितनी भी प्रबल क्यों न हों, सबूत का स्थान नहीं ले सकती हैं और अभियोजन पक्ष द्वारा अभियुक्त की दोषिता को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया जाना चाहिए । उक्त सिद्धांतों को प्रस्तुत मामले के तथ्यों पर लागू करते हुए, इस न्यायालय की यह राय है कि अभियोजन पक्ष परिस्थितियों की ऐसी संपूर्ण श्रृंखला को साबित करने में पूरी तरह से असफल रहा है, जिससे अचूक यह निष्कर्ष निकलता हो कि अभिकथित कृत्य केवल अभियुक्तों द्वारा कारित किया गया था, किसी और द्वारा नहीं । राज्य की ओर से विद्वान् अधिवक्ता श्री मिश्रा द्वारा साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 का लिया गया अवलंब भी अनुचित है । क्योंकि धारा 106 का आशय अभियुक्त की दोषिता को साबित करने के लिए उसके कृत्य का निर्वहन करने से मुक्त करना नहीं है । प्रस्तुत मामले में, अभियोजन पक्ष अभियुक्तों के विरुद्ध यथाअभिकथित मूलभूत तथ्यों को साबित करने में असफल रहा था, इसलिए साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 में अंतर्विष्ट

उपबंधों को लागू करते हुए इस भार को अभियुक्तों पर स्थानांतरित नहीं किया जा सकता था । अभियोजन पक्ष द्वारा परिस्थितियों की ऐसी संपूर्ण श्रृंखला को साबित करने के लिए कोई सटीक साक्ष्य पेश नहीं करने के कारण, जो इस न्यायालय को इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए बाध्य कर सके कि अभियुक्तों ने ही अभिकथित अपराध कारित किया था, इस न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करने में कोई संकोच नहीं है कि विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने अभियुक्तों को अभिकथित अपराध के लिए मात्र संदेह, अटकलबाजी और अनुमान के आधार दोषसिद्ध करके विधि की गंभीर गलती कारित की थी । (पैरा 6, 7, 8, 9, 10, 11, 15 और 16)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2013]	(2013) 7 एस. सी. सी. 192 : **मजेन्द्रन लंगेस्वरन** बनाम **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र दिल्ली) और एक अन्य** ;	14
[1992]	(1992) 2 एस. सी. सी. 86 : **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **अशोक कुमार श्रीवास्तव** ;	13
[1985]	[1985] 1 उम. नि. प. 295 = (1984) 4 एस. सी. सी. 116 : **शरद बिरधीचंद सारदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य** ;	11
[1956]	ए. आई. आर. 1956 एस. सी. 404 : **शंभुनाथ मेहरा** बनाम **अजमेर राज्य** ।	15

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2014 की दांडिक अपील सं. 2374.

2010 की कारागार दांडिक अपील सं. 64 में उत्तराखंड उच्च न्यायालय, नैनीताल के तारीख 29 अगस्त, 2013 के निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री शिखिल सूरी

प्रत्यर्थी की ओर से श्री कृष्णम मिश्रा

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति बेला एम. त्रिवेदी ने दिया ।

न्या. त्रिवेदी – अपीलार्थी-अभियुक्तों द्वारा फाइल की गई यह अपील 2010 की दांडिक कारागार अपील सं. 64 में उत्तराखंड उच्च न्यायालय, नैनीताल द्वारा तारीख 29 अगस्त, 2013 को पारित किए गए उस निर्णय से उद्भूत हुई है, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने उक्त अपील खारिज कर दी थी और 2009 के सेशन विचारण सं. 22 में जिला और सेशन न्यायाधीश टिहरी गढ़वाल द्वारा अधिनिर्णीत दोषसिद्धि और दंडादेश को कायम रखा था । सेशन न्यायालय द्वारा दोनों अपीलार्थी-अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 और धारा 201 के अधीन दोषसिद्ध किया गया था और भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन अपराध के लिए आजीवन कारावास भुगतने और 20,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने तथा भारतीय दंड संहिता की धारा 201 के अधीन छह वर्ष की अवधि का कठोर कारावास भुगतने और 10,000/- रुपए के जुर्माने का संदाय करने का दंडादेश दिया गया था ।

2. अभियोजन का पक्षकथन विचारण न्यायालय के समक्ष संक्षेप में यह था कि श्रीमती शशि देवी का अभियुक्त-सत्य सिंह के साथ विवाह घटना, जो तारीख 27 जून, 2009 की सायं से 28 जून, 2009 की सुबह के बीच किसी समय घटी थी, की तारीख से चार वर्ष पूर्व हुआ था । अभियुक्त-इंद्रा देवी, अभियुक्त-सत्य सिंह की माता है । तारीख 28 जून, 2009 को लगभग 8.40 बजे पूर्वाह्न में राय सिंह अभियुक्तों के गांव-गेर के प्रधान (अभि. सा. 8), ने विरेन्द्र राज (अभि. सा. 11), नायब तहसीलदार, राजस्व पुलिस को दूरभाष पर यह सूचित किया कि एक महिला की दाह-क्षतियों के कारण मृत्यु हो गई है । अत: नायब तहसीलदार-विरेन्द्र राज (अभि. सा. 11) उक्त इत्तिला की साधारण डायरी में रपट सं. 28/42 द्वारा प्रविष्टि करने के पश्चात् घटनास्थल अर्थात् छान (झोपड़ी) पर पहुंचा और देखा कि छान के कमरे में मृतका का शव जली हुई हालत में पड़ा हुआ था । अभियोजन का यह भी पक्षकथन है कि मृतका का पिता, शरद सिंह भी अभियुक्त-सत्य सिंह से फोन काल प्राप्त होने पर घटनास्थल पर पहुंचा । उक्त शरद सिंह ने

नायब तहसीलदार को अभियुक्त-सत्य सिंह (पति), इंद्रा देवी (सास) और संगीता देवी (ननद) के विरुद्ध एक लिखित शिकायत दी, जिसे राजस्व पुलिस थाना, बयार गांव, जिला टिहरी गढ़वाल में तारीख 28 जून, 2009 को लगभग 4.50 बजे अपराह्न में 2009 के अपराध मामला सं. 16 के रूप में रजिस्ट्रीकृत किया गया । मृत्युसमीक्षा की कार्यवाहियां करने के पश्चात् शव को मुहरबंद किया गया और मरणोत्तर परीक्षा के लिए बौशारी अस्पताल ले जाया गया । उक्त नायब तहसीलदार ने पंचनामा तैयार करने और अन्य कार्यवाहियां करने के पश्चात् अभियुक्त-सत्य सिंह को गिरफ्तार किया । उसने अन्य साक्षियों के कथन भी अभिलिखित किए । उसके पश्चात्, उसका स्थानांतरण होने के पश्चात् आगामी अन्वेषण नायब तहसीलदार, गुणानंद बहुगुणा (अभि. सा. 10) को सौंपा गया । उक्त अन्वेषक अधिकारी ने अन्वेषण पूर्ण करने के पश्चात् अभियुक्त-सत्य सिंह और इंद्रा देवी के विरुद्ध, अभियुक्त संगीता देवी को फरार घोषित करते हुए, भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और 201 के अधीन अपराधों के लिए मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, टिहरी गढ़वाल के न्यायालय में आरोप पत्र फाइल किया ।

3. उक्त मामला सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय होने के कारण इसे विचारण के लिए सेशन न्यायालय, टिहरी गढ़वाल को सुपुर्द किया गया । दोनों अभियुक्तों ने उनके विरुद्ध लगाए गए आरोपों से इनकार करने के पश्चात् अभियोजन पक्ष ने आरोपों को साबित करने के लिए 11 साक्षियों की परीक्षा करके मौखिक साक्ष्य के साथ-साथ और दस्तावेजी साक्ष्य भी प्रस्तुत किया । अभियोजन पक्ष का साक्ष्य पूर्ण होने के पश्चात् अभियुक्त-सत्य सिंह ने विचारण न्यायालय के समक्ष दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभिलिखित अपने कथन में, अन्य बातों के साथ-साथ, यह कथन किया कि उनके समाज में दहेज की कोई प्रथा नहीं है और वह नहीं जानता कि उसकी पत्नी शशि की मृत्यु कैसे हुई । उसने यह भी कथन किया कि वह गांव के अन्य लोगों के साथ पूरी रात शशि को ढूंढ़ रहा था किंतु वह नहीं पाई थी । उसके अनुसार, शशि ने संभवत: आत्महत्या की थी । अभियुक्त-इंद्रा देवी ने यह कथन किया कि चूंकि वह सत्य सिंह की माता है, इसलिए उसे मामले में मिथ्या रूप से फंसाया गया है । विचारण न्यायालय ने

अभिलेख पर के साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् दोनों अभियुक्तों को तारीख 11 अक्तूबर, 2010 के आदेश द्वारा इसमें ऊपर उल्लिखित अनुसार दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया, जिसे उच्च न्यायालय द्वारा आक्षेपित आदेश द्वारा कायम रखा गया ।

4. अपीलार्थी-अभियुक्तों की ओर से उच्चतम न्यायालय विधिक सेवाएं समिति के माध्यम से हाजिर होने वाले विद्वान् अधिवक्ता, श्री शिखिल सूरी ने जोरदार रूप से यह दलील दी कि दोनों न्यायालयों अर्थात् विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने अपीलार्थियों को दोषसिद्ध करने में गंभीर गलती कारित की थी, यद्यपि अपीलार्थियों के विरुद्ध लगाए गए आरोपों को साबित करने के लिए अभियोजन पक्ष द्वारा कोई सटीक साक्ष्य प्रस्तुत नहीं किया गया था । उनके अनुसार, अभियोजन पक्ष द्वारा न तो उस रीति को, जिसमें अभिकथित घटना घटी थी, साबित किया गया था और न ही उस स्थान को, जिस पर मृतका को अभिकथित रूप से मारा गया था और जला दिया गया था, साबित किया गया था । उन्होंने यह भी दलील दी कि चूंकि अपीलार्थी मृतका का पति और सास हैं, इसीलिए उन्हें गिरफ्तार किया गया था और मात्र संदेह, अटकलबाजी और अनुमान के आधार पर दोषसिद्ध किया गया था । विचारण के दौरान अभिलिखित किए गए साक्षियों के साक्ष्य की ओर इस न्यायालय का ध्यान दिलाते हुए उन्होंने यह दलील दी कि यह मामला पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित था क्योंकि अभिकथित घटना का कोई प्रत्यक्षदर्शी साक्षी नहीं था और अभियोजन पक्ष अभियुक्तों को दोषी ठहराने के लिए परिस्थितियों की संपूर्ण श्रृंखला को साबित करने में असफल रहा था ।

5. तथापि, प्रत्यर्थी-उत्तराखंड राज्य की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अधिवक्ता, श्री कृष्णम मिश्रा ने यह दलील दी कि दो न्यायालयों द्वारा अभिलिखित तथ्यों के निष्कर्ष होने के कारण यह न्यायालय भारत के संविधान के अनुच्छेद 36 के अधीन सीमित अधिकारिता का प्रयोग करते हुए साक्ष्य का पुनर्मूल्यांकन नहीं कर सकता है और एक भिन्न निष्कर्ष नहीं निकाल सकता है । श्री मिश्रा ने यह भी दलील दी कि अभियोजन पक्ष ने साक्षियों की यह साबित करने के लिए परीक्षा की थी कि अभियुक्तों द्वारा मृतका को तंग किया गया था और

घटना के पूर्ववर्ती दिन भी मृतका और अभियुक्तों के बीच झगड़ा हुआ था, जिसके परिणामस्वरूप मृतका को घर छोड़ना पड़ा था । श्री मिश्रा के अनुसार, अभियुक्तों ने अन्वेषक अधिकारी को यह कहानी प्रतिपादित करके भ्रमित करने की कोशिश की थी कि शशि ने आत्महत्या की है, तथापि, डाक्टर अर्थात् संजय कावडवल (अभि. सा. 9) के साक्ष्य से और मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट में वर्णित क्षतियों से यह सम्यक् रूप से साबित हुआ था कि शशि के शव पर पाई गई क्षतियां मृत्यु-पूर्व की थीं और उसकी मृत्यु, मृत्यु-पूर्व की क्षतियों के कारण हुए रक्तस्राव और सदमे की वजह से हुई थी । उन्होंने साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 को लागू करते हुए यह दलील दी कि अभियुक्तों द्वारा अपने आगे के कथन में कोई स्पष्टीकरण नहीं दिया गया था कि शशि ने पूर्ववर्ती दिन उनका घर क्यों छोड़ा था और वे पूरी रात क्या करते रहे थे, जब शशि नहीं पाई थी ।

6. अब प्रारंभ में यह उल्लेख किया जा सकता है कि स्वीकार्य रूप से अभियोजन का संपूर्ण पक्षकथन पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित था क्योंकि अभिकथित घटना का कोई प्रत्यक्षदर्शी साक्षी नहीं था । यद्यपि अभियुक्तों ने यह कहानी प्रतिपादित करने की कोशिश की थी कि मृतका ने आत्महत्या की है, तो भी दोनों न्यायालयों ने उक्त कहानी को डा. संजय कावडवल, जिसने मृतका की मरणोत्तर परीक्षा की थी और मृतका के शव पर पाई गई क्षतियां अभिलिखित की थी, जो मृत्यु-पूर्व प्रकृति की थीं, के विश्वसनीय साक्ष्य को ध्यान में रखते हुए ठीक ही स्वीकार नहीं किया था । मरणोत्तर परीक्षा रिपोर्ट में अभिलिखित मृत्यु-पूर्व की क्षतियां निम्नलिखित थीं :–

(i) अनुकपाल-अस्थि पर 3 सें. मी. x 3 सें. मी. का अस्थि-भंग ।

(ii) बाईं तरफ नीचे ह्यूमरस (कम्पाउंड) का अस्थि-भंग ।

(iii) उदर 10 सें. मी. x 4 सें. मी. फटा हुआ था और अंतड़िया बाहर निकली हुई थीं ।

(iv) संपूर्ण शरीर काला पड़ा हुआ था, झुलसा हुआ था, फूला हुआ था, चर्मपत्र की तरह दिखाई दे रहा था और मांसपेशियां दिखाई पड़ रही थीं । सिर के बाल जले हुए थे ।

उक्त डाक्टर ने यह राय व्यक्त की थी कि मृत्यु का कारण मृत्यु-पूर्व की क्षतियों की वजह से हुआ रक्तस्राव और सदमा था । उक्त डाक्टर की यह साबित करने के लिए प्रतिपरीक्षा की गई थी कि क्षतियां मृत्यु-पूर्व की नहीं थीं और केवल जलने के कारण पहुंची थीं, तथापि, डाक्टर ने इस बात से स्पष्ट रूप से इनकार किया था और आगे यह भी स्पष्ट किया था कि जलने के कारण शरीर पर कैसे और कब फफोले बनते हैं । डाक्टर के उक्त साक्ष्य से संदेह की कोई गुंजाइश नहीं रह जाती है कि मृतका की मृत्यु एक मानववध मृत्यु थी ।

7. यह बात न्यायालय को अगले इस प्रश्न पर ले जाती है कि शशि की मृत्यु कैसे हुई थी और किसने कारित की थी । अभियोजन पक्ष ने अभियुक्तों के विरुद्ध लगाए गए आरोपों को साबित करने के लिए 11 साक्षियों की परीक्षा की थी । तथापि, किसी भी साक्षी को अभिकथित घटना के बारे में कोई जानकारी नहीं थी । अभि. सा. 1 अर्थात् जोंतरा देवी, मृतका की चाची ने, अन्य बातों के साथ-साथ, यह अभिसाक्ष्य दिया था कि 27 तारीख को लगभग 11.00 बजे पूर्वाह्न में सत्य सिंह ने यह पूछने के लिए उसे एक फोन काल की थी कि क्या शशि उसके घर आई है और अगले दिन उसे यह पता चला कि शशि की जलने के कारण मृत्यु हो गई है । इस साक्षी ने अपनी प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया था कि अभियुक्त सत्य सिंह और उसके परिवार के सभी सदस्यों ने कभी भी उसकी मौजूदगी में दहेज की कोई मांग नहीं की थी, न ही उसकी मौजूदगी में उनके द्वारा कोई हमला किया गया था ।

8. मृतका के पिता-शरद सिंह (अभि. सा. 2) ने, निस्संदेह, अपने साक्ष्य में यह कथन किया था कि अभियुक्त अर्थात् मृतका का पति और उसके परिवार के सदस्य उसकी पुत्री-शशि को दहेज के लिए तंग करते थे और बहुत बार शशि भागकर उसके घर आती रहती थी । उसने यह भी कथन किया था कि प्रश्नगत घटना से एक माह पूर्व शशि उसके घर आई थी और उसे बताया था कि अभियुक्तों द्वारा दहेज के लिए उस पर हमला किया जाता है और गाली-गलौच की जाती है । जहां तक प्रश्नगत घटना का संबंध है, उसने यह कथन किया था कि सत्य सिंह ने सुबह लगभग 10.00-11.00 बजे उसे यह सूचित करने के लिए फोन किया था कि शशि ने स्वयं को आग लगाकर आत्महत्या कर ली है । इसलिए वह

ग्रामवासियों के साथ अभियुक्तों की छान पर गया और देखा कि वहां शशि का शव जली हुई हालत में पड़ा हुआ था । उसने प्रश्नगत घटना के संबंध में पुलिस को लिखित शिकायत दी थी । उसने प्रतिपरीक्षा में यह स्वीकार किया था कि उसने मृतका के शव पर कभी कोई क्षति नहीं देखी थी और न ही उसने अभियुक्तों द्वारा अभिकथित रूप से तंग किए जाने के बारे में कोई शिकायत दर्ज की थी । उसने यह भी कथन किया था कि छान अर्थात् अभियुक्तों का गाय बांधने का स्थान गांव गेर में अभियुक्तों के मकान से डेढ़ घंटे की दूरी पर स्थित था और गांव तथा छान के बीच में बांज, बुरांश का एक जंगल था । उसने यह भी कथन किया था कि सत्य सिंह का पिता गूंगा और बहरा था । उसने यह भी स्वीकार किया था कि पूर्ववर्ती सायंकाल में जब जौंतरा देवी ने उसे सत्य सिंह से शशि के बारे में पूछताछ करने के लिए आई फोन काल के बारे में सूचित किया था, तब वह यह सोचकर अभियुक्तों के गांव नहीं गया था कि वे ऐसा झगड़ा करते रहते हैं । उसने यह भी स्वीकार किया कि सत्य सिंह और उसके परिवार के सभी सदस्य उस समय मौजूद थे, जब वह घटनास्थल अर्थात् छान पर पहुंचा था । उसने यह स्वीकार किया था कि वह नहीं जानता कि उसकी पुत्री कैसे जली थी, तथापि, उसने इस सुझाव से इनकार किया कि शशि को चूल्हे से आग लग गई थी । उसने अभियुक्तों द्वारा उसकी पुत्री को तंग न करने की बात से भी इनकार किया ।

9. अभियोजन पक्ष द्वारा मृतका की माता, अभि. सा. 3 भागदेयी देवी, मृतका के चाचा अभि. सा. 5 (भरत सिंह) और अन्य ग्रामवासियों अभि. सा. 4 (भगत सिंह), अभि. सा. 6 (बलबीर सिंह) और अभि. सा. 7 (गब्बर सिंह) की परीक्षा की गई थी, तथापि, किसी को भी यह जानकारी नहीं थी कि कैसे, कब और कहां मृतका की हत्या की गई थी और जलाया गया था ।

10. यह उल्लेख करना भी अति महत्वपूर्ण है कि अन्वेषक अधिकारियों गुणानंद बहुगुणा (अभि. सा. 10) और विरेन्द्र राज (अभि. सा. 11) द्वारा किया गया संपूर्ण अन्वेषण सरसरी और लापरवाह रीति में किया गया था । गांव के प्रधान, श्री राय सिंह से सूचना प्राप्त होने पर नायब तहसीलदार (विरेन्द्र राज) घटनास्थल अर्थात् छान पर पहुंचा

था और शिकायतकर्ता शरद सिंह की प्रेरणा पर अभियुक्त सत्य सिंह, इंद्रा देवी और संगीता देवी के विरुद्ध शिकायत रजिस्ट्रीकृत की थी, तथापि, यह अन्वेषण करने का कष्ट नहीं किया था कि घटना कैसे घटित हुई थी । दोनों में से किसी भी अन्वेषक अधिकारी द्वारा इस बारे में कोई अन्वेषण नहीं किया गया था कि मृतका की हत्या किस स्थान पर की गई थी और उसे जलाया गया था और कैसे तथा किसके द्वारा उसके जले हुए शरीर को छान में लाया गया था । यद्यपि, अन्वेषक अधिकारी के अनुसार, यह संदेह किया गया था कि अपराध सत्य सिंह के पिता, अतर सिंह द्वारा किया गया था, फिर भी उसे कभी भी मामले में आलिप्त नहीं किया गया था । अन्वेषण के दौरान अभियुक्तों से अपराध में आलिप्त करने वाली कोई वस्तु बरामद नहीं की गई थी और तलाश नहीं की गई थी तथा अभियुक्तों को अभिकथित अपराध से संपृक्त करने के लिए सटीक साक्ष्य तो दूर कोई साक्ष्य ही एकत्रित करने का प्रयत्न नहीं किया गया था ।

11. संपूर्ण परिस्थितियों और अभिलेख पर के साक्ष्य के आधार पर मृतका के माता-पिता के साक्ष्य से अधिक से अधिक यह कहा जा सकता है कि अभियुक्तों द्वारा मृतका को तंग किया गया था, हालांकि विचारण न्यायालय द्वारा अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 498क के अधीन कोई आरोप विरचित नहीं किया गया था । इसके अतिरिक्त, अभिलेख पर के साक्ष्य से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि मृतका शशि अभिकथित घटना की पूर्ववर्ती संध्या में मकान से गई थी और पूरी रात्रि के दौरान वह पाई नहीं थी, तो भी इस परिस्थिति को स्वत: इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए पर्याप्त सबूत होना नहीं कहा जा सकता है कि अभियुक्तों ने शशि की हत्या की थी और जलाया था, जैसा कि अभिकथन किया गया है । विधि की यह स्थिर स्थिति है कि परिस्थितियां चाहे कितनी भी प्रबल क्यों न हों, सबूत का स्थान नहीं ले सकती हैं और अभियोजन पक्ष द्वारा अभियुक्त की दोषिता को युक्तियुक्त संदेह के परे साबित किया जाना चाहिए । इस प्रक्रम पर, हम **शरद बिरधीचंद सारदा** बनाम **महाराष्ट्र राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय द्वारा अधिकथित किए गए स्वर्णिम सिद्धांतों का उल्लेख

[1] [1985] 1 उम. नि. प. 295 = (1984) 4 एस. सी. सी. 116.

करना चाहेंगे । इस न्यायालय ने "की जानी चाहिएं" और "की जा सकती हैं" के बीच विभेद करते हुए पैरा 153 में निम्नलिखित मत व्यक्त किया था :–

"153. इस विनिश्चय के सूक्ष्म विश्लेषण से पता चलता है कि अभियुक्त के विरुद्ध मामले को पूरी तरह सिद्ध मानने से पहले निम्नलिखित शर्तें पूरी होनी चाहिएं :

(1) वे परिस्थितियां, जिनसे दोषिता का निष्कर्ष निकाला जाना है, पूरी तरह सिद्ध की जानी चाहिएं ;

यहां यह उल्लेख किया जा सकता है कि इस न्यायालय ने यह इंगित किया था कि संबंधित परिस्थितियां 'सिद्ध करनी होंगी' या 'की जानी चाहिएं' न कि की जा सकती हैं । 'साबित की जा सकती हैं' और 'साबित करनी होंगी या की जानी चाहिएं' में केवल व्याकरणिक अंतर ही नहीं है, बल्कि विधिक अंतर है, जैसा कि इस न्यायालय ने शिवाजी साहबराव बोबडे और एक अन्य **बनाम** महाराष्ट्र राज्य {[1973] 3 उम. नि. प. 1011 = (1973) 2 एस. सी. सी. 793} वाले मामले में अभिनिर्धारित किया गया था । उसमें न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया था –

'निश्चय ही यह एक प्राथमिक सिद्धांत है कि इससे पहले कि अभियुक्त को दोषसिद्ध कर सकें, अभियुक्त दोषी 'होना चाहिए' न कि केवल 'दोषी हो सकता है' और 'हो सकता है' तथा 'होना चाहिए' के बीच मानसिक अंतर बहुत लंबा है और अस्पष्ट अटकलों को निश्चित निष्कर्षों से अलग करता है ।'

(2) इस प्रकार सिद्ध किए गए तथ्य केवल अभियुक्त की दोषिता की कल्पना के अनुरूप होने चाहिएं अर्थात् इस बात के सिवाय कि अभियुक्त दोषी है, किसी अन्य कल्पना के पोषक नहीं होने चाहिएं ;

(3) परिस्थितियां निश्चायक प्रकृति और प्रवृत्ति की होनी चाहिएं ;

(4) उन्हें साबित की जाने वाली हर उप-कल्पना के

सिवाय हर संभावित उप-कल्पना अपवर्जित करनी चाहिए ; और

(5) साक्ष्य की श्रृंखला इतनी पूर्ण होनी चाहिए कि अभियुक्त की निर्दोषिता के अनुरूप निष्कर्ष निकालने के लिए कोई भी युक्तियुक्त आधार न बचे और उससे यह दर्शित होता हो कि संपूर्ण मानवीय अधिसंभाव्यता में वह कार्य अभियुक्त द्वारा ही किया गया होगा ।"

12. आगे पैरा 158 से 160 में निम्नलिखित मत व्यक्त किया गया था :–

"158. अपने इस तर्क को पूरा करने के लिए कि यदि प्रतिरक्षा-पक्ष का कथन झूठा है तो यह भी अभियोजन पक्ष के कथन के समर्थन में एक अतिरिक्त संपर्क-सूत्र होगा, अपर महासालिसिटर ने देवनंदन मिश्रा **बनाम** बिहार राज्य {[1955] 2 एस. सी. आर. 570/582} वाले मामले में इस न्यायालय के विनिश्चय का अवलंब लेते हुए जो बहुत ही प्रबल तर्क दिया है, यहां उस पर ध्यान देना आवश्यक है । विद्वान् अपर महा सालिसिटर के प्रति ससम्मान हम उस निवेदन से सहमत नहीं हैं जो उन्होंने उपरोक्त मामले के बारे में किया है । उसका सुसंगत भाग इस प्रकार है –

'किंतु इस प्रकार के मामले में जहां उल्लिखित विभिन्न सूत्र समाधानप्रद रूप से सिद्ध कर दिए गए हैं और परिस्थितियां अपीलार्थी को संभाव्य हमलावर, युक्तियुक्त निश्चितता और समय तथा स्थिति की बाबत मृतक के सानिध्य में बताती हैं .....स्पष्टीकरण की ऐसी अनुपस्थिति या मिथ्या स्पष्टीकरण में अतिरिक्त सूत्र श्रृंखला को अपने आप पूरा कर देगा ।'

159. यह देखने में आता है कि इस न्यायालय ने इस स्पष्टीकरण की अनुपस्थिति या मिथ्या स्पष्टीकरण पर विचार करते समय यह अभिनिर्धारित किया कि श्रृंखला को पूरा करने वाली एक अतिरिक्त कड़ी होगी किंतु ये मत उस परिप्रेक्ष्य में पढ़े

जाने चाहिएं जो कुछ इस न्यायालय ने पहले कहा था अर्थात् यह कि इससे पहले कि मिथ्या स्पष्टीकरण का इस्तेमाल अतिरिक्त सूत्र के रूप में किया जाए, निम्नलिखित अनिवार्य शर्तें पूरी की जानी चाहिएं :–

(1) अभियोजन पक्ष द्वारा दिए गए साक्ष्य की श्रृंखला की विभिन्न कड़ियां समाधानप्रद रूप से साबित कर दी गई हों,

(2) उक्त परिस्थिति युक्तियुक्त निश्चितता के साथ अभियुक्त की दोषिता का संकेत देती हो, और

(3) वह परिस्थिति समय और स्थिति की दृष्टि से नैकट्य में हो ।

160. यदि ये शर्तें पूरी हो जाती हैं तभी न्यायालय मिथ्या स्पष्टीकरण या मिथ्या प्रतिरक्षा को अतिरिक्त कड़ी के रूप में इस्तेमाल कर सकता है ताकि न्यायालय को विश्वास दिलाया जा सके, अन्यथा नहीं । प्रस्तुत मामले के तथ्यों और परिस्थितियों के आधार पर यह मामला ऐसा प्रतीत नहीं होता । विषय के इस पहलू पर शंकर लाल {[1981] 4 उम. नि. प. 924 = [1981] 2 एस. सी. आर. 384/390} वाले मामले में विचार किया गया था । उस मामले में इस न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया था –

'इसके अतिरिक्त मिथ्या प्रतिरक्षा तथ्यों के सबूत का स्थान नहीं ले सकती जोकि अभियोजन पक्ष को सफल होने के लिए सिद्ध करना होगा । मिथ्या अभिवाक् अधिक से अधिक एक अतिरिक्त परिस्थिति माना जा सकता है यदि अन्य परिस्थितियां निश्चित रूप से अभियुक्त की दोषसिद्धि का संकेत करती हैं ।'"

13. उक्त सिद्धांतों का अनेक विनिश्चयों में पुन: उल्लेख किया गया है । **उत्तर प्रदेश राज्य** बनाम **अशोक कुमार श्रीवास्तव**[1] वाले मामले में पैरा 9 में यह मत व्यक्त किया गया है कि :–

[1] (1992) 2 एस. सी. सी. 86.

"9. इस न्यायालय ने अनेक बार यह मत व्यक्त किया है कि पारिस्थितिक साक्ष्य का मूल्यांकन करते समय न्यायालय को अत्यंत सतर्क रहना चाहिए और दोषसिद्धि केवल तभी अभिलिखित करनी चाहिए यदि श्रृंखला में की सभी कड़ियां अभियुक्त की दोषिता को इंगित करते हुए पूर्ण हैं और निर्दोषिता की प्रत्येक उप-कल्पना साक्ष्य के आधार पर नकारने योग्य है । पारिस्थितिक साक्ष्य का मूल्यांकन करने में अत्यधिक सावधानी बरती जानी चाहिए और यदि अवलंब लिए गए साक्ष्य से युक्तियुक्त रूप से दो निष्कर्ष निकलते हैं, तो उस निष्कर्ष को स्वीकार किया जाना चाहिए जो अभियुक्त के पक्ष में हो । जिस परिस्थिति का अवलंब लिया गया है उसे पूरी तरह सिद्ध किया गया पाया जाना चाहिए और इस प्रकार सिद्ध सभी तथ्यों का संचयी प्रभाव केवल दोषिता की उप-कल्पना से संगत होना चाहिए । किंतु कहने का अर्थ यह नहीं है कि अभियोजन पक्ष को अभियुक्त द्वारा प्रस्तुत की गई हर किसी उप-कल्पना का खंडन किया जाना चाहिए, चाहे वह कितनी ही दूरस्थ और काल्पनिक क्यों न हो । न ही इसका यह अर्थ है कि थोड़े से संदेह के आधार पर ही अभियोजन के साक्ष्य को नामंजूर कर दिया जाए, क्योंकि विधि में इस प्रकार नामंजूर करना वहां अनुज्ञात किया गया है यदि संदेह युक्तियुक्त हो, न कि अन्यथा ।"

14. पुन:, **मजेन्द्रन लंगेस्वरन** बनाम **राज्य (राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र दिल्ली) और एक अन्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने अभियोजन पक्ष द्वारा अवलंब ली गई सामग्री को विसंगत और अभियोजन के पक्षकथन में कमियां पाए जाने पर कई सारे पूर्ववर्ती विनिश्चयों पर विचार किया और यह अभिनिर्धारित किया कि दोषसिद्धि एकमात्र रूप से पारिस्थितिक साक्ष्य पर आधारित हो सकती है किंतु यह पारिस्थितिक साक्ष्य से संबंधित इस विधि की कसौटी पर खरी उतरनी चाहिए कि सभी परिस्थितियों से अवश्य यह निष्कर्ष निकलना चाहिए कि अभियुक्त ही वह व्यक्ति है, जिसने अपराध कारित किया था, कोई और नहीं ।

---

[1] (2013) 7 एस. सी. सी. 192.

15. उक्त सिद्धांतों को प्रस्तुत मामले के तथ्यों पर लागू करते हुए, इस न्यायालय की यह राय है कि अभियोजन पक्ष परिस्थितियों की ऐसी संपूर्ण श्रृंखला को साबित करने में पूरी तरह से असफल रहा है, जिससे अचूक यह निष्कर्ष निकलता हो कि अभिकथित कृत्य केवल अभियुक्तों द्वारा कारित किया गया था, किसी और द्वारा नहीं । राज्य की ओर से विद्वान् अधिवक्ता श्री मिश्रा द्वारा साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 का लिया गया अवलंब भी अनुचित है । क्योंकि धारा 106 का आशय अभियुक्त की दोषिता को साबित करने के लिए उसके कृत्य का निर्वहन करने से मुक्त करना नहीं है । **शंभुनाथ मेहरा** बनाम **अजमेर राज्य**[1] वाले मामले में इस न्यायालय ने दांडिक विचारण में साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 की परिधि को भली-भांति स्पष्ट किया था । पैरा 9 में यह अभिनिर्धारित किया गया था :–

> "9. यह इस साधारण नियम को अधिकथित करती है कि किसी दांडिक मामले में सबूत का भार अभियोजन पक्ष पर होता है और धारा 106 का आशय निश्चित रूप से उसे उस कर्तव्य से मुक्त करना नहीं है । इसके विपरीत, इसकी रचना ऐसे कतिपय आपवादिक मामलों का सामना करने के लिए की गई है जिनमें अभियोजन पक्ष के लिए ऐसे तथ्यों को सिद्ध करना असंभव होगा या किसी भी स्थिति में अननुपातिक रूप से कठिन होगा, जो 'विशेष रूप से अभियुक्त की जानकारी में हैं और जिन्हें वह ही किसी कठिनाई या असुविधा के बिना साबित कर सकता है । 'विशेष रूप से' शब्द इसी बात पर बल देता है । इससे अभिप्रेत वे तथ्य हैं जो सर्वोत्तम रूप से या आपवादिक रूप से उसकी जानकारी में हैं । यदि इस धारा का निर्वचन अन्यथा किया जाए, तो इससे यह अत्यधिक आश्चर्यजनक निष्कर्ष निकलेगा कि किसी हत्या के मामले में अभियुक्त पर यह साबित करने का भार होता है कि उसने हत्या कारित नहीं की थी क्योंकि उससे बेहतर कौन जान सकता है कि उसने यह कृत्य किया था या नहीं किया था । यह स्पष्ट है कि इस धारा का आशय यह नहीं हो सकता है और प्रिवी

---

[1] ए. आई. आर. 1956 एस. सी. 404.

कौंसिल ने इस धारा का यह अर्थ लगाने के लिए ऐसा अर्थान्वयन करने से, जैसा कि भारत के बाहर कतिपय अन्य अधिनियमों में उद्धृत किया गया है, दो बार इनकार कर दिया था कि यह दर्शित करने का भार अभियुक्त व्यक्ति पर है कि उसने वह अपराध नहीं किया था, जिसके लिए उसका विचारण किया गया है । ये मामले हैं ऐट्टीगाल्ले **बनाम** एम्परर (ए. आई. आर. 1936 पीसी 169) और सेनीविराटने **बनाम** आर. [(1936) 3 ऑल ई. आर. 49] ।'"

16. प्रस्तुत मामले में, अभियोजन पक्ष अभियुक्तों के विरुद्ध यथा अभिकथित मूलभूत तथ्यों को साबित करने में असफल रहा था, इसलिए साक्ष्य अधिनियम की धारा 106 में अंतर्विष्ट उपबंधों को लागू करते हुए इस भार को अभियुक्तों पर स्थानांतरित नहीं किया जा सकता था । अभियोजन पक्ष द्वारा परिस्थितियों की ऐसी संपूर्ण श्रृंखला को साबित करने के लिए कोई सटीक साक्ष्य पेश नहीं करने के कारण, जो इस न्यायालय को इस निष्कर्ष पर पहुंचने के लिए बाध्य कर सके कि अभियुक्तों ने ही अभिकथित अपराध कारित किया था, इस न्यायालय को यह अभिनिर्धारित करने में कोई संकोच नहीं है कि विचारण न्यायालय और उच्च न्यायालय ने अभियुक्तों को अभिकथित अपराध के लिए मात्र संदेह, अटकलबाजी और अनुमान के आधार दोषसिद्ध करके विधि की गंभीर गलती कारित की थी ।

17. मामले को इस प्रकार दृष्टिगत करते हुए, आक्षेपित निर्णय अभिखंडित और अपास्त किए जाने योग्य हैं और तद्नुसार अपास्त किए जाते हैं । अभियुक्तों को उनके विरुद्ध लगाए गए आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है और तुरंत रिहा किए जाने का निदेश दिया जाता है ।

18. तद्नुसार यह अपील मंजूर की जाती है ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

[2022] 1 उम. नि. प. 394

पंजाब नेशनल बैंक

बनाम

भारत संघ और अन्य

[2012 की सिविल अपील सं. 2196]

24 फरवरी, 2022

न्यायमूर्ति एल. नागेश्वर राव और न्यायमूर्ति विनीत शरण

वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 (2002 का 54) – धारा 13 और 35 [सपठित केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 की धारा 11 (तारीख 8 अप्रैल, 2011 से अंत:स्थापित) और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 1944 का नियम 173थ (2) (तारीख 12 मई, 2000 से विलोपित)] – प्रतिभूति हित का प्रवर्तन और अधिनियम का अन्य विधियों पर अध्यारोही होना – कंपनी-निर्धारिती द्वारा उत्पाद-शुल्क का अपवंचन और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम के उपबंधों का अतिक्रमण किया जाना – उत्पाद-शुल्क आयुक्त द्वारा कंपनी-निर्धारिती पर उत्पाद-शुल्क के उद्ग्रहण सहित शास्ति अधिरोपित किया जाना और उत्पाद-शुल्क नियमों के नियम 173थ (2) के अधीन कंपनी की भूमि, संयंत्र, मशीनरी आदि का अधिहरण करने का आदेश पारित किया जाना – आदेश पारित करने की तारीख से बहुत पहले नियम 173थ (2) का विलोपन हो जाने के कारण अधिकरण द्वारा आदेश को अपास्त किया जाना – तत्पश्चात् कंपनी द्वारा अपनी जंगम और स्थावर संपत्तियों को बंधक/आडमान करके बैंक-अपीलार्थी से ऋण लिया जाना – उत्पाद-शुल्क विभाग द्वारा पुन: कंपनी की आस्तियों को अधिहृत करने की कार्यवाहियां आरंभ किया जाना – ऋण चुकाने में असफल रहने पर बैंक द्वारा भी सारफेसी अधिनियम के अधीन कंपनी को सूचना जारी किया जाना – उत्पाद-शुल्क विभाग द्वारा कंपनी की आस्तियों का अधिहरण करने की कार्यवाहियों को चुनौती देते हुए बैंक द्वारा उच्च न्यायालय में रिट याचिका फाइल किया जाना – रिट याचिका खारिज हो जाना – कंपनी की आस्तियों पर प्रथम पूर्विकता – चूंकि केंद्रीय सीमा-शुल्क और उत्पाद-शुल्क आयुक्त द्वारा नियम

173थ (2) के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए कंपनी की आस्तियों को अधिहृत करने के आदेश पारित किए जाने से बहुत पहले ही उत्पाद-शुल्क नियमों के उक्त नियम का कानून की पुस्तक से विलोपन कर दिए जाने के कारण आयुक्त को निर्धारिती की भूमि, मशीनरी, संयंत्र आदि का अधिहरण करने का आदेश पारित करने की कोई अधिकारिता न होने के कारण ऐसे आदेशों को कायम नहीं रखा जा सकता है और 2002 के सारफेसी अधिनियम की केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम के उपबंधों पर अध्यारोही प्रभाव होने के कारण प्रतिभूत लेनदार-अपीलार्थी-बैंक को संदेय रकम की केंद्रीय उत्पाद-शुल्क विभाग को शोध्य रकम पर पूर्विकता होगी ।

इस अपील के प्रयोजनार्थ मामले के सुसंगत संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि सीमा-शुल्क और उत्पाद-शुल्क आयुक्त, गाजियाबाद (प्रत्यर्थी सं. 2) ने मैसर्स राठी इस्पात लि./प्रत्यर्थी सं. 4 (संक्षेप में "आर. आई. एल.") को उत्पाद-शुल्क का अपवंचन करने और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 का अतिक्रमण करने के लिए तारीख 31 दिसंबर, 1996 को एक कारण बताओ सूचना जारी की । प्रत्यर्थी सं. 2 ने तारीख 25 नवंबर, 1997 के आदेश द्वारा आर. आई. एल. के विरुद्ध 6,97,62,102/- रुपए के उत्पाद-शुल्क की मांग की पुष्टि की और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 1944 (संक्षेप में "1944 के नियम") के नियम 173थ(1) के अधीन 7,98,03,000/- रुपए की शास्ति अधिरोपित की और नियम 173थ(2) के अधीन आर. आई. एल. की भूमि, भवन, संयंत्र और मशीनरी को अधिहृत कर लिया । केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 1944 के नियम 173थ के उप नियम (2) को भारत सरकार द्वारा जारी की गई तारीख 12 मई, 2000 की सूचना द्वारा विलोपित कर दिया गया था । तत्पश्चात् अपीली अधिकरण द्वारा इस आदेश को नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के अतिक्रमण के आधार पर अपास्त कर दिया गया और मामले को नए सिरे से कार्यवाहियां करने के लिए वापस प्रतिप्रेषित कर दिया गया । वर्ष 2005 में, आर. आई. एल. ने अपीलार्थी/पंजाब नेशनल बैंक से उधार सुविधाओं का उपभोग किया और उधार को प्रतिभूत करने के लिए अपनी सभी जंगम और स्थावर संपत्तियों को बंधक/आड्मान किया । आर. आई. एल. ने अपीलार्थी बैंक के पक्ष में कंपनी की दोनों प्रकार की

आस्तियों (कच्ची सामग्री, स्टॉक-इन-प्रोग्रेस, तैयार माल, प्राप्य वस्तुओं इत्यादि) और भवन-समूह (भूमि, भवन, संयंत्र, मशीनरी और अन्य स्थिर आस्तियां) पर भार सृजित किया । आर. आई. एल. ने उधार की रकम को चुकाने में व्यतिक्रम किया था और बकाया शोध्य का परिसमापन करने में असफल रहा था, इसलिए अपीलार्थी बैंक ने वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 (संक्षेप में सारफेसी अधिनियम) की धारा 13(2) के अधीन आर. आई. एल. को तारीख 2 अगस्त, 2007 को सूचना जारी की, इसके अतिरिक्त, आर. आई. एल. को सारफेसी अधिनियम, 2002 की धारा 13(4) के अधीन भी सूचना जारी की गई । धारा 13(4) की सूचना को ध्यान में रखते हुए, सीमा-शुल्क और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क सहायक आयुक्त, मंडल कार्यालय ने तारीख 27 नवंबर, 2007 के पत्र द्वारा बैंक को सूचित किया कि संपत्ति को 1944 के नियमों के नियम 173थ(2) के फलस्वरूप पहले ही अधिहृत कर लिया गया है और आदेशों के विरुद्ध एक अपील लंबित है और मामला न्यायाधीन है । अपीलार्थी बैंक ने तारीख 22 दिसंबर, 2007 को उपरोक्त पत्र का उत्तर दिया, जिसके द्वारा उसने विभाग को यह सूचित किया कि प्रश्नगत संपत्तियां बैंक के पास बंधक की गई हैं और आर. आई. एल. को ऋण चुकाना चाहिए था । इसके अग्रसरण में, अपीलार्थी बैंक ने तारीख 28 दिसंबर, 2007 को संपत्तियों का सांकेतिक कब्जा ले लिया । तत्पश्चात्, अपीलार्थी बैंक को सहायक आयुक्त, सीमा-शुल्क और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क द्वारा तारीख 15 जनवरी, 2008 के पत्र द्वारा यह सूचित किया गया कि आर. आई. एल. की संपत्तियों को उनकी लिखित सम्मति के बिना काम में न लाया जाए । सारतः, सीमा-शुल्क और उत्पाद-शुल्क विभाग की दलील यह थी कि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि आर. आई. एल. की सभी जंगम और स्थावर संपत्तियों को सीमा-शुल्क और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क आयुक्त, गाजियाबाद द्वारा पारित किए गए आदेश से अधिहृत कर लिया गया है, इसलिए अपीलार्थी बैंक द्वारा प्रश्नगत संपत्ति का कब्जा नहीं लिया जा सकता है । अपीलार्थी बैंक ने अधिहरण के आदेशों (तारीख 26 मार्च, 2007 और 29 मार्च, 2007) और विभाग द्वारा जारी की गई आगामी संसूचनाओं/पत्रों (तारीख 27 नवंबर, 2007 और 15 जनवरी, 2008) से व्यथित होकर इलाहाबाद उच्च न्यायालय के

समक्ष एक रिट याचिका फाइल की गई, जिसे खारिज कर दिया गया । बैंक द्वारा उच्च न्यायालय के ऊपर उल्लिखित आदेश से व्यथित होकर उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 1944 के तत्कालीन नियम 173थ (2) के अधीन आरंभ की गई कार्यवाहियां केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 1944 के उक्त नियम 173थ(2) का निरसन होने पर समाप्त हो जाएंगी । प्रत्यर्थी की ओर से काउंसेल की यह दलील कि कार्यवाहियां केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 की धारा 38क (ग) और धारा 38क (ड़) तथा साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 6 के कारण सुरक्षित रहेंगी, भ्रामक है और कानूनी समर्थन रहित है । प्रथमत:, साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 6 वहां लागू होती है जहां साधारण खंड अधिनियम के प्रारंभ के पश्चात् बनाया गया कोई केंद्रीय अधिनियम या विनियम किसी अधिनियमिति को निरसित करता है । यह किसी "नियम" के विलोपन के मामले में लागू नहीं होता है । अत: धारा 6 की प्रयोज्यता के प्रश्न को नकारात्मक रूप में विनिश्चित किया जाता है । द्वितीयत:, केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 की धारा 38क (ग) और धारा 38क (ड़) की प्रयोज्यता के विवाद्यक पर यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि प्रत्यर्थी इसके संरक्षण का उपभोग करने के योग्य नहीं होगा क्योंकि धारा 38क (ग) और धारा 38क (ड़) केवल तब लागू होती हैं जब "कोई भिन्न आशय प्रतीत न होता हो" । प्रस्तुत मामले में, विधान मंडल ने नियम 173थ(2) में अंतर्विष्ट उपबंधों का तारीख 12 मई, 2000 से विलोपन करने के पश्चात् किसी भूमि, भवन, संयंत्र, मशीनरी इत्यादि के अधिहरण की शक्ति को प्रत्यावर्तित/ पुनरुज्जीवित न करने के अपने आशय को स्पष्ट किया है । विधान मंडल के इस आशय का निष्कर्ष इस तथ्य से निकाला जा सकता है कि तारीख 12 मई, 2000 से इसके विलोपन के पश्चात् किसी भूमि, भवन, संयंत्र, मशीनरी इत्यादि का अधिहरण करने की शक्ति को पश्चात्वर्ती केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 2001, केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 2002 और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 2017 में पुर:स्थापित नहीं किया गया है । इसके अतिरिक्त, इस आशय की पुष्टि इस तथ्य से भी होती है कि

केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 1944 की धारा 211 में, अन्य बातों के साथ-साथ, यह उपबंधित है कि नियमों के अधीन अधिहृत "कोई वस्तु" तदुपरांत केंद्रीय सरकार में निहित होगी, जबकि 2001, 2002 और 2017 के केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियमों के नियम 28, जो 1944 के नियमों के पूर्ववर्ती नियम 211 का समविषयक है, में केंद्रीय सरकार में निहित होने वाली "कोई वस्तु" शब्द की बजाय अधिहृत "माल" शब्द का उपबंध किया गया है । अंततः, तारीख 12 मई, 2000 से 1944 के नियमों के नियम 173थ(2) के विलोपन के पश्चात् और वर्ष 2001 में 1944 के नियमों के नियम 211 के अधिक्रांत होने के पश्चात् नए सिरे से अधिनियमित 2001 के नियमों का नियम 28, 2002 के नियमों का नियम 28 और 2017 के नियमों के नियम 28 में किसी भूमि, भवन, संयंत्र, मशीनरी इत्यादि का अधिहरण करने और तत्पश्चात् केंद्रीय सरकार में उनके निहित होने के बारे में उपबंध नहीं किया गया है, क्योंकि नियम 28 में केवल केंद्रीय उत्पाद-शुल्क प्राधिकारियों द्वारा उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 के अधीन अधिहृत किए गए "माल" को केंद्रीय सरकार में निहित होने का उपबंध किया गया है । विधान मंडल के आशय के इस अपसारण इस न्यायालय के पूर्ववर्ती मामलों में अधिकथित विनिश्चयधार से यह स्पष्ट हो जाता है कि इन वर्णित उपबंधों द्वारा अधिहरण की कार्यवाहियों को सुरक्षित नहीं रखा गया था और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क और सीमा-शुल्क आयुक्त द्वारा तारीख 26 मार्च, 2007 तथा 29 मार्च, 2007 के अंतिम अधिहरण आदेश अधिकारिता के बिना पारित किए गए थे । उपरोक्त को ध्यान में रखते हुए, इस न्यायालय की यह दृढ़ राय है कि अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल के द्वितीय विवाद्यक पर दिए गए तर्कों में गुणागुण है । स्पष्टतया, तारीख 8 अप्रैल, 2011 से केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 में धारा 11ड़ के अंतःस्थापन से पूर्व 1944 के अधिनियम में, अन्य बातों के साथ-साथ, 1944 के अधिनियम के अधीन निर्धारिती या किसी व्यक्ति की संपत्ति पर प्रथम भार का उपबंध करते हुए कोई उपबंध नहीं था । इसलिए प्रस्तुत मामले जैसी स्थिति में, जहां भूमि, भवन, संयंत्र और मशीनरी इत्यादि को एक प्रतिभूत लेनदार के पास बंधक/आड्मान किया गया है, वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 की धारा

2(यग) से (यच) में अंतर्विष्ट उपबंधों के साथ पठित वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 की धारा 13 में अंतर्विष्ट उपबंधों को ध्यान में रखते हुए प्रतिभूत लेनदार को प्रतिभूत आस्तियों पर प्रथम भार होगा । इसके अतिरिक्त, वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 की धारा 35 में, अन्य बातों के साथ-साथ, यह उपबंधित है कि वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम के उपबंधों का सभी अन्य विधियों पर अध्यारोही प्रभाव होगा । यह भी उल्लेख करना आवश्यक है कि यहां तक कि केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 की धारा 11ड़ में अंतर्विष्ट उपबंध भी वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 में अंतर्विष्ट उपबंधों के अध्यधीन हैं । निष्कर्षत:, सीमा-शुल्क और उत्पाद-शुल्क आयुक्त द्वारा तारीख 26 मार्च, 2007 और 29 मार्च, 2007 को भूमि, भवन इत्यादि का अधिहरण करने के लिए केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 1944 के नियम 173थ(2) के अधीन शक्तियों का अवलंब नहीं लिया जा सकता था जब उस तारीख को उक्त नियम 173थ(2) तारीख 12 मई, 2000 की एक अधिसूचना द्वारा विलोपित किए जाने के पश्चात् कानून की पुस्तकों में नहीं था । द्वितीयत:, प्रतिभूत लेनदार अर्थात् अपीलार्थी-बैंक के शोध्य की केंद्रीय उत्पाद-शुल्क विभाग के शोध्य पर यहां तक कि तारीख 8 अप्रैल, 2011 से केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 में धारा 11ड़ के अंत:स्थापन के पश्चात् भी पूर्विकता होगी और वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 में अंतर्विष्ट उपबंधों का केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 के उपबंधों पर अध्यारोही प्रभाव होगा । (पैरा 36, 43 और 47)

निर्दिष्ट निर्णय

		पैरा
[2012]	(2012) 10 एस. सी. सी. 746 : **राणा गिरडर्स लि.** बनाम **भारत संघ और अन्य** ;	17

[2010] 2010 एस. सी. सी. ऑन लाइन गुजरात 10656 : **कोटक महिन्द्रा बैंक लि.** बनाम **जिला मजिस्ट्रेट** ; 13, 35, 36

[2009] (2009) 2 एस. सी. सी. 121 : **भारत संघ** बनाम **सिकॉम लि. और एक अन्य** ; 17, 42, 44

[2008] 2008 एस. सी. सी. ऑन लाइन बोम्बे 137 : **कृष्णा लाइफस्टाइल टेक्नोलॉजिज लि.** बनाम **भारत संघ और अन्य** ; 17, 41

[2008] (2008) 16 एस. सी. सी. 276 : **नागार्जुन कंस्ट्रक्शन कं. लि.** बनाम **आंध्र प्रदेश सरकार** ; 22

[2007] (2007) 8 एस. सी. सी. 353 : **सैंट्रल बैंक ऑफ इंडिया** बनाम **श्रीगुप्पा सुगर्स एंड कैमिकल्स लि. और अन्य** ; 17, 40

[2006] (2006) 3 एस. सी. सी. 354 : **गम्मन इंडिया** बनाम **विशेष मुख्य सचिव** ; 24

[2006] 2006 एस. सी. सी. ऑन लाइन मद्रास 1182 (पूर्ण न्यायपीठ) : **यूटीआई बैंक लि.** बनाम **उपायुक्त, केंद्रीय उत्पाद-शुल्क** ; 17, 38

[2003] (2003) 4 एस. सी. सी. 557 : **केनरा बैंक** बनाम **देबाशीष दास** ; 22

[2001] (2001) 8 एस. सी. सी. 397 : **अम्बालाल साराभाई इंटरप्राइजेज लि.** बनाम **अमृतलाल** ; 24

[2000] (2000) 2 एस. सी. सी. 536 :
कोल्हापुर केनसुगर वर्क्स लि. बनाम
भारत संघ और अन्य ; 13, 34, 36

[2000] (2000) 5 एस. सी. सी. 694 :
देना बैंक बनाम **भीखाभाई प्रभु दास
पारिख और एक अन्य** ; 17, 39

[1998] 1998 एस. सी. सी. ऑन लाइन आंध्र
प्रदेश 416 :
सितानी टेक्सटाइल्स (प्रा. लि.) बनाम **सीमा-शुल्क
और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क सहायक कलक्टर** ; 17

[1971] [1971] 2 उम. नि. प. 935 = (1972)
3 एस. सी. सी. 196 :
बैंक ऑफ बिहार बनाम **बिहार राज्य** ; 17, 28

[1960] [1960] 3 एस. सी. आर. 85 :
बृहन महाराष्ट्र सुगर सिंडिकेट लि. बनाम
जनारंद रामचंद्र कुलकर्णी । 24

अपीली (सिविल) अधिकारिता : 2012 की सिविल अपील सं. 2196.

संविधान, 1950 के अनुच्छेद 133 के अधीन अपील ।

अपीलार्थी की ओर से सर्वश्री ध्रुव मेहता, ज्येष्ठ अधिवक्ता, राजेश कुमार-I, अनंत गौतम, निपुण शर्मा, शशांक शेखर और मैसर्स मित्तर एंड मित्तर कं.

प्रत्यर्थी की ओर से सर्वश्री के. एन. नटराज, अपर महा सालिसिटर, शरत नांबियार, वत्सल जोशी, विनायक शर्मा, इंदिरा बी., शैलेश मडियाल, मुकेश कुमार मरोड़िया, मंजुला गुप्ता, ए. वी. रंगम, बुद्द और ए. रंगनाधन

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति विनीत शरण ने दिया ।

न्या. शरण – यह सिविल अपील इलाहाबाद उच्च न्यायालय द्वारा तारीख 5 अगस्त, 2008 को पारित किए गए उस निर्णय और आदेश से उद्भूत हुई है, जिसके द्वारा अपीलार्थी द्वारा फाइल की गई रिट याचिका को आरंभ में ही खारिज कर दिया गया था ।

2. इस अपील के प्रयोजनार्थ मामले के सुसंगत संक्षिप्त तथ्य ये हैं कि सीमा-शुल्क और उत्पाद-शुल्क आयुक्त, गाजियाबाद (प्रत्यर्थी सं. 2) ने मैसर्स राठी इस्पात लि./प्रत्यर्थी सं. 4 (संक्षेप में "आर. आई. एल.") को उत्पाद-शुल्क का अपवंचन करने और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 का अतिक्रमण करने के लिए तारीख 31 दिसंबर, 1996 को एक कारण बताओ सूचना जारी की । प्रत्यर्थी सं. 2 ने तारीख 25 नवंबर, 1997 के आदेश द्वारा आर. आई. एल. के विरुद्ध 6,97,62,102/- रुपए के उत्पाद-शुल्क की मांग की पुष्टि की और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 1944 (संक्षेप में "1944 के नियम") के नियम 173थ(1) के अधीन 7,98,03,000/- रुपए की शास्ति अधिरोपित की और नियम 173थ(2) के अधीन आर. आई. एल. की भूमि, भवन, संयंत्र और मशीनरी को अधिहृत कर लिया । केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 1944 के नियम 173थ के उप नियम (2) को भारत सरकार द्वारा जारी की गई तारीख 12 मई, 2000 की सूचना द्वारा विलोपित कर दिया गया था । तत्पश्चात्, सीमा-शुल्क, उत्पाद-शुल्क और स्वर्ण (नियंत्रण) अपीली अधिकरण, जिसे अब सीमा-शुल्क, उत्पाद-शुल्क और सेवा कर अपीली अधिकरण के रूप में जाना जाता है, द्वारा इस आदेश को नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के अतिक्रमण के आधार पर अपास्त कर दिया गया और मामले को नए सिरे से कार्यवाहियां करने के लिए वापस प्रतिप्रेषित कर दिया गया ।

3. वर्ष 2005 में, आर. आई. एल. ने बैंकों के संघ से विभिन्न स्कीमों के अधीन, मुख्य बैंक के रूप में अपीलार्थी/पंजाब नेशनल बैंक से उधार सुविधाओं का उपभोग किया और उधार को प्रतिभूत करने के लिए अपनी सभी जंगम और स्थावर संपत्तियों को बंधक/आड्मान किया । आर. आई. एल. ने अपीलार्थी बैंक के पक्ष में कंपनी की दोनों प्रकार की

आस्तियों (कच्ची सामग्री, स्टॉक-इन-प्रोग्रेस, तैयार माल, प्राप्य वस्तुओं इत्यादि) और भवन-समूह (भूमि, भवन, संयंत्र, मशीनरी और अन्य स्थिर आस्तियां) पर भार सृजित किया ।

4. तत्पश्चात्, सीमा-शुल्क और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क आयुक्त, गाजियाबाद ने तारीख 26 मार्च, 2007 के आदेश द्वारा आर. आई. एल. पर 7,98,02,226/- रुपए के उत्पाद-शुल्क की मांग और 7,98,03,000/- रुपए की शास्ति की पुष्टि की । आयुक्त ने 1944 के नियमों के नियम 173थ (2) के अधीन विनिर्माण और भंडारण के संबंध में प्रयुक्त सभी भूमि, भवन, संयंत्र, मशीनरी और सामग्री का अधिहरण करने का भी आदेश दिया ।

5. केंद्रीय उत्पाद-शुल्क आयुक्त ने तारीख 29 मार्च, 2007 के एक अन्य आदेश द्वारा आर. आई. एल. से 2,67,00,348/- रुपए और 74,24,332/- रुपए के केंद्रीय उत्पाद शुल्क की मांग की पुष्टि की । आयुक्त ने 3,41,24,680/- रुपए की शास्ति भी अधिरोपित की और इसके अतिरिक्त 1944 के नियमों के नियम 173थ(2) के अधीन आर. आई. एल. की उस भूमि, भवन, संयंत्र, मशीनरी, सामग्री, वाहन इत्यादि का अधिहरण करने का आदेश दिया जो विनिर्माण, उत्पादन, भंडारण या माल के व्ययन के संबंध में प्रयोग किए गए थे ।

6. तथापि, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि आर. आई. एल. ने उधार की रकम को चुकाने में व्यतिक्रम किया था और बकाया शोध्य का परिसमापन करने में असफल रहा था, अपीलार्थी बैंक ने वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 (संक्षेप में सारफेसी अधिनियम) की धारा 13(2) के अधीन आर. आई. एल. को तारीख 2 अगस्त, 2007 को सूचना जारी की, इसके अतिरिक्त, आर. आई. एल. को सारफेसी अधिनियम, 2002 की धारा 13 (4) के अधीन भी सूचना जारी की गई ।

7. धारा 13(4) की सूचना को ध्यान में रखते हुए, सीमा-शुल्क और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क सहायक आयुक्त, मंडल कार्यालय ने तारीख 27 नवंबर, 2007 के पत्र द्वारा बैंक को सूचित किया कि संपत्ति को 1944

के नियमों के नियम 173थ(2) के फलस्वरूप पहले ही अधिहृत कर लिया गया था और आदेशों के विरुद्ध एक अपील लंबित है और मामला न्यायाधीन है । अपीलार्थी बैंक ने तारीख 22 दिसंबर, 2007 को उपरोक्त पत्र का उत्तर दिया, जिसके द्वारा उसने विभाग को यह सूचित किया था कि प्रश्नगत संपत्तियां बैंक के पास बंधक की गई हैं और आर. आई. एल. को ऋण चुकाना चाहिए था । इसके अग्रसरण में, अपीलार्थी बैंक ने तारीख 28 दिसंबर, 2007 को संपत्तियों का सांकेतिक कब्जा ले लिया । तत्पश्चात्, अपीलार्थी बैंक को सहायक आयुक्त, सीमा-शुल्क और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क द्वारा तारीख 15 जनवरी, 2008 के पत्र द्वारा यह सूचित किया गया कि आर. आई. एल. की संपत्तियों को उनकी लिखित सम्मति के बिना काम में न लाया जाए ।

8. सारत:, सीमा-शुल्क और उत्पाद-शुल्क विभाग की दलील यह थी कि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि आर. आई. एल. की सभी जंगम और स्थावर संपत्तियों को सीमा-शुल्क और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क आयुक्त, गाजियाबाद द्वारा पारित किए गए आदेश से अधिहृत कर लिया गया है, इसलिए अपीलार्थी बैंक द्वारा प्रश्नगत संपत्ति का कब्जा नहीं लिया जा सकता है ।

9. अपीलार्थी बैंक ने अधिहरण के आदेशों (तारीख 26 मार्च, 2007 और 29 मार्च, 2007) और विभाग द्वारा जारी की गई आगामी संसूचनाओं/पत्रों (तारीख 27 नवंबर, 2007 और 15 जनवरी, 2008) से व्यथित होकर इलाहाबाद उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका फाइल की गई, जिसे यह मताभिव्यक्तियां करते हुए खारिज कर दिया कि :–

> "हमारा यह निष्कर्ष है कि प्रस्तुत मामले में मैसर्स राठी इस्पात लि., प्रत्यर्थी सं. 4 से जंगम या स्थावर आस्तियों की कुर्की या अन्यथा द्वारा कर की वसूली किए जाने की ईप्सा नहीं की गई है, किंतु केंद्रीय उत्पाद-शुल्क प्राधिकारियों का आधार यह है कि संपत्तियों को अधिहृत कर लिया गया है और अधिहरण के आदेश के परिणामस्वरूप केंद्रीय सरकार में निहित हैं ।"

उच्च न्यायालय ने यह भी अभिनिर्धारित किया कि :–

"अधिहृत करना/अधिहरण शब्द के अर्थ से हमारा यह निष्कर्ष है कि यदि कोई संपत्ति अधिहृत कर ली गई है तो यह राज्य में निहित हो जाती है और कोई व्यक्ति इस पर किसी अधिकार, हक, या हित का दावा नहीं कर सकता है ।"

अपीलार्थी बैंक की रिट याचिका को खारिज करते हुए इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने अंतत: यह अभिनिर्धारित किया कि :–

"मामले को दृष्टिगत करते हुए, संपत्तियों पर प्रथम भार या द्वितीय भार का प्रश्न उद्भूत नहीं होगा । ऋण का निर्वापन तो नहीं हो जाता है किंतु इसे अधिहृत संपत्ति से वसूल नहीं किया जा सकता है और इस स्थिति में हम रिट याचिका में कोई गुणागुण नहीं पाते हैं । जहां तक अधिहरण के आदेश को चुनौती देने का संबंध है, हम यह उल्लेख कर सकते हैं कि याची को अधिहरण के आदेश को चुनौती देने के लिए कोई सुने जाने का अधिकार नहीं है क्योंकि प्रत्यर्थी सं. 4 ने इसके विरुद्ध पहले ही अपील की है । तथापि, यदि प्रत्यर्थी सं. 4 द्वारा की गई अपील में अधिहरण के आदेश को अपास्त किया जाता है तब बैंक प्रश्नगत संपत्तियों के विरुद्ध विधि के अनुसार कार्यवाही कर सकता है ।"

10. उच्च न्यायालय के ऊपर उल्लिखित आदेश से व्यथित होकर विशेष इजाजत याचिका के द्वारा यह अपील फाइल की गई है ।

11. अपीलार्थी बैंक की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री ध्रुव मेहता ने हमारे समक्ष निम्नलिखित दो विवाद्यक उठाए हैं जो हमारे विचार के लिए उद्भूत होते हैं :–

विवाद्यक सं. 1 – क्या विद्वान् सीमाशुल्क और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क आयुक्त तारीख 26 मार्च, 2007 और 29 मार्च, 2007 को भूमि, भवन इत्यादि का अधिहरण करने के लिए केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 1944 के नियम 173थ(2) के अधीन शक्तियों का अवलंब ले सकता था, जब उस तारीख को नियम 173थ(2) तारीख 17 मई, 2000 से विलोपित कर दिए जाने पर कानून की किताब में नहीं था ?

विवाद्यक सं. 2 – क्या केंद्रीय उत्पाद-शुल्क के शोध्य के संबंध में प्रथम भार के लिए उपबंध करते हुए केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 में किसी उपबंध के अभाव में, उत्पाद-शुल्क विभाग के शोध्य की प्रतिभूत लेनदार के शोध्य पर पूर्विकता होगी या नहीं ?

12. **प्रथम विवाद्यक** के संबंध में अपीलार्थी बैंक की ओर से विद्वान् काउंसेल द्वारा यह तर्क दिया गया कि आयुक्त तारीख 26 मार्च, 2007 और 29 मार्च, 2007 के आदेशों को नियम 173थ(2) के अधीन शक्तियों का अवलंब लेकर पारित नहीं कर सकता था, जो कि तारीख 12 मई, 2000 की अधिसूचना द्वारा विलोपित कर दिए जाने के पश्चात् उक्त तारीख को कानून की पुस्तक में विद्यमान नहीं था ।

13. यह दलील दी गई कि आयुक्त के आदेशों का समर्थन करने के लिए केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 की धारा 38क और साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 6 में अंतर्विष्ट उपबंधों के अवलंब को नामंजूर किया जाना चाहिए और इसका कारण यह है कि इस न्यायालय की एक संविधान न्यायपीठ ने **कोल्हापुर केनसुगर वर्क्स लि.** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1] वाले मामले में यह अभिनिर्धारित किया है कि साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 6 में अंतर्विष्ट उपबंध केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियमों को लागू नहीं होते हैं । यह भी दलील दी गई कि धारा 38क का अवलंब नहीं लिया जा सकता है और इसका कारण यह है कि उक्त धारा 38क में अंतर्विष्ट उपबंध तब तक लागू होते हैं "जब तक एक भिन्न आशय प्रतीत न होता हो" । प्रस्तुत मामले में, विधानमंडल का यह प्रति-आशय कि विधानमंडल का नियम 173थ(2) में अंतर्विष्ट उपबंधों का तारीख 12 मई, 2000 से विलोपन करने के पश्चात् किसी भूमि, भवन, संयंत्र, मशीनरी इत्यादि का अधिहरण करने की शक्ति को पुनरुज्जीवित/प्रत्यावर्तित करने का आशय नहीं था, निम्नलिखित से स्पष्ट होता है :–

I. नियम 173थ(2) में अंतर्विष्ट उपबंधों को अर्थात् किसी

---

[1] (2000) 2 एस. सी. सी. 536.

भूमि, भवन, संयंत्र, मशीनरी इत्यादि को अधिहरण करने की शक्ति का तारीख 12 मई, 2006 से विलोपन करने के पश्चात् पश्चात्वर्ती केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 2001, केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 2002 और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 2017 में पुर:स्थापित नहीं किया गया है ।

II. इसके अतिरिक्त, केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 1944 के नियम 211 में, अन्य बातों के साथ-साथ, यह उपबंधित है कि नियमों के अधीन अधिहृत "कोई वस्तु" तदुपरांत केंद्रीय सरकार में निहित हो जाएगी, जबकि केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 2001, 2002 और 2017 के नियम 28, जो 1944 के नियमों के पूर्ववर्ती नियम 211 का समविषयक है, में "कोई वस्तु" शब्द के बजाय अधिहृत "माल" को केंद्रीय सरकार में निहित किए जाने का उपबंध किया गया था ।

III. इस प्रकार, 1944 के नियमों के नियम 173थ(2) का तारीख 12 मई, 2000 से लोप किए जाने के पश्चात् और वर्ष 2001 में 1944 के नियमों के नियम, 2011 का अधिक्रांत होने के पश्चात्, नए अधिनियमित 2001 के नियमों के नियम 28, 2002 के नियमों के नियम 28 और 2017 के नियमों के नियम 28 में किसी भूमि, भवन, संयंत्र, मशीनरी इत्यादि का अधिहरण करने और तत्पश्चात् उनका केंद्रीय सरकार में निहित हो जाने के लिए उपबंध नहीं किया गया है, क्योंकि नियम 28 में केवल केंद्रीय उत्पाद-शुल्क प्राधिकारियों द्वारा उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 के अधीन अधिहृत किए गए "माल" को केंद्रीय सरकार में निहित होने के लिए उपबंध किया गया है ।

ऊपर वर्णित दलीलों के समर्थन में, श्री ध्रुव मेहता ने **कोटक महिन्द्रा बैंक लि.** बनाम **जिला मजिस्ट्रेट**[1] वाले मामले में गुजरात उच्च न्यायालय के निर्णय का अवलंब लिया ।

---

[1] 2010 एस. सी. सी. ऑनलाइन गुजरात 10656.

14. प्रथम विवाद्यक के संबंध में, अपीलार्थी की ओर से ज्येष्ठ काउंसेल ने यह कहते हुए अपनी दलील का समापन किया कि आयुक्त को केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियमों के नियम 173थ(2), जो तारीख 26 मार्च, 2007 और 29 मार्च, 2007 के आदेशों को पारित करने से बहुत पहले तारीख 12 मई, 2000 से विलोपित कर दिया गया है, में अंतर्विष्ट उपबंधों का अवलंब लेने की कोई शक्ति, प्राधिकार या अधिकारित नहीं थी ।

15. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल द्वारा उठाया गया **द्वितीय विवाद्यक** यह है कि "क्या केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 में केंद्रीय उत्पाद-शुल्क विभाग के शोध्य के संबंध में प्रथम भार होने के लिए उपबंध करते हुए किसी उपबंध के अभाव में उत्पाद-शुल्क विभाग के शोध्य की प्रतिभूत लेनदार के शोध्य पर पूर्विकता होगी या नहीं ?" यह दलील दी गई कि केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 में तारीख 8 अप्रैल, 2011 से धारा 11ङ के अंत:स्थापन से पूर्व 1944 के अधिनियम में, अन्य बातों के साथ-साथ, 1944 के अधिनियम के अधीन निर्धारिती या किसी व्यक्ति की संपत्ति पर प्रथम भार का उपबंध करते हुए कोई उपबंध नहीं था । अत: प्रस्तुत मामले जैसी स्थिति में, जहां भूमि, भवन, संयंत्र, मशीनरी इत्यादि को सरफेसी अधिनियम, 2002 की धारा 2(यग) से (यच) के साथ पठित सारफेसी अधिनियम, 2002 की धारा 13 में अंतर्विष्ट उपबंधों को ध्यान में रखते हुए प्रतिभूत लेनदार के पक्ष में बंधक/आड्मान की गई है, वहां प्रतिभूत लेनदार का प्रतिभूत आस्तियों पर प्रथम भार होगा ।

16. विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने यह दलील दी कि सरफेसी अधिनियम, 2002 की धारा 35 में, अन्य बातों के साथ-साथ, यह उपबंधित है कि उक्त अधिनियम के उपबंधों का तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि या किसी ऐसी विधि के परिणामस्वरूप प्रभाव रखने वाली किसी लिखत में अंतर्विष्ट किसी बात के विसंगत होते हुए भी सभी अन्य विधियों पर अध्यारोही प्रभाव होगा । आगे यह भी दलील दी गई कि यहां तक कि केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 की धारा 11ङ, जो तारीख 8 अप्रैल, 2011 से अंत:स्थापित की गई है, में अंतर्विष्ट उपबंधों

में भी निर्धारिती की संपत्ति पर प्रथम भार होने का उपबंध किया गया है और यह एक सर्वोपरि खंड है । तथापि, धारा 11ङ में अंतर्विष्ट उपबंध सरफेसी अधिनियम, 2002 में अंतर्विष्ट उपबंधों के अध्यधीन हैं । अत: सरफेसी अधिनियम, 2002 के उपबंधों का, केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 में तारीख 8 अप्रैल, 2011 से धारा 11ङ के अंत:स्थापन के पश्चात् भी 1944 के अधिनियम के उपबंधों पर अध्यारोही प्रभाव है ।

17. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल ने ऊपर वर्णित दलीलों के अतिरिक्त यह दलील दी कि इस न्यायालय द्वारा अधिकथित यह भली-भांति स्थिर विधि है कि क्राउन (राज्य) ऋणों (अप्रतिभूत) की प्रतिभूत लेनदारों/पण्यम्-दार/उपनिहिती के प्रतिभूत शोध्य पर कोई पूर्विकता नहीं है । उपरोक्त दलील के समर्थन में, निम्नलिखित निर्णयों का अवलंब लिया गया है :–

i. **बैंक ऑफ बिहार** बनाम **बिहार राज्य**[1]

ii. **देना बैंक** बनाम **भीखाभाई प्रभु दास पारिख और एक अन्य**[2]

iii. **सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया** बनाम **श्रीगुप्पा सुगर्स एंड केमिकल्स लि. और अन्य**[3]

iv. **भारत संघ** बनाम **सिकॉम लि. और एक अन्य**[4]

v. **राणा गिरडर्स लि.** बनाम **भारत संघ और अन्य**[5]

vi. **सितानी टेक्सटाइल्स (प्रा. लि.)** बनाम **सीमाशुल्क और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क सहायक कलक्टर**[6]

vii. **यूटीआई बैंक लि.** बनाम **उपायुक्त, केंद्रीय उत्पाद-शुल्क**[7]

---

[1] [1971] 2 उम. नि. प. 935 = (1972) 3 एस. सी. सी. 196.

[2] (2000) 5 एस. सी. सी. 694.

[3] (2007) 8 एस. सी. सी. 353.

[4] (2009) 2 एस. सी. सी. 121.

[5] (2012) 10 एस. सी. सी. 746.

[6] 1998 एस. सी. सी. ऑनलाइन आंध्र प्रदेश 416.

[7] 2006 एस. सी. सी. ऑनलाइन मद्रास 1182 (पूर्ण न्यायपीठ).

viii. **कृष्णा लाइफस्टाइल टेक्नोलॉजिज लि.** बनाम **भारत संघ और अन्य**[1]

18. अत: श्री मेहता ने यह दलील दी कि उपरोक्त दलीलों और विनिश्चित मामलों को ध्यान में रखते हुए, अपीलार्थी बैंक का सरफेसी अधिनियम, 2002 के उपबंधों के अधीन एक प्रतिभूत लेनदार होने के कारण प्रतिभूत आस्तियों पर प्रथम भार था और अपने प्रतिभूत शोध्य को उत्पाद-शुल्क विभाग के शोध्य से पूर्व वसूल करने का हकदार है । यह भी दलील दी गई कि विधानमंडल का आशय, केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 की धारा 11ङ (तारीख 8 अप्रैल, 2011 से अंत:स्थापित) में अंतर्विष्ट उपबंधों के अतिरिक्त बैंकों और वित्तीय संस्थाओं को शोध्य ऋण वसूली अधिनियम, 1993 में धारा 31ख (तारीख 1 सितंबर, 2016 से अधिसूचित) के द्वारा अंत:स्थापित पश्चात्वर्ती उपबंधों और सरफेसी अधिनियम में धारा 26ङ के (तारीख 24 जनवरी, 2020 से) अंत:स्थापन से भी स्पष्ट है कि विधानमंडल का सदैव यह आशय रहा है कि बैंकों और वित्तीय संस्थाओं को अपने प्रतिभूत शोध्य को प्रतिभूत आस्तियों से वसूल करने के लिए राजस्व/करों, सरकारी शोध्य के संदाय/वसूली से पूर्व पूर्विकता होगी ।

19. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् अपर महा-सालिसिटर, श्री के. एम. नटराज ने यह दलील दी कि इस अपील में विधि के निम्नलिखित दो प्रश्न उद्भूत होते हैं :–

(क) **विवाद्यक सं. 1** – क्या प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा प्रत्यर्थी सं. 4 (आर. आई. एल.) की भूमि, भवन, संयंत्र और मशीनरी की बाबत पारित किए गए अधिहरण आदेश को उक्त प्रत्यर्थी सं. 4 (आर. आई. एल.) द्वारा अपीलार्थी और अन्य बैंकों के पक्ष में सृजित किए गए प्रतिभूति हित द्वारा उन अधिहरण कार्यवाहियों [केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 1944 के नियम 173थ(2) के अधीन], जो प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा आर. आई. एल. के विरुद्ध आरंभ की गई थी, के लगभग 8 वर्ष पश्चात् विफल किया जा सकता है ?

---

[1] 2008 एस. सी. सी. ऑनलाइन बोम्बे 137.

(ख) **विवाद्यक सं. 2** – क्या प्रत्यर्थी सं. 2, सीमाशुल्क और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क आयुक्त द्वारा केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 1944 के नियम 173थ(2) के अधीन उक्त नियम का कानून की पुस्तक से लोप किए जाने से पूर्व आरंभ की गई कार्यवाहियां केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 की धारा 38क(ग) और 38क(ङ) के कारण बची नहीं हैं और परिणामस्वरूप, क्या आयुक्त ने तारीख 26 मार्च, 2007 और 29 मार्च, 2007 के अधिहरण के आदेशों को पारित करके न्यायोचित नहीं किया था, यद्यपि उस तारीख को उक्त नियम 173थ(2) को विलोपित कर दिया गया था और 1944 के नियमों को बाद में केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 2001 द्वारा प्रतिस्थापित कर दिया गया था ।

20. विद्वान् अपर महा-सालिसिटर ने यह दलील दी कि अपीलार्थी द्वारा उठाए गए प्रथम विवाद्यक को अपीलार्थी द्वारा इस न्यायालय से पहले कभी भी न तो अधिकरण के समक्ष और न ही अपील में उठाया गया था और इसे पहली बार इस अपील में उठाया गया है ।

21. अपीलार्थी द्वारा उठाए गए द्वितीय विवाद्यक के संबंध में विद्वान् अपर महा-सालिसिटर द्वारा यह दलील दी गई कि यह प्रश्न, जो अपीलार्थी द्वारा विरचित किया गया है और उत्तर दिया गया है, प्रस्तुत विवाद से पूर्णत: भिन्न है । प्रस्तुत विवाद कतई प्रभारों या ऋणों की पूर्विकता के बारे में नहीं है । दूसरी ओर, उच्च न्यायालय के समक्ष जिसे चुनौती दी गई थी वह अधिहरण का आदेश था और इस न्यायालय के विचार के लिए सुसंगत प्रश्न यह है कि क्या केंद्रीय उत्पाद-शुल्क प्राधिकारियों द्वारा आर. आई. एल. की भूमि, भवन, संयंत्र और मशीनरी की बाबत पारित किया गया अधिहरण आदेश को आर. आई. एल. द्वारा अपीलार्थी और अन्य बैंकों के पक्ष में सृजित किए गए प्रतिभूति हित द्वारा उन अधिहरण कार्यवाहियों [केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 1944 के नियम 173थ(2) के अधीन], जो प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा आर. आई. एल. के विरुद्ध आरंभ की गई थी, के लगभग 8 वर्ष पश्चात् विफल किया जा सकता है ?

22. श्री के. एम. नटराज, अपर महा-सालिसिटर ने यह दलील दी

कि 1944 के नियमों के नियम 173थ(2) के अधीन कार्यवाहियां तारीख 31 दिसंबर, 1996 की कारण बताओ सूचना द्वारा प्रारंभ की गई थीं । तारीख 12 मई, 2000 की अधिसूचना द्वारा 1944 के नियमों से नियम 173थ(2) का लोप होते हुए भी प्रत्यर्थी सं. 3 केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 की धारा 38क(ग) और धारा 38क(ङ) के कारण कार्यवाहियां जारी रखने का हकदार था । अत: 1944 के नियमों के निरसित नियम 173थ(2) के अधीन शक्तियों का प्रयोग करते हुए प्रत्यर्थी सं. 2 तारीख 26 मार्च, 2007 और 29 मार्च, 2007 के आदेशों को पारित करने का हकदार था, यद्यपि उक्त आदेशों की तारीख को 1940 के नियमों को प्रतिस्थापित कर दिया गया था । इसके समर्थन में उन्होंने यह दलील दी कि यह विवादग्रस्त नहीं है कि आर. आई. एल. के विरुद्ध अधिहरण की कार्यवाहियां वर्ष 1996 में अर्थात् 1944 के नियमों के निरसन से बहुत पहले आरंभ की गई थीं और यद्यपि उन कार्यवाहियों में आरंभ में पारित किए गए आदेश को सीमाशुल्क, उत्पाद-शुल्क और स्वर्ण (नियंत्रण) अपीली अधिकरण द्वारा नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों के अतिक्रमण के कारण अपास्त कर दिया गया था । स्वयमेव प्रतिप्रेषण आदेश से यह स्पष्ट है कि ये कार्यवाहियां (प्रतिप्रेषण के पश्चात्) उन कार्यवाहियों की निरंतरता में थीं जो तारीख 31 दिसंबर, 1996 की कारण बताओ सूचना द्वारा आरंभ की गई थीं । इस दलील पर बल देने के लिए **नागार्जुन कंस्ट्रक्शन कं. लि.** बनाम **आंध्र प्रदेश सरकार**[1] वाले मामले में किए गए विनिश्चय का अवलंब लिया गया, जिसमें यह अभिनिर्धारित किया गया है कि जब किसी आदेश को नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का अतिक्रमण करने के कारण अविधिमान्य होने के रूप में खारिज किया जाता है, तो जो कुछ किया जाता है वह इसकी अंतर्निहित त्रुटि के फलस्वरूप दी गई चुनौती से वह आदेश रद्द हो जाता है, किंतु कार्यवाहियां समाप्त नहीं होती हैं । ऐसा अभिनिर्धारित करते हुए इस न्यायालय ने **केनरा बैंक** बनाम **देबाशीष दास**[2] वाले मामले का अवलंब लिया था ।

---

[1] (2008) 16 एस. सी. सी. 276.

[2] (2003) 4 एस. सी. सी. 557.

23. अत: यह दलील दी गई कि जब एक बार यह सिद्ध हो गया है कि नियम 173थ के अधीन अधिहरण की कार्यवाहियां कानून से उक्त नियम के विलोपन से बहुत पहले आरंभ की गई थीं, तो विचार करने के लिए प्रश्न यह है कि क्या आर. आई. एल. के विरुद्ध कार्यवाहियों को उस उपबंध के अधीन जारी रखा जा सकता है जो अब कानून में विद्यमान नहीं है । श्री के. एम. नटराज, अपर महा-सालिसिटर ने इस संदर्भ में यह दलील दी कि केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 की धारा 38क में, अन्य बातों के साथ-साथ, यह उपबंधित है कि जब किसी नियम को निरसित, संशोधित या अधिक्रांत किया जाता है, तो जब तक कोई आशय प्रतीत न होता हो, तो ऐसे निरसन से कोई अर्जित या प्रोद्भूत अधिकार या दायित्व प्रभावित नहीं होगा या किसी ऐसे अधिकार या दायित्व के संबंध में कोई अन्वेषण, विधिक कार्यवाहियां या उपचार प्रभावित नहीं होगा ।

24. साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 6 के लागू होने के संदर्भ में विद्वान् अपर महा-सालिसिटर ने **गम्मन इंडिया** बनाम **विशेष मुख्य सचिव**[1] ; **अम्बालाल साराभाई इंटरप्राइजेज लि.** बनाम **अमृतलाल**[2] ; **बृहन महाराष्ट्र सुगर सिंडिकेट लि.** बनाम **जनारंद रामचंद्र कुलकर्णी**[3] वाले मामलों में इस न्यायालय के विनिश्चयों का अवलंब लिया और यह दलील दी कि यद्यपि नियम 173थ(2) को आरंभ में 1944 के नियमों से विलोपित किया गया था और बाद में 1944 के नियम निरसित कर दिए गए थे और 2001 के नियमों द्वारा प्रतिस्थापित किए गए थे, तो भी नए नियमों में अभिव्यक्त रूप से ऐसा कोई उल्लेख नहीं किया गया था जिससे उन दायित्वों को समाप्त करने का कोई आशय स्पष्ट होता हो जो 1944 के नियमों के कारण अस्तित्व में आए थे या उनसे ऐसे किसी अन्वेषण को शून्य करने का आशय स्पष्ट होता हो, जो ऐसे प्रोद्भूत दायित्व के संबंध में लंबित था । अत: विद्वान् अपर महा-सालिसिटर ने यह दलील दी कि केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम की धारा 38क(ग) और

---

[1] (2006) 3 एस. सी. सी. 354.

[2] (2001) 8 एस. सी. सी. 397.

[3] [1960] 3 एस. सी. आर. 85.

38क(ङ) उन कार्यवाहियों को सुरक्षित रखने के लिए पूरी तरह से लागू होंगी जो 1944 के नियमों के नियम 173थ(2) के अधीन पहले ही आरंभ की जा चुकी थीं, क्योंकि अधिनियम की धारा 38क(ग) में उन अधिकारों और दायित्वों को सुरक्षित किया गया है जो न केवल अर्जित हुए थे अपितु जो उपबंध के संशोधन या निरसन की तारीख को प्रोद्भूत भी हुए थे और अधिनियम की धारा 38क(ङ) में उन अन्वेषणों को सुरक्षित किया गया है जो ऐसे अधिकारों और दायित्वों में प्रारंभ हो गए थे ।

25. श्री नटराज, विद्वान् अपर महा-सालिसिटर ने यह भी दलील दी कि अपीलार्थी द्वारा उठाया गया **द्वितीय विवाद्यक** (क्राउन के ऋणों या सरकार के ऋणों पर प्रतिभूत लेनदार के शोध्य की पूर्विकता के संबंध में) प्रस्तुत मामले के तथ्यों में कतई उद्भूत नहीं होता है, चूंकि प्रत्यर्थी सं. 2 द्वारा किया गया अधिहरण का आदेश न केवल शोध्य की वसूली के लिए आदेश है अपितु इसकी बजाय दोषी अर्थात् आर. आई. एल. को दंडित करने के लिए एक शास्तिक आदेश की प्रकृति का भी है । यह बात इस तथ्य से स्पष्ट होती है कि यहां तक कि 1944 के नियमों में भी नियम 173थ के अधीन अधिहरण का उपबंध किया गया है, जबकि केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 की धारा 11 के अधीन मात्र शोध्य की वसूली का उपबंध किया गया है ।

26. श्री के. एम. नटराज, अपर महा-सालिसिटर द्वारा यह दलील दी गई कि प्रस्तुत मामले में अधिहरण की कार्यवाहियां इन्हीं संपत्तियों के संबंध में सृजित किए गए भार से लगभग 9 वर्ष पूर्व आरंभ की गई थीं । प्रतिभूति हित के सृजन के समय पर अपीलार्थी बैंक को अधिहरण की कार्यवाहियों की विद्यमानता के प्रति जागरूक होना चाहिए था । यह भी दलील दी गई कि किसी संपत्ति पर सृजित भार या प्रतिभूति हित से किसी कानूनी निकाय द्वारा आरंभ की गई अधिहरण की कार्यवाहियों को किसी रीति में विफल या प्रभावित नहीं किया जा सकता है ।

27. श्री नटराज, विद्वान् अपर महा-सालिसिटर ने यह भी दलील दी कि अपीलार्थी द्वारा अवलंब लिए गए विनिश्चय तथ्यों के आधार पर प्रभेदनीय हैं, चूंकि वे मामले क्राउन के ऋणों पर किसी प्रतिभूत लेनदार

की पूर्विकता के प्रश्न के संबंध में हैं और किसी प्रतिभूत लेनदार के हित के संबंध में अधिहरण की कार्यवाहियों के विवाद्यक को स्पर्श तक नहीं करते हैं ।

28. यह दलील दी गई कि एक इसी प्रकार का प्रश्न **बैंक ऑफ बिहार** बनाम **बिहार राज्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में उद्भूत हुआ था, जिसमें एक प्रश्न यह था कि क्या एक विधिमान्य अभिग्रहण से किसी प्रतिभूत लेनदार का अधिकार विफल हो सकता है या नहीं । उस मामले में, इस न्यायालय ने अभिग्रहण में हस्तक्षेप नहीं किया, किंतु केवल यह अभिनिर्धारित किया कि सरकार द्वारा माल अभिगृहीत किए जाने के पश्चात् लेनदार फिर भी अपने ऋण को चुकवाने के अपने अधिकार को प्रतिधारित कर सकते हैं । यह सिद्धांत सरफेसी अधिनियम की धारा 13(4)(घ) में प्रतिबिंबित होता है । अत: यह दलील दी गई कि अपीलार्थी, अधिक से अधिक, उसे शोध्य रकम की वसूली के लिए सरफेसी अधिनियम की धारा 13(4)(घ) के अधीन क्रियाविधि का आश्रय ले सकता है, यदि और जब प्रत्यर्थी प्राधिकारियों द्वारा संपत्तियां बेची जाती हैं । अत: यह धारणा करते हुए कि प्रत्यर्थियों से वसूली का कोई अधिकार विद्यमान है, अपीलार्थी, अधिक से अधिक, सरफेसी अधिनियम की धारा 13(4)(घ) में यथा-परिकल्पित सूचना जारी करने और इसके पश्चात् उसमें वर्णित आगामी उपाय करने का हकदार हो सकेगा ।

29. अंत में, श्री के. एम. नटराज, अपर महा-सालिसिटर ने यह दलील दी कि अधिहरण के आदेश की विधिमान्यता को केवल इस कारण प्रश्नगत नहीं किया जा सकता है कि अपीलार्थी एक प्रतिभूत लेनदार है । इस मामले में यह प्रश्न उद्भूत नहीं होता है कि क्या सीमाशुल्क विभाग को शोध्य रकम पर प्रतिभूत लेनदार को शोध्य ऋणों पर पूर्विकता होगी या नहीं, चूंकि जिस बात को चुनौती दी गई है वह अधिहरण का आदेश है और इसके सिवाय कुछ नहीं । किसी अधिहरण के आदेश को केवल इस कारण अभिखंडित नहीं किया जा सकता है कि उसी संपत्ति के संबंध में एक प्रतिभूति हित सृजित हुआ है ।

30. तुरंत संदर्भ के लिए, संबंधित अधिनियम और नियमों के सुसंगत उपबंध को नीचे उद्धृत किया जाता है :–

(केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944)

"**धारा 11. सरकार को शोध्य राशियों की वसूली** – इस अधिनियम या इसके अधीन बनाए गए नियमों के उपबंधों के अधीन केंद्रीय सरकार को संदेय शुल्क उद्गृहीत करने के लिए या उसे संदेय किसी भी प्रकार की अन्य धन राशियों के संदाय की अपेक्षा करने के लिए, जिसके अंतर्गत धारा 11घ के अधीन केंद्रीय सरकार के जमा खाते में संदत्त किए जाने के लिए अपेक्षित रकम भी है, केंद्रीय राजस्व बोर्ड अधिनियम, 1963 (1963 का 54) के अधीन गठित केंद्रीय उत्पाद-शुल्क और सीमाशुल्क बोर्ड द्वारा सशक्त अधिकारी इस प्रकार संदेय रकम को किसी ऐसे धन में से काट सकता है या केंद्रीय उत्पाद-शुल्क के किसी अन्य अधिकारी या सीमाशुल्क अधिनियम, 1962 (1962 का 52) की धारा 142 में निर्दिष्ट किसी उचित अधिकारी से इस प्रकार संदेय रकम को काटने के लिए अपेक्षा कर सकता है जो उस व्यक्ति को देना हो जिससे ऐसी धन राशियां वसूल की जानी हों या शोध्य हों और जो उसके पास या उसके व्ययनाधीन या नियंत्रणाधीन हों, अथवा वह उस रकम को ऐसे व्यक्ति के उत्पाद-शुल्क माल की कुर्की या विक्रय द्वारा वसूल कर सकता है; और यदि संदेय रकम इस प्रकार वसूल नहीं की जाती है तो वह अपने द्वारा हस्ताक्षरित एक प्रमाणपत्र तैयार करेगा जिसमें वह रकम विनिर्दिष्ट की जाएगी जो वह व्यक्ति देने का दायी है और प्रमाणपत्र को उस जिले के कलक्टर को भेजेगा जिसमें वह व्यक्ति निवास करता है या अपना कारबार करता है और उक्त कलक्टर ऐसे प्रमाणपत्र के प्राप्त होने पर उक्त व्यक्ति से उसमें विनिर्दिष्ट रकम को वसूल करने की कार्यवाही उसी प्रकार करेगा मानो वह भू-राजस्व की बकाया हों :

परंतु जहां ऐसा व्यक्ति (जिसे इसमें इसके पश्चात् पूर्वाधिकारी कहा गया है) जिससे इस धारा में यथा विनिर्दिष्ट शुल्क या कोई अन्य राशि वसूलीय है या शोध्य है, अपने कारबार या व्यापार को पूर्णत: या भागत: अंतरित या व्ययन करता है, अथवा उसके स्वामित्व में कोई ऐसा परिवर्तन करता है, जिसके परिणामस्वरूप

वह ऐसे कारबार या व्यापार में किसी अन्य व्यक्ति द्वारा उत्तरवर्ती हो जाता है, तो इस प्रकार उत्तरवर्ती होने वाले व्यक्ति की अभिरक्षा या कब्जे में के सभी उत्पाद-शुल्क माल, सामग्री, निर्मित्तियां, संयंत्र, मशीनरी, पात्र, बर्तन, उपकरण और वस्तुओं को केंद्रीय उत्पाद-शुल्क और सीमाशुल्क बोर्ड द्वारा सशक्त ऐसे अधिकारी द्वारा केंद्रीय उत्पाद-शुल्क प्रधान आयुक्त या केंद्रीय उत्पाद-शुल्क आयुक्त से लिखित अनुमोदन प्राप्त करने के पश्चात् ऐसे पूर्वाधिकारी से ऐसे अंतरण या अन्यथा व्ययन या परिवर्तन के समय पर वसूलीय या शोध्य ऐसे शुल्क या अन्य राशियों को वसूल करने के प्रयोजनार्थ भी कुर्क किया जा सकता है और बेचा जा सकता है ।"

"**धारा 38क. नियमों, अधिसूचनाओं या आदेशों में संशोधनों इत्यादि का प्रभाव** – जहां इस अधिनियम के अधीन बनाया गया कोई नियम या जारी की गई सूचना या आदेश या ऐसे नियम के अधीन जारी की गई सूचना या आदेश संशोधित, निरसित, अधिक्रांत या विखंडित किया जाता है, तब जब तक कोई भिन्न आशय प्रतीत न हो, ऐसे संशोधन, निरसन, अधिक्रमण या विखंडन से –

(क) किसी बात का प्रवर्तन नहीं होगा जो उस समय पर प्रवृत्त या विद्यमान नहीं थी जिस समय पर संशोधन, निरसन, अधिक्रमण या विखंडन प्रभावी होता है ; या

(ख) इस प्रकार संशोधित, निरसित, अधिक्रांत या विखंडित किसी नियम, अधिसूचना या आदेश या तदधीन सम्यक् रूप से की गई या सहन की गई किसी बात के पूर्ववर्ती प्रवर्तन को प्रभावित नहीं होगा ; या

(ग) इस प्रकार संशोधित, निरसित, अधिक्रांत या विखंडित किसी नियम, अधिसूचना या आदेश से अर्जित, प्रोद्भूत या उपगत कोई अधिकार, विशेषाधिकार, बाध्यता

प्रभावित नहीं होगी ; या

(घ) इस प्रकार संशोधित, निरसित, अधिक्रांत या विखंडित किसी नियम, अधिसूचना या आदेश के अधीन या अतिक्रमण करके कारित किसी अपराध की बाबत उपगत कोई शास्ति, समपहरण या दंड प्रभावित नहीं होगा ; या

(ङ) यथा पूर्वोक्त किसी ऐसे अधिकार, विशेषाधिकार, बाध्यता, दायित्व, शास्ति, समपहरण या दंड की बाबत कोई अन्वेषण, विधिक कार्यवाही या उपचार प्रभावित नहीं होगा, और कोई ऐसा अन्वेषण, विधिक कार्यवाही या उपचार को संस्थित, जारी या प्रवर्तित किया जा सकेगा और किसी ऐसी शास्ति, समपहरण या दंड को ऐसे अधिरोपित किया जा सकेगा मानो, यथास्थिति, नियम, अधिसूचना या आदेश को संशोधित, निरसित, अधिक्रांत या विखंडित नहीं किया गया था ।"

(केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944) तारीख 8 अप्रैल, 2011 से प्रभावी

"धारा 11ङ. प्रथम भार होने के लिए अधिनियम के अधीन दायित्व – किसी केंद्रीय अधिनियम या राज्य अधिनियम में प्रतिकूल अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, इस अधिनियम या तदधीन बनाए गए नियमों के अधीन निर्धारिती या किसी अन्य व्यक्ति द्वारा संदेय शुल्क की किसी रकम, शास्ति, ब्याज या कोई अन्य राशि का, जैसा कि कंपनी अधिनियम, 1956 (1956 का 1) की धारा 529क, बैंकों और वित्तीय संस्थाओं को शोध्य ऋणों की वसूली अधिनियम, 1993 (1993 का 51) और वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 (2002 का 54) में अन्यथा उपबंधित है, उसके सिवाय, यथास्थिति, निर्धारिती या ऐसे व्यक्ति की संपत्ति पर प्रथम भार होगा ।"

तारीख 12 मई, 2000 से पूर्व केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 1944 का नियम 173थ

"नियम 173थ. अधिहरण और शास्ति –

(1) यदि कोई विनिर्माता, उत्पादक या किसी भांडागार का अनुज्ञप्तिधारी –

(क) किसी उत्पाद-शुल्क माल को इन नियमों के उपबंधों के किसी उपबंध के उल्लंघन में अपसारित करता है ; या

(ख) उसके द्वारा विनिर्मित, उत्पादित या भंडारित किसी उत्पाद-शुल्क माल को हिसाब में नहीं लेता है ; या

(ग) अधिनियम की धारा 6 के अधीन अपेक्षित अनुज्ञप्ति के लिए आवेदन किए बिना किसी उत्पाद-शुल्क्य माल का विनिर्माण, उत्पादन या भंडारण करता है ; या

(घ) शुल्क के संदाय का अपवंचन करने के आशय से इन नियमों के किसी उपबंध का उल्लंघन करता है,

तब सभी ऐसा माल अधिहरण करने के लिए दायी होगा और यथास्थिति, विनिर्माता, उत्पादक या अनुज्ञप्तिधारी उस उत्पाद-शुल्क माल के मूल्य के तीन गुणा से अनधिक शास्ति के लिए, जिसका खंड (क) या खंड (ख) या खंड (ग) या खंड (घ) में निर्दिष्ट प्रकृति का कोई उल्लंघन किया गया है या पांच हजार रुपए के लिए, जो भी अधिक है, दायी होगा ।

(2) जहां –

(क) उप नियम (1) के खंड (क) या खंड (ख) या खंड (ग) या खंड (घ) में निर्दिष्ट प्रकृति के किसी उल्लंघन की दशा में, उस उप नियम में निर्दिष्ट उत्पाद-शुल्क माल पर उद्ग्रहणीय शुल्क एक लाख रुपए से अधिक है, या

(ख) कोई विनिर्माता, उत्पादक या भांडागार का अनुज्ञप्तिधारी, जिसके उत्पाद-शुल्क माल को उप नियम (1)

के अधीन अधिहृत किया गया था और जिसके ऊपर उस उप नियम के अधीन शास्ति अधिरोपित की गई थी, उप नियम (1) के खंड (क) या खंड (ख) या खंड (ग) या खंड (घ) के किसी उपबंध का उल्लंघन करता है और दूसरे या किसी पश्चात्वर्ती अवसर पर उल्लंघन की बाबत उत्पाद-शुल्क्य माल पर उद्ग्रहणीय शुल्क दस हजार रुपए से अधिक है,

तब इस उप नियम के खंड (क) के अंतर्गत आने वाले मामले में या उसके खंड (ख) के अंतर्गत आने वाले मामले में (चाहे उस खंड के अधीन उल्लंघन दूसरे या किसी पश्चात्वर्ती अवसर पर किया गया है), अधिनियम की धारा 33 के अधीन मामले का न्यायनिर्णयन करने वाला अधिकारी उप नियम (1) के अधीन अधिहरण और शास्ति के अधिनिर्णय के अतिरिक्त, लिखित में लेखबद्ध किए गए कारणों से, ऐसे विनिर्माता, उत्पादक या किसी भांडागार के अनुज्ञप्तिधारी से संबंधित निम्नलिखित किसी या सभी का अधिहरण करने का निदेश दे सकेगा –

(i) कोई भूमि, भवन, संयंत्र, मशीनरी, सामग्री, वाहन, पशु या विनिर्माण, उत्पादन, भंडारण, ऐसे माल के अपसारण या व्ययन के संबंध में प्रयुक्त कोई अन्य वस्तु, या

(ii) ऐसी भूमि पर या ऐसे भवन में, या ऐसे संयंत्र, मशीनरी, सामग्री या वस्तु से उत्पादित या विनिर्मित कोई अन्य उत्पाद-शुल्क्य माल ।"

(केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 1944)

"नियम 211. अधिहरण करने पर संपत्ति का केंद्रीय सरकार में निहित होना

(1) जब इन नियमों के अधीन कोई वस्तु अधिहृत की जाती है, ऐसी वस्तुएं तदुपरांत केंद्रीय सरकार में निहित होंगी ।

(2) अधिहरण का न्यायनिर्णयन करने वाला अधिकारी अधिहृत की गई वस्तुओं का कब्जा लेगा और प्रतिधारित करेगा, और पुलिस का प्रत्येक अधिकारी ऐसे अधिकारी की अध्यापेक्षा पर

ऐसा कब्जा लेने और प्रतिधारित करने में उसकी सहायता करेगा ।"

केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 2001 का नियम 28

(केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 1944 को अधिक्रांत करते हुए जारी किया गया)

"नियम 28. अधिहृत संपत्ति का केंद्रीय सरकार में निहित होना– जब इन नियमों के अधीन किसी माल को अधिहृत किया जाता है, तो ऐसी वस्तुएं तदुपरांत केंद्रीय सरकार में निहित होंगी । अधिहरण का न्यायनिर्णयन करने वाला केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिकारी अधिहृत की गई वस्तुओं का कब्जा लेगा और प्रतिधारित करेगा और पुलिस का प्रत्येक अधिकारी ऐसे अधिकारी की अध्यापेक्षा पर ऐसा कब्जा लेने और प्रतिधारित करने में उसकी सहायता करेगा ।"

केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 2002 का नियम 28

(केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 2001 को अधिक्रांत करते हुए जारी किया गया)

"नियम 28. अधिहृत संपत्ति का केंद्रीय सरकार में निहित होना– जब इन नियमों के अधीन किसी माल को अधिहृत किया जाता है, तो ऐसी वस्तुएं तदुपरांत केंद्रीय सरकार में निहित होंगी । अधिहरण का न्यायनिर्णयन करने वाला केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिकारी अधिहृत की गई वस्तुओं का कब्जा लेगा और प्रतिधारित करेगा और पुलिस का प्रत्येक अधिकारी ऐसे अधिकारी की अध्यापेक्षा पर ऐसा कब्जा लेने और प्रतिधारित करने में उसकी सहायता करेगा ।"

केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 2017 का नियम 28

(केंद्रीय उत्पाद-शुल्क, 2002 को अधिक्रांत करते हुए जारी किया गया)

"नियम 28. अधिहरण और शास्ति–

(1) अधिनियम की धारा 11कग के उपबंधों के अध्यधीन रहते हुए, यदि कोई उत्पादक, विनिर्माता, किसी भंडागार का रजिस्ट्रीकृत व्यक्ति या ऐसा आयातक जो ऐसा बीजक जारी करता है जिस पर

केंद्रीय मूल्य वर्धित कर प्रत्यय लिया जा सकता है, या कोई रजिस्ट्रीकृत व्यौहारी,

(1) अधिनियम की धारा 11गक के उपबंधों के अध्यधीन रहते हुए, यदि कोई उत्पादक, विनिर्माता, किसी भांडागार का अनुज्ञप्तिधारी या ऐसा आयातकर्ता जो ऐसा बीजक जारी करता है जिस पर केंद्रीय मूल्य वर्धित कर लिया जा सकता है, या कोई रजिस्ट्रीकृत व्यौहारी,

(क) किसी उत्पाद-शुल्क्य माल को इन नियमों या इन नियमों के अधीन जारी की अधिसूचनाओं के उपबंधों के किसी उपबंध के उल्लंघन में अपसारित करता है ; या

(ख) उसके द्वारा विनिर्मित, उत्पादित या भंडारित किसी उत्पाद-शुल्क्य माल को हिसा में नहीं लेता है ; या

(ग) अधिनियम की धारा 6 के अधीन अपेक्षित अनुज्ञप्ति के लिए आवेदन किए बिना किसी उत्पाद-शुल्क्य माल का विनिर्माण, उत्पादन या भंडारण करता है ; या

(घ) शुल्क के संदाय का अपवंचन करने के आशय से इन नियमों या इन नियमों के अधीन जारी की गई अधिसूचनाओं के किसी उपबंध का उल्लंघन करता है,

तब सभी ऐसा माल अधिहरण करने के लिए दायी होगा और यथास्थिति, उत्पादक, विनिर्माता, या भांडागार का रजिस्ट्रीकृत व्यक्ति, या ऐसा आयातकर्ता जो ऐसा बीजक जारी करता है जिस पर केंद्रीय मूल्य वर्धित कर लिया जा सकता है, या कोई रजिस्ट्रीकृत व्यौहारी उस उत्पाद-शुल्क्य माल पर शुल्क से अनधिक शास्ति के लिए, जिसकी बाबत खंड (क) या खंड (ख) खंड (ग) या खंड (घ) में निर्दिष्ट प्रकृति का कोई उल्लंघन किया गया है या पांच हजार रुपए के लिए, जो भी अधिक है, दायी होगा ।

(2) उप नियम (1) के अधीन आदेश केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिकारी द्वारा नैसर्गिक न्याय के सिद्धांतों का अनुसरण करते हुए जारी किया जाएगा ।"

वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 (सारफेसी अधिनियम)

धारा 2(यग) से 2(यच)

"(**यग**) **'प्रतिभूत आस्ति'** से ऐसी संपत्ति अभिप्रेत है जिस पर प्रतिभूति हित का सृजन किया जाता है ;

(यघ) 'प्रतिभूत लेनदार' से अभिप्रेत है –

(i) कोई ऐसा बैंक या वित्तीय संस्था या बैंकों या वित्तीय संस्थाओं का कोई संघ या समूह, जो किसी मूर्त आस्ति या खंड (1) में यथा विनिर्दिष्ट मूर्त आस्ति पर कोई अधिकार, हक या हित धारण कर रहा है ; या

(ii) किसी बैंक या वित्तीय संस्था द्वारा नियुक्त डिबेंचर न्यासी ; या

(iii) कोई आस्ति पुनर्गठन कंपनी चाहे वह उस रूप में कार्य कर रही है या ऐसी आस्ति पुनर्गठन कंपनी द्वारा उपस्थापित किसी न्यास का, यथास्थिति, प्रतिभूतिकरण या पुनर्गठन के लिए प्रबंध कर रही है ; या

(iv) किसी कंपनी द्वारा प्रतिभूत ऋण की प्रतिभूतियों के लिए नियुक्त किए गए बोर्ड के पास रजिस्ट्रीकृत डिबेंचर न्यासी ; या

(v) कोई अन्य न्यासी, जो किसी बैंक या वित्तीय संस्था की ओर से प्रतिभूतियां धारण कर रहा है, जिसके पक्ष में किसी उधार लेने वाले द्वारा किसी वित्तीय सहायता के सम्यक् प्रतिसंदाय के लिए प्रतिभूति हित सृजित किया जाता है ।

(यड़) 'प्रतिभूत ऋण' से ऐसा ऋण अभिप्रेत है जो किसी प्रतिभूति हित द्वारा प्रतिभूत है ;

(यच) 'प्रतिभूति हित' से किसी संपत्ति पर किसी प्रतिभूत लेनदार

के पक्ष में सृजित किसी भी प्रकार का कोई अधिकार, हक और हित उनसे भिन्न, जो धारा 31 में विनिर्दिष्ट है, अभिप्रेत है और इसके अंतर्गत–

(i) कोई बंधक, भार, आड्मान, समनुदेशन या प्रतिभूत लेनदार द्वारा संपत्ति के स्वामी के रूप में, मूर्त आस्ति पर, अवक्रय या वित्तीय पट्टे या सशर्त विक्रय या ऐसी किसी अन्य संविदा पर, जो आस्ति के क्रय कीमत के किसी असंदत्त भाग का संदाय करने के लिए बाध्यता या उपगत बाध्यता या मूर्त आस्ति को अर्जित करने के लिए उधार लेने वाले को समर्थ बनाने के लिए उपलब्ध प्रत्यय को सुनिश्चित करती है, दिया गया कोई अधिकार, हक या किसी प्रकार का हित है,; या

(ii) किसी मूर्त आस्ति में ऐसा अधिकार, हक या हित या ऐसी मूर्त आस्ति का ऐसा समनुदेशन या लाइसेंस जो मूर्त आस्ति के क्रय कीमत के किसी असंदत्त भाग का संदाय करने की बाध्यता को या उपगत बाध्यता को या मूर्त आस्ति या मूर्त आस्ति के लाइसेंस को अर्जित करने के लिए उधार लेने वाले को समर्थ बनाने के लिए उपलब्ध किसी प्रत्यय को सुनिश्चित करता है ।"

धारा 13.

"13. प्रतिभूति हित का प्रवर्तन–(1) संपत्ति अंतरण अधिनियम, 1882 (1882 का 4) की धारा 69 या धारा 69क में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, किसी प्रतिभूत लेनदार के पक्ष में सृजित कोई प्रतिभूति हित, ऐसे लेनदार द्वारा, न्यायालय या अधिकरण के मध्यक्षेप के बिना, इस अधिनियम के उपबंधों के अनुसार प्रवृत्त किया जा सकेगा ।

(2) जहां कोई उधार लेने वाला, जो किसी प्रतिभूति करार के अधीन किसी प्रतिभूति लेनदार के प्रति दायित्वाधीन है, प्रतिभूत ऋण या उसकी किसी किस्त के प्रतिसंदाय में व्यतिक्रम करता है

और उसके ऐसे ऋण से संबंधित लेखे को प्रतिभूत लेनदार द्वारा गैर निष्पादनीय आस्ति के रूप में वर्गीकृत किया गया है, तब प्रतिभूत लेनदार, लिखित सूचना देकर उधार लेने वाले से सूचना की तारीख से साठ दिन के भीतर प्रतिभूत लेनदार के प्रति उसके दायित्वों का पूर्णतया निर्वहन किए जाने की अपेक्षा कर सकेगा, जिसके न होने पर प्रतिभूत लेनदार, उपधारा (4) के अधीन सभी या किन्हीं अधिकारों के प्रयोग करने का हकदार होगा ।

(3) उपधारा (2) में निर्दिष्ट सूचना में उधार लेने वाले द्वारा संदेय रकम और उधार लेने वाले द्वारा प्रतिभूत ऋणों के असंदाय की दशा में प्रतिभूत लेनदार द्वारा प्रवर्तित किए जाने के लिए आशयित प्रतिभूत आस्तियों के ब्यौरे होंगे ।

(4) यदि उधार लेने वाला, उपधारा (2) में विनिर्दिष्ट अवधि के भीतर अपने दायित्व का पूर्णत: निर्वहन करने में असफल रहता है तो प्रतिभूत लेनदार, अपने प्रतिभूत ऋण की वसूली के लिए निम्नलिखित में से एक या अधिक उपाय कर सकेगा, अर्थात् :–

(क) उधार लेने वाले की प्रतिभूति आस्तियों का कब्जा लेना जिसके अंतर्गत प्रतिभूत आस्ति की वसूली के लिए पट्टे, समनुदेशन या विक्रय द्वारा अंतरण का अधिकार भी है;

(ख) उधार लेने वाले के कारबार का प्रबंध ग्रहण करना, जिसके अंतर्गत प्रतिभूत आस्ति की वसूली के लिए पट्टे, समनुदेशन या विक्रय द्वारा अंतरण का अधिकार भी है :

परंतु पट्टे, समनुदेशन या विक्रय द्वारा अंतरण के अधिकार का केवल वहीं प्रयोग किया जाएगा, जहां उधार लेने वाले के कारबार का महत्वपूर्ण भाग ऋण के लिए प्रतिभूति के रूप में धारित किया गया है :

परंतु यह और कि जहां संपूर्ण कारबार या कारबार के भाग का प्रबंधन पृथक्कीयकरण है, वहां प्रतिभूत लेनदार, उधार लेने वाले के ऐसे कारबार का, जो ऋण के लिए प्रतिभूति से संबंधित है, प्रबंध-ग्रहण करेगा;

(ग) प्रतिभूत आस्तियों, जिसका कब्जा प्रतिभूत लेनदार द्वारा ग्रहण किया गया है, का प्रबंध करने के लिए किसी व्यक्ति को नियुक्त करना (इसे इसमें इसके पश्चात् प्रबंधक कहा गया है);

(घ) ऐसे किसी व्यक्ति, जिसने उधार लेने वाले से किन्हीं प्रतिभूत आस्तियों का अर्जन किया है और जिससे कोई धन शोध्य है या उधार लेने वाले को शोध्य हो सकता है, लिखित में सूचना द्वारा किसी भी समय उतने धन का प्रतिभूत लेनदार को संदाय किए जाने की अपेक्षा करना जो प्रतिभूत ऋण के संदाय के लिए पर्याप्त हो ।

(6) प्रतिभूत लेनदार या प्रतिभूत लेनदार की ओर से प्रबंधक द्वारा, उपधारा (4) के अधीन कब्जा लेने या प्रबंध ग्रहण करने के पश्चात् प्रतिभूति आस्ति का कोई अंतरण अंतरिती में अंतरित प्रतिभूत आस्ति में या उसके संबंध में सभी अधिकार निहित कर देगा मानो वह अंतरण उसे प्रतिभूत आस्ति के स्वामी द्वारा किया गया था ।

(7) जहां उपधारा (4) के उपबंधों के अधीन किसी उधार लेने वाले के विरुद्ध कोई कार्रवाई की गई है, वहां ऐसे सभी खर्च, प्रभार और व्यय जो प्रतिभूत लेनदार की राय में उसके द्वारा उचित तौर पर उपगत किए गए हैं या उससे आनुषंगिक कोई व्यय, उधार लेने वाले से वसूलीय होंगे और वह धन जो प्रतिभूत लेनदार द्वारा प्राप्त किया जाता है, किसी तत्प्रतिकूल संविदा के अभाव में, उसके द्वारा न्यास में धारण किया जाएगा जिसका उपयोजन प्रथमत: ऐसे खर्चों प्रभारों और व्ययों के संदाय में और द्वितीयत: प्रतिभूत लेनदार के शोध्य के उन्मोचन में किया जाएगा और इस प्रकार प्राप्त धन के अतिशेष का संदाय उसके हकदार व्यक्ति को, उसके अधिकारों और हितों के अनुसार किया जाएगा ।

8. .....

9. .....

10. .....

11. .....

12. .....

13. ..... ।"

धारा 35.

"**35. <u>इस अधिनियम के उपबंधों का अन्य विधियों पर अध्यारोही होना</u>**– <u>इस अधिनियम के उपबंध, तत्समय प्रवृत्त किसी अन्य विधि में अंतर्विष्ट इससे असंगत किसी बात या ऐसी किसी विधि के कारण प्रभावी किसी लिखत होते हुए भी, प्रभावी होंगे</u> ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

31. हमने दोनों पक्षकारों की ओर से विद्वान् काउंसेलों को विस्तारपूर्वक सुना और सावधानीपूर्वक अभिलेख का परिशीलन किया ।

32. सीमा-शुल्क और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क आयुक्त, गाजियाबाद ने तारीख 26 मार्च, 2007 के आदेश द्वारा राठी इस्पात लि. (आर. आई. एल.) की सभी भूमि, भवन, संयंत्र, मशीनरी इत्यादि का अधिहरण करने का आदेश दिया था । यह अधिहरण आदेश केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 1944 के नियम 173थ(2) के अधीन पारित किया गया था । तथापि, उच्च न्यायालय ने आक्षेपित आदेश में इस बात पर विचार नहीं किया था कि अधिहरण के आदेशों की तारीख अर्थात् 26 मार्च, 2007 और 29 मार्च, 2007 को नियम 173थ(2) को तारीख 12 मई, 2000 की सरकारी अधिसूचना द्वारा कानून की पुस्तक से विलोपित कर दिया गया था ।

33. हम प्रत्यर्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल की इस दलील में कोई गुणागुण नहीं पाते हैं कि तारीख 12 मई, 2000 की अधिसूचना द्वारा 1944 के नियमों से नियम 173थ(2) का विलोपन होते हुए भी प्रत्यर्थी सं. 3 केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 की धारा 38क(ग) और धारा 38क(ड़) के साथ पठित साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 6 के कारण कार्यवाहियों को जारी रखने का हकदार था ।

34. **कोल्हापुर केनसुगर वर्क्स लि.** बनाम **भारत संघ और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय की संविधान पीठ ने यह अभिनिर्धारित किया था कि :–

> "11. पहले चर्चा की गई मामले की तथ्यात्मक पृष्ठभूमि में अवधारण के लिए उद्भूत होने वाला प्रश्न यह है कि क्या पुराने नियम 10 और 10क के विलोपन और तारीख 6 अगस्त, 1977 की अधिसूचना सं. 267/77 द्वारा नए नियम 10 द्वारा इसके प्रतिस्थापन के पश्चात् तारीख 27 अप्रैल, 1977 की अधिसूचना द्वारा आरंभ की गई कार्यवाहियों को विधि में जारी रखे जा सकते हैं या नहीं । यदि इस प्रश्न का उत्तर सकारात्मक दिया जाता है, तब 61,41,930/- रुपए की रकम को पुन:जमा करने के लिए मांग की पुष्टि करते हुए केंद्रीय उत्पाद-शुल्क सहायक कलक्टर के तारीख 15/17 अक्तूबर, 1977 के आदेश में हस्तक्षेप नहीं किया जा सकता है । दूसरी ओर, यदि प्रश्न का उत्तर नकारात्मक दिया जाता है तब उक्त आदेश को नास्ति के रूप में लिया जाना चाहिए ।
>
> 34. (....) यह कहना सही नहीं है कि नियम के किसी विशिष्ट उपबंध के अधीन आरंभ की गई लंबित कार्यवाहियों को उक्त उपबंध को विलोपित किए जाने के पश्चात् कायम रखने के प्रश्न पर विचार करते हुए न्यायालय को लंबित कार्यवाहियों को जारी रखने के लिए नए जोड़े गए नियम में के किसी उपबंध की खोज नहीं करनी चाहिए । यह भी कहना सही नहीं है कि परीक्षण यह है कि क्या नियमों में इस आशय का कोई उपबंध है कि लंबित कार्यवाहियां उस नियम के विलोपन के पश्चात् समाप्त हो जाएंगी जिसके अधीन सूचना जारी की गई थी । हमारा यह सुविचारित मत है कि ऐसे मामले में न्यायालय को यह अवधारण करने के लिए कि क्या कोई लंबित कार्यवाही जारी रहेगी या समाप्त हो जाएगी, उस नियम में के उन उपबंधों पर विचार करना चाहिए, जो पूर्ववर्ती नियम के विलोपन के पश्चात् पुर:स्थापित किया गया है । यदि उसमें ऐसा उपबंध है कि लंबित कार्यवाहियां जारी रहेंगी और

पुराने नियम के अधीन इस प्रकार निपटाई जाएंगी मानो नियम को समाप्त या विलोपित नहीं किया गया है, तब ऐसी कार्यवाही जारी रहेगी । यदि मामला साधारण खंड अधिनियम की धारा 6 के अंतर्गत आता है या उस कानून में एक सम-विषयक उपबंध है जिसके अधीन नियम विरचित किया गया है, उस मामले में भी लंबित कार्यवाही नियम के विलोपन से प्रभावित नहीं होगी । कानून या नियम में किसी ऐसे उपबंध के अभाव में, लंबित कार्यवाहियां उस नियम के समाप्त/विलोपित हो जाने के कारण समाप्त हो जाएंगी, जिसके अधीन सूचना जारी की गई थी या कार्यवाही आरंभ की गई थी । यहां यह उल्लेख करना सुसंगत है कि प्रस्तुत मामले में राजस्व विभाग को एक निहित अधिकार से निर्निहित करने का प्रश्न उद्भूत नहीं होता है चूंकि उस तारीख को जब नियम 10 को विलोपित किया गया था, रकम का प्रतिदाय करने का निदेश देते हुए कोई आदेश पारित नहीं किया गया था ।

35. अत: हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि गुजरात उच्च न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ और कर्नाटक उच्च न्यायालय की खंड न्यायपीठ के ऊपर उल्लिखित विनिश्चय ठीक प्रकार से विनिश्चित नहीं किए गए थे । उक्त विनिश्चयों को उलटा जाता है ।

36. प्रस्तुत मामले में, नियम 10 या नियम 10-क न तो 'केंद्रीय अधिनियम' है और न ही अधिनियम में परिभाषित अनुसार 'विनियम' है । यह अधिनियम की धारा 3(51) के अधीन एक नियम हो सकता है । धारा 6 वहां लागू होती है जहां कोई केंद्रीय अधिनियम या अधिनियम साधारण खंड अधिनियम के प्रारंभ के पश्चात् बनाई गई किसी अधिनियमिति को निरसित करता है । यह किसी 'नियम' के विलोपन के मामले में लागू नहीं होता है ।

37. यह स्थिति सुपरिचित है कि कॉमन विधि में किसी कानून को निरसित करने या किसी उपबंध को समाप्त करने का साधारण प्रभाव इसे कानून की पुस्तक से इस प्रकार पूर्णतया समाप्त कर देना है मानो इसे कभी पास न किया गया हो और ऐसे कानून को ऐसी विधि के रूप में समझा जाना चाहिए जो कभी

अस्तित्व में नहीं थी । इस नियम के लिए, धारा 6(1) के उपबंधों द्वारा एक अपवाद सम्मिलित किया गया है । यदि किसी कानून के किसी उपबंध को लंबित कार्यवाहियों के पक्ष में व्यावृत्त खंड के बिना अशर्त विलोपित किया जाता है, तो सभी कार्यवाहियां वहां बंद हो जानी चाहिएं जहां विलोपन उन्हें पाता है और यदि विलोपन प्रवृत्त होने से पूर्व अंतिम अनुतोष प्रदान नहीं किया गया है, तो इसे उसके पश्चात् प्रदान नहीं किया जा सकता है । धारा 6 या विशेष अधिनियमों में अंतर्विष्ट प्रकृति की व्यावृत्तियां स्थिति को उपांतरित कर सकती हैं । इस प्रकार, भविष्य और भूतकाल के बारे में निरसन या हटा दिए जाने का प्रवर्तन अधिकांशत: लागू होने वाली व्यावृत्तियों पर निर्भर करता है । ऐसे मामले में जहां किसी कानून में के किसी उपबंध को विलोपित किया जाता है और इसके स्थान पर उसी आकस्मिकता का उपबंध करते हुए एक अन्य उपबंध लंबित कार्यवाहियों के पक्ष में एक व्यावृत्ति खंड के बिना पुर:स्थापित किया जाता है, तब युक्तियुक्त रूप से यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि विधानमंडल का आशय यह है कि लंबित कार्यवाही जारी नहीं रहेगी किंतु उसी प्रयोजन के लिए नए उपबंध के अधीन एक नई कार्यवाही आरंभ की जा सकती है ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

35. **कोटक महिन्द्रा बैंक लि.** बनाम **जिला मजिस्ट्रेट** (उपर्युक्त) वाले मामले में गुजरात उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया था कि नियम 28 का अनुशीलन करने से यह स्पष्ट है कि विधानमंडल का आशय केवल उस "माल" का अधिहरण करने का था जो भूमि, भवन, संयंत्र, मशीनरी इत्यादि जैसी स्थावर संपत्ति से सुभिन्न है । हम, अनुमोदन के साथ, उस कारण को उद्धृत करते हैं, जिस कारण से उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया है कि "उत्पाद-शुल्क और सीमा-शुल्क विभाग के सक्षम प्राधिकारी, जिसके अंतर्गत केंद्रीय उत्पाद-शुल्क और सीमा-शुल्क आयुक्त, वडोदरा-II भी है, को नियम 173थ(2) के अधीन भूमि का अधिहरण करने की कोई अधिकारिता नहीं थी, चूंकि उक्त नियम को उस समय जब तारीख 25 फरवरी, 2006 का आदेश

पारित किया गया था, हटा दिया गया था और नियम 28 द्वारा प्रतिस्थापित किया गया था । यह आदेश अधिकारिता के बिना होने के कारण विधि की दृष्टि से अकृत है और तद्द्वारा प्राधिकारियों को तारीख 25 फरवरी, 2006 के आदेश का लाभ व्युत्पन्न नहीं हो सकता है ।"

36. प्रस्तुत मामले में, तत्कालीन नियम 173थ(2) के अधीन आरंभ की गई कार्यवाहियां केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 1944 के उक्त नियम 173थ(2) का निरसन होने पर समाप्त हो जाएंगी । प्रत्यर्थी की ओर से काउंसेल की यह दलील कि कार्यवाहियां केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 की धारा 38क(ग) और धारा 38क(ड़) तथा साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 6 के कारण सुरक्षित रहेंगी, भ्रामक है और कानूनी समर्थन रहित है । प्रथमत:, जैसा कि **कोल्हापुर केनसुगर वर्क्स लि.** बनाम **भारत संघ और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में इस न्यायालय की एक संविधान न्यायपीठ द्वारा अभिनिर्धारित किया गया है, साधारण खंड अधिनियम, 1897 की धारा 6 वहां लागू होती है जहां साधारण खंड अधिनियम के प्रारंभ के पश्चात् बनाया गया कोई केंद्रीय अधिनियम या विनियम किसी अधिनियमिति को निरसित करता है । यह किसी "नियम" के विलोपन के मामले में लागू नहीं होता है । अत: धारा 6 की प्रयोज्यता के प्रश्न को नकारात्मक रूप में विनिश्चित किया जाता है । द्वितीयत:, केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 की धारा 38क(ग) और धारा 38क(ड़) की प्रयोज्यता के विवाद्यक पर यह अभिनिर्धारित किया जाता है कि प्रत्यर्थी इसके संरक्षण का उपभोग करने के योग्य नहीं होगा क्योंकि धारा 38क(ग) और धारा 38क(ड़) केवल तब लागू होती हैं जब "कोई भिन्न आशय प्रतीत न होता हो" । प्रस्तुत मामले में, विधानमंडल ने नियम 173थ(2) में अंतर्विष्ट उपबंधों का तारीख 12 मई, 2000 से विलोपन करने के पश्चात् किसी भूमि, भवन, संयंत्र, मशीनरी इत्यादि के अधिहरण की शक्ति को प्रत्यावर्तित/पुनरुज्जीवित न करने के अपने आशय को स्पष्ट किया है । विधानमंडल के इस आशय का निष्कर्ष इस तथ्य से निकाला जा सकता है कि तारीख 12 मई, 2000 से इसके विलोपन के पश्चात् किसी भूमि, भवन, संयंत्र, मशीनरी इत्यादि का अधिहरण करने की शक्ति को पश्चात्वर्ती केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 2001, केंद्रीय उत्पाद-शुल्क

नियम, 2002 और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 2017 में पुर:स्थापित नहीं किया गया है । इसके अतिरिक्त, इस आशय की पुष्टि इस तथ्य से भी होती है कि केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 1944 की धारा 211 में, अन्य बातों के साथ-साथ, यह उपबंधित है कि नियमों के अधीन अधिहृत "कोई वस्तु" तदुपरांत केंद्रीय सरकार में निहित होगी, जबकि 2001, 2002 और 2017 के केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियमों के नियम 28, जो 1944 के नियमों के पूर्ववर्ती नियम 211 का समविषयक है, में केंद्रीय सरकार में निहित होने वाली "कोई वस्तु" शब्द की बजाय अधिहृत "माल" शब्द का उपबंध किया गया है । अंतत:, तारीख 12 मई, 2000 से 1944 के नियमों के नियम 173थ(2) के विलोपन के पश्चात् और वर्ष 2001 में 1944 के नियमों के नियम 211 के अधिक्रांत होने के पश्चात् नए सिरे से अधिनियमित 2001 के नियमों का नियम 28, 2002 के नियमों का नियम 28 और 2017 के नियमों के नियम 28 में किसी भूमि, भवन, संयंत्र, मशीनरी इत्यादि का अधिहरण करने और तत्पश्चात् केंद्रीय सरकार में उनके निहित होने के बारे में उपबंध नहीं किया गया है, क्योंकि नियम 28 में केवल केंद्रीय उत्पाद-शुल्क प्राधिकारियों द्वारा उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 के अधीन अधिहृत किए गए "माल" को केंद्रीय सरकार में निहित होने का उपबंध किया गया है । विधानमंडल के आशय के इस अपसारण और **कोटक महिन्द्रा बैंक** (उपर्युक्त) वाले मामले में अधिकथित विनिश्चयधार से यह स्पष्ट हो जाता है कि इन वर्णित उपबंधों द्वारा अधिहरण की कार्यवाहियों को सुरक्षित नहीं रखा गया था और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क और सीमा-शुल्क आयुक्त द्वारा तारीख 26 मार्च, 2007 तथा 29 मार्च, 2007 के अंतिम अधिहरण आदेश अधिकारिता के बिना पारित किए गए थे ।

37. द्वितीयत:, उत्पाद-शुल्क विभाग के ऋण पर प्रतिभूत लेनदार के ऋण की पूर्विकता के विवाद्यक पर आते हैं । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय में यह अभिनिर्धारित किया है कि "<u>मामले को दृष्टिगत करते हुए, संपत्तियों पर प्रथम भार या द्वितीय भार का प्रश्न उद्भूत नहीं होता है ।</u>" इस संदर्भ में, हमारी यह राय है कि उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त करके कि संपत्तियों पर प्रथम भार या द्वितीय भार का प्रश्न उद्भूत नहीं होता है, इस विवाद्यक का गलत निर्वचन किया है ।

38. **यूटीआई बैंक लि.** बनाम **उपायुक्त, केंद्रीय उत्पाद-शुल्क** (उपर्युक्त) वाले मामले में मद्रास उच्च न्यायालय की एक पूर्ण न्यायपीठ ने इसी प्रकार के विवाद्यक पर विचार करते हुए यह अभिनिर्धारित किया था कि :–

> "25. प्रस्तुत मामले में, याची बैंक, जिसने वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, जो एक विशेष अधिनियमिति है, की धारा 13 के अधीन संपत्ति का कब्जा लिया है, निस्संदेह एक प्रतिभूत लेनदार है । हमने पहले ही केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम और सीमा-शुल्क अधिनियम के उपबंधों को निर्दिष्ट किया है । उनमें अनुसरण की जाने वाली प्रक्रियाएं और विभागों को शोध्य रकम कैसे वसूल की जानी चाहिएं, परिकल्पित हैं । न तो केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम और न ही सीमा-शुल्क अधिनियम में अन्य अधिनियमितियों में उपबंधित अनुसार 'प्रथम भार' का दावा करते हुए कोई विनिर्दिष्ट उपबंध है, जिनका हमने पूर्ववर्ती पैराओं में उल्लेख किया है ।
>
> 26. उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, हम यह निष्कर्ष निकालते हैं :–
>
> (i) साधारणतया, सरकार को शोध्य अर्थात् कर, शुल्क इत्यादि (क्राउन के ऋण) साधारण ऋणों पर पूर्विकता रखते हैं ।
>
> (ii) केवल जब संपत्ति पर 'प्रथम भार' का दावा करते हुए कानून में कोई विनिर्दिष्ट उपबंध है, तो क्राउन का ऋण अन्य के दावों पर पूर्विकता रखने का हकदार है ।
>
> (iii) <u>चूंकि केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम और सीमा-शुल्क अधिनियम में 'प्रथम भार' का दावा करते हुए कोई विनिर्दिष्ट उपबंध नहीं है, इसलिए केंद्रीय उत्पाद-शुल्क विभाग की प्रतिभूत लेनदार अर्थात् याची बैंक के दावे पर पूर्विकता नहीं हो सकती है ।</u>

(iv) केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम तथा सीमा-शुल्क अधिनियम में ऐसे विनिर्दिष्ट उपबंध के अभाव में, हम यह अभिनिर्धारित करते हैं कि प्रतिभूत लेनदार का दावा क्राउन के ऋणों पर अभिभावी होगा ।

हमारे उपरोक्त निष्कर्ष को ध्यान में रखते हुए, याची यूटीआई बैंक एक प्रतिभूत लेनदार होने के कारण केंद्रीय उत्पाद-शुल्क उपायुक्त, इस मामले में प्रथम प्रत्यर्थी के दावे पर अधिमानता रखने का हकदार है ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

इस न्यायालय ने पूर्ण न्यायपीठ के निर्णय के विरुद्ध फाइल की गई 2007 की सिविल अपील सं. 3627 को तारीख 12 सितंबर, 2009 के आदेश द्वारा खारिज करते हुए निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया था :–

"भारत संघ **बनाम** सिकॉम लि. और एक अन्य [(2009) 1 स्केल 10] वाले मामले में इस न्यायालय की खंड न्यायपीठ के निर्णय को ध्यान में रखते हुए प्रतिभूतिकरण अधिनियम, 2002 के उपबंधों का परिशीलन करते हुए हमारा यह निष्कर्ष है कि उक्त 2000 के अधिनियम के उपबंधों के अधीन अपीलार्थियों को प्रत्यर्थी बैंक द्वारा प्रतिभूत संपत्ति पर कोई कानूनी प्रथम भार नहीं था । इन परिस्थितियों में, सिविल अपील खर्चे के किसी आदेश के बिना खारिज की जाती है ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

अत: उच्च न्यायालय द्वारा दिया गया तर्काधार प्रबल हो जाता है और इस न्यायालय द्वारा अभिपुष्टि की गई है ।

39. **देना बैंक** बनाम **भीखाभाई प्रभु दास पारिख और एक अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में, जिसमें उठाया गया प्रश्न यह था कि क्या विक्रय-कर शोध्य (राज्य के ऋण की कोटि में आने वाले) की वसूली की बैंक के पक्ष में बंधक पर उधार लेने वालों की संपत्ति पर कार्यवाही करने के लिए बैंक के अधिकार पर पूर्विकता होगी या नहीं, इस न्यायालय ने निम्नलिखित मत व्यक्त किया था :–

"10. तथापि, अन्य लेनदारों पर क्राउन का ऋणों की वसूली का अधिमानी अधिकार साधारण या अप्रतिभूत लेनदारों तक सीमित है । इंग्लैंड का कॉमन लॉ या साम्या और शुद्ध अंत:करण के सिद्धांत (जैसे कि भारत में लागू हैं) क्राउन को बंधकदार या माल के किसी गिरवीदार या प्रतिभूत लेनदार पर अपने ऋणों की वसूली का अधिमानी अधिकार नहीं देते हैं ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

40. इसके अतिरिक्त, **सेंट्रल बैंक ऑफ इंडिया** बनाम **श्रीगुप्पा सुगर्स एंड केमिकल्स लि. और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में एक इसी प्रकार के मामले का न्यायनिर्णयन करते हुए इस न्यायालय ने निम्नलिखित अभिनिर्धारित किया था :–

"18. इस प्रकार, मामले को शासित करने वाले इस न्यायालय द्वारा प्रतिपादित सिद्धांतों का अनुशीलन करने पर कोई संदेह नहीं हो सकता है कि पण्यम् की गई चीनी पर अपीलार्थी-बैंक के अधिकारों की गन्ना आयुक्त और कर्मकारों के अधिकारों पर अग्रता थी । इसलिए उच्च न्यायालय ने गन्ना आयुक्त को और श्रम आयुक्त को आगमों के भागों को गन्ना उत्पादकों और कर्मचारियों को संवितरित करने के लिए अंतरिम आदेश पारित करके गलती की थी । इस बारे में कोई विवाद नहीं है कि चीनी को प्रथम प्रत्यर्थी को उधार को प्रतिभूत करने के लिए अपीलार्थी बैंक के पास गिरवी रखा गया था और उधार का प्रतिसंदाय नहीं किया गया था । माल को राजस्व वसूली प्राधिकारी की प्रेरणा पर पण्यम्-दार, अपीलार्थी-बैंक की अभिरक्षा से जबरदस्ती कब्जे में लिया गया था । इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि माल को अपीलार्थी बैंक को विधिमान्य रूप से पण्यम् किया गया था, इसलिए पण्यम्-दार के रूप में अपीलार्थी-बैंक के अधिकारों को गन्ना आयुक्त के आदेश या उसके द्वारा की गई मांगों या कर्मकारों की ओर से की गई मांगों द्वारा प्रभावित नहीं किया जा सकता था । गन्ना आयुक्त और कर्मकार दोनों समापन के अभाव में केवल अप्रतिभूत लेनदारों के रूप में हैं और उनके अधिकार माल के पण्यम्-दार के अधिकारों पर अभिभावी नहीं हो सकते हैं ।"

(बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

41. **कृष्णा लाइफस्टाइल टेक्नोलॉजिज लि.** बनाम **भारत संघ और अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में, जिसमें विचार करने के लिए विवाद्यक यह था कि "क्या केंद्रीय उत्पाद-शुल्क, 1944 के उपबंधों के अधीन वसूलीय शोध्य कर की वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 के उपबंधों के अधीन प्रतिभूत लेनदारों के दावे पर पूर्विकता है या नहीं", बंबई उच्च न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि :–

> "धारा 35 की भाषा और विनिश्चित निर्णयज विधि पर विचार करते हुए, हमारी राय में इसका कोई प्रभाव नहीं होगा क्योंकि वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम के उपबंध केंद्रीय विक्रय-कर अधिनियम के उपबंधों पर अभिभावी होते हैं और इसलिए किसी प्रतिभूत लेनदार को दी गई पूर्विकता क्राउन के शोध्य या राज्य के शोध्य को अध्यारोही करेगी ।
>
> जहां तक वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम का संबंध है, यूटीआई बैंक लि. **बनाम** केंद्रीय उत्पाद-शुल्क उपायुक्त, चेन्नै-II वाले मामले में मद्रास उच्च न्यायालय की पूर्ण न्यायपीठ ने इस विवाद्यक की गहराई से परीक्षा की थी । न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया कि सीमा-शुल्क अधिनियम और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम के अधीन शोध्य कर की किसी प्रतिभूत लेनदार के शोध्य पर पूर्विकता का दावा नहीं होता है क्योंकि न तो केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम और न ही सीमा-शुल्क अधिनियम में उन शोध्य को प्रथम भार देते हुए कोई विनिर्दिष्ट उपबंध है, और प्रतिभूत लेनदारों के दावे राज्य के दावों पर अभिभावी होंगे । उच्चतम न्यायालय द्वारा राज्य के ऋणों की पूर्विकता के मामले में घोषित की गई विधि, जिस पर पहले ही चर्चा की गई है, और वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम की धारा 35 के उपबंध पर विचार करते हुए हम मद्रास उच्च न्यायालय द्वारा अपनाए गए दृष्टिकोण से सादर सहमत हैं ।"
>
> (बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

42. बंबई उच्च न्यायालय के उपरोक्त निर्णय के विरुद्ध एक विशेष

इजाजत याचिका (सं. 12462/208) को इस न्यायालय द्वारा तारीख 17 जुलाई, 2009 को **भारत संघ** बनाम **सिकॉम लि. और एक अन्य** (उपर्युक्त) वाले मामले में के निर्णय का अवलंब लेते हुए खारिज कर दिया गया था, जिसमें अंतर्वलित प्रश्न यह था कि "क्या राज्य वित्तीय निगम अधिनियम, 1951 के निबंधनों के अनुसार प्रतिभूत ऋणों पर केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम के अधीन शुल्क की वसूली की पूर्विकता होगी" और इस न्यायालय ने यह अभिनिर्धारित किया :–

> "9. साधारणतया, ऋण वसूल करने के क्राउन के अधिकार किसी व्यक्ति के अधिकार पर अभिभावी होंगे । क्राउन के ऋणों से अभिप्रेत राज्य या राजा को शोध्य ऋण हैं ; ये ऐसे ऋण होते हैं जो क्राउन को सभी अन्य लेनदारों से पहले पूर्विकता का दावा करने का हकदार बनाता है । [पी. रामनाथा अय्यर द्वारा लिखित एडवांस्ड लॉ लेक्सीकॉन (तृतीय संस्करण) पृष्ठ 1147 देखें] । तथापि, ऐसे लेनदारों को अप्रतिभूत लेनदारों के अर्थ के रूप में अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए । इसलिए क्राउन के ऋण का सिद्धांत कॉमन विधि के सिद्धांत से संबंधित है । कोई कॉमन विधि जो संविधान के अनुच्छेद 13 के अर्थांतर्गत एक विधि है, उसे इसके अनुच्छेद 372 के निबंधनों के अनुसार व्यावृत्त किया गया है । इस प्रकार, कॉमन विधि के वे सिद्धांत जो भारत के संविधान के प्रवृत्त होने के समय पर विद्यमान थे, उन्हें ऊपर वर्णित उपबंध के कारण व्यावृत्त किया गया है । कोई ऋण जो प्रतिभूत है या जो किसी कानून के उपबंधों के कारण भारतीय संविधान के अनुच्छेद 372 के स्पष्ट अर्थ को ध्यान में रखते हुए संपत्ति पर प्रथम भार बन जाता है उसे क्राउन के ऋण पर अभिभावी होना अभिनिर्धारित किया जाना चाहिए जो कि एक अप्रतिभूत ऋण है ।"
>
> (बल देने के लिए रेखांकन किया गया है)

43. उपरोक्त को दृष्टिगत करते हुए, हमारी यह दृढ़ राय है कि अपीलार्थी की ओर से विद्वान् काउंसेल की दूसरे विवाद्यक पर दी गई दलीलों में गुणागुण है । स्पष्ट रूप से, केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 में तारीख 8 अप्रैल, 2011 से धारा 11ड़ के अंत:स्थापन से पूर्व अधिनियम, 1944 में, अन्य बातों के साथ-साथ, अधिनियम, 1944 के अधीन निर्धारिती या किसी अन्य व्यक्ति की संपत्ति पर प्रथम भार होने

के लिए उपबंध करते हुए कोई उपबंध नहीं था । अत: प्रस्तुत मामले जैसी स्थिति में, जहां भूमि, भवन, संयंत्र, मशीनरी इत्यादि को सारफेसी अधिनियम, 2002 की धारा 13 में अंतर्विष्ट उपबंधों के साथ पठित सारफेसी अधिनियम, 2002 की धारा 2(यग) से (यच) में अंतर्विष्ट उपबंधों को ध्यान में रखते हुए किसी प्रतिभूत लेनदार को बंधक/आडमान किया गया है, तो प्रतिभूत लेनदार का प्रतिभूत आस्तियों पर प्रथम भार होगा । इसके अतिरिक्त, सारफेसी अधिनियम, 2002 की धारा 35 में, अन्य बातों के साथ-साथ यह उपबंध किया गया है कि सारफेसी अधिनियम के उपबंधों का सभी अन्य रीतियों पर अध्यारोही प्रभाव होगा । यह भी उल्लेख करना आवश्यक है कि यहां तक कि केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 की धारा 11ड़ में अंतर्विष्ट उपबंध सारफेसी अधिनियम, 2002 में अंतर्विष्ट उपबंधों के अध्यधीन हैं ।

44. इस प्रकार, जैसा कि साधारण रूप से पूर्वोक्त मामलों द्वारा और विशिष्ट रूप से **भारत संघ** बनाम **सिकॉम लि.** (उपर्युक्त) वाले मामले द्वारा प्राधिकारवान रूप से स्थिर किया गया है, वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 में अंतर्विष्ट उपबंधों का तारीख 8 अप्रैल, 2011 से केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 में धारा 11-ड़ से अंत:स्थापन के पश्चात् भी 1944 के अधिनियम के उपबंधों पर अध्यारोही प्रभाव होगा ।

45. इसके अतिरिक्त, यह दलील कि अधिहरण के आदेश की विधिमान्यता को केवल इस कारण प्रश्नगत नहीं किया जा सकता है कि अपीलार्थी एक प्रतिभूत लेनदार है, भ्रामक है और प्रस्तुत विवाद्यक से विसंगत है । यह दलील कि किसी अधिहरण के आदेश को मात्र इस कारण अभिखंडित नहीं किया जा सकता है कि उसी संपत्ति की बाबत एक प्रतिभूति हित सृजित हुआ है, स्वीकार करने योग्य नहीं है । तथापि, प्रस्तुत मामले में मूल्यांकन किए जाने वाली बात यह है कि अधिहरण के आदेश को केवल इस कारण अभिखंडित नहीं किया जा रहा है कि उसी संपत्ति की बाबत एक प्रतिभूति हित सृजित हुआ है । इसके विपरीत, प्रस्तुत मामले में अधिहरण के आदेश इसलिए अभिखंडित किए जाने योग्य हैं क्योंकि स्वयमेव अधिहरण के आदेश किसी कानूनी समर्थन से रहित हैं, चूंकि उनका आधार उस उपबंध में था जिसे इन आदेशों को पारित करने के दिन को विलोपित हो गया था । अत: अधिहरण के आदेशों में यही वह अंतर्निहित त्रुटि है जो इन्हें अभिखंडित करने के लिए

मार्ग प्रशस्त करती है और न कि यह तथ्य है कि उसी संपत्ति, जिसका संबंध अधिहरण आदेशों से है, की बाबत एक प्रतिभूति हित सृजित हुआ है ।

46. इसके अतिरिक्त, यह दलील कि प्रस्तुत मामले में अधिहरण की कार्यवाहियां बैंक के पक्ष में उन्हीं संपत्तियों की बाबत भार सृजित होने से लगभग 8-9 वर्ष पूर्व आरंभ की गई थीं, भी असंगत है । इस तथ्य से कि भार अधिहरण की कार्यवाहियां आरंभ करने के बाद कुछ समयावधि व्यतीत होने के पश्चात् सृजित किया गया था, ऐसे अधिहरण के आदेश को विधिसम्मतता उपलब्ध नहीं होगी, जो किसी विधिमान्य और विद्यमान कानूनी उपबंध पर आधारित नहीं है ।

47. निष्कर्षत:, सीमा-शुल्क और उत्पाद-शुल्क आयुक्त द्वारा तारीख 26 मार्च, 2007 और 29 मार्च, 2007 को भूमि, भवन इत्यादि का अधिहरण करने के लिए केंद्रीय उत्पाद-शुल्क नियम, 1944 के नियम 173थ(2) के अधीन शक्तियों का अवलंब नहीं लिया जा सकता था जब उस तारीख को उक्त नियम 173थ(2) तारीख 12 मई, 2000 की एक अधिसूचना द्वारा विलोपित किए जाने के पश्चात् कानून की पुस्तकों में नहीं था । द्वितीयत:, प्रतिभूत लेनदार अर्थात् अपीलार्थी-बैंक के शोध्य की केंद्रीय उत्पाद-शुल्क विभाग के शोध्य पर यहां तक कि तारीख 8 अप्रैल, 2011 से केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 में धारा 11-ड़ के अंत:स्थापन के पश्चात् भी पूर्विकता होगी और वित्तीय आस्तियों का प्रतिभूतिकरण और पुनर्गठन तथा प्रतिभूति हित का प्रवर्तन अधिनियम, 2002 में अंतर्विष्ट उपबंधों का केंद्रीय उत्पाद-शुल्क अधिनियम, 1944 के उपबंधों पर अध्यारोही प्रभाव होगा ।

48. तद्नुसार, यह अपील मंजूर की जाती है और सेवा-शुल्क और केंद्रीय उत्पाद-शुल्क आयुक्त, गाजियाबाद द्वारा पारित किए गए तारीख 26 मार्च, 2007 और 29 मार्च, 2007 के अधिहरण आदेशों को अभिखंडित किया जाता है ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

[2022] 1 उम. नि. प. 440

मध्य प्रदेश राज्य

बनाम

रामजी लाल शर्मा और एक अन्य

[2022 की दांडिक अपील सं. 293]

9 मार्च, 2022

न्यायमूर्ति एम. आर. शाह और न्यायमूर्ति बी. वी. नागरत्ना

दंड संहिता, 1860 (1860 का 45) – धारा 302/34 – हत्या – सामान्य आशय – चार अभियुक्तों द्वारा आयुधों से लैस होकर मृतक को घेर लिया जाना और उसकी हत्या किया जाना – विचारण न्यायालय द्वारा सभी अभियुक्तों को दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया जाना – अपील में उच्च न्यायालय द्वारा दो अभियुक्तों (प्रत्यर्थी सं. 1 और 2-मूल अभियुक्त सं. 1 और 3) को संदेह का फायदा देते हुए दोषमुक्त किया जाना – संधार्यता – जहां प्रथम इत्तिला रिपोर्ट दर्ज कराने के प्रक्रम से लेकर सभी अभियुक्तों के नामों को प्रकटित किया गया हो और घटना के सभी प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों द्वारा एक समान रूप से दोषमुक्त अभियुक्तों सहित सभी अभियुक्तों की भूमिका के बारे में स्पष्ट कथन किया गया हो तथा अभियोजन पक्ष द्वारा यह सिद्ध और साबित किया गया हो कि सभी अभियुक्त मृतक की हत्या करने के सामान्य आशय से घटनास्थल पर आए थे, वहां यह बात अतात्विक है कि किसी अभियुक्त द्वारा आयुध का प्रयोग किया गया था या नहीं और मृतक को क्षति कारित की गई थी या नहीं, इसलिए प्रत्यर्थी-अभियुक्तों (मूल अभियुक्त सं. 1 और 3) को दोषसिद्ध करते हुए विचारण न्यायालय के निर्णय को प्रत्यावर्तित करना उचित होगा ।

इस अपील के तथ्य संक्षेप में इस प्रकार हैं कि तारीख 17 जनवरी, 2002 को सवेरे 8.30 बजे से कुछ समय पहले मृतक मुंशीलाल के भाई भागीरथ का पुत्र देवेन्द्र अभियुक्त रामजी लाल के मकान पर आटा चक्की में गेहूं की पिसाई के लिए अपने धन की मांग करने के लिए गया

था और अभियुक्त मुकेश (अभियुक्त-4) और बृजेश (अभियुक्त-3) उसे मिले । जब देवेन्द्र ने धन की मांग की तो अभियुक्त सं. 3 और अभियुक्त सं. 4 ने लात और घुसों से उस पर हमला कर दिया । जैसे-तैसे उसने अपने आपको बचाया । उक्त घटना को शिकायतकर्ता लक्ष्मीनारायण की जानकारी में लाया गया । देवेन्द्र का भाई अर्थात् रामगोपाल और पिता भागीरथ झगड़े के बारे में पूछताछ करने के लिए अभियुक्तों के मकान पर गए । सभी अभियुक्त मृतक मुंशीलाल के मकान की ओर जा रहे थे । उन्हें देखकर मृतक का चचेरे भाई अर्थात् लक्ष्मीनारायण भी मुंशीलाल के दरवाजे पर पहुंचा । अभियुक्त - मुकेश 12 बोर की दुनाली बंदूक लिए हुए था, अभियुक्त-कल्लू बृजकिशोर 12 बोर की एक नाली बंदूक लिए हुए था और अभियुक्त बृजेश **उर्फ** साधु **उर्फ** बृजनंदन तथा रामजी लाल कुल्हाड़ी लिए हुए थे । मृतक उस समय रामस्वरूप के गोडा में पेशाब करने के पश्चात् वापस आ रहा था । सभी अभियुक्तों ने उसे घेर लिया । अभियुक्त-रामजी लाल ने मुंशीलाल पर कुल्हाड़ी से प्रहार किया, जिसे मृतक द्वारा रोक लिया गया और कुल्हाड़ी को पकड़ लिया गया और उसके पश्चात् अभियुक्त मुकेश ने अपने अग्न्यायुध से गोली चला दी । अभियुक्त-कल्लू ने भी अपने अग्न्यायुध से गोली चलाई । मृतक मुंशीलाल रामस्वरूप के गोडा में गिर गया । संपूर्ण घटना को मूल शिकायतकर्ता-लक्ष्मीनारायण सहित प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों द्वारा देखा गया था । जब मुंशीलाल को पुलिस थाने ले जाया रहा था उस समय उसकी मृत्यु हो गई । सभी चारों अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302, 307, 34 और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम की धारा 3(2)(v) के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अभिलिखित कराई गई । अन्वेषण समाप्त होने के पश्चात् अन्वेषक अधिकारी द्वारा सभी अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302, 307 और 34 तथा अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम की धारा 3(2)(5) के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए आरोप पत्र फाइल किया किया । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अभिलेख पर के मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य का मूल्यांकन करने पर यह अभिनिर्धारित किया गया कि सभी अभियुक्तों द्वारा मृतक की हत्या

करने के लिए सामान्य आशय साझा किया गया था और सभी अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया । अभियुक्तों द्वारा दोषसिद्धि के निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर उच्च न्यायालय के समक्ष दांडिक अपील फाइल की गई । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा इस अपील में प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 - मूल अभियुक्त सं. 1 और 3 द्वारा फाइल की गई अपील को उन्हें संदेह का फायदा देते हुए हुए मंजूर किया गया और उन्हें दोषमुक्त कर दिया । उच्च न्यायालय द्वारा इस अपील में प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 - मूल अभियुक्त सं. 1 और 3 को उन्हें संदेह का फायदा देकर दोषमुक्त करते हुए पारित किए गए आक्षेपित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर राज्य द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए आक्षेपित निर्णय और आदेश से यह प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय जिस बात से प्रभावित हुआ था, वह यह है कि प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य तथा चिकित्सा साक्ष्य में विसंगति है और/या प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य की चिकित्सा साक्ष्य द्वारा संपुष्टि नहीं हुई है, इसलिए अभियुक्त सं. 1 और 3 की मौजूदगी संदेहास्पद है । उच्च न्यायालय के अनुसार, प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों अभि. सा. 1, अभि. सा. 3 और अभि. सा. 5 ने यह कथन किया था कि अभियुक्त सं. 1 और 3 अपने हाथों में कुल्हाड़ी लिए हुए थे, उन्होंने अपनी कुल्हाड़ी से मृतक पर आक्रमण किया था, तथापि, चिकित्सा साक्ष्य के अनुसार कुल्हाड़ी की ऐसी कोई क्षति नहीं पाई गई है । तथापि, यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि अभि. सा. 1, अभि. सा. 3 और अभि. सा. 5 सभी घटना के प्रत्यक्षदर्शी साक्षी हैं और उन पर, जहां तक अन्य अभियुक्तों का संबंध है, विश्वास किया गया है । यह भी उल्लेखनीय है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट फाइल/दर्ज करने के आरंभ से लेकर सभी अभियुक्तों के नाम प्रकटित किए गए थे । अभियुक्त सं. 1 और 3 भी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में नामित थे । सभी प्रत्यक्षदर्शी

साक्षियों ने एक समान कथन किया है कि अभियुक्त सं. 1 और 3 भी अन्य अभियुक्तों के साथ आए थे । अत: अभियोजन पक्ष द्वारा उनकी मौजूदगी को सिद्ध और साबित किया गया है । यहां तक कि अभि. सा. 1 के अभिसाक्ष्य का परिशीलन करने पर यह पाया गया है कि उसका पक्षकथन यह था कि रामजी लाल - अभियुक्त सं. 1 ने पहले मुंशीलाल पर कुल्हाड़ी से प्रहार किया था, जिसे मुंशीलाल द्वारा अपने हाथ से पकड़ लिया गया था । यदि ऐसी बात है तो स्वाभाविक रूप से मुंशी लाल के हाथ पर कोई क्षति नहीं हो सकती थी । यहां तक कि अभि. सा. 5, जो कि एक प्रत्यक्षदर्शी साक्षी है, ने भी यह अभिसाक्ष्य दिया था और प्रतिपरीक्षा में भी यह कथन किया था कि रामजीलाल ने कुल्हाड़ी से प्रहार किया था और मुंशीलाल ने कुल्हाड़ी का सिरा पकड़ लिया था, इसलिए कुल्हाड़ी मुंशीलाल को नहीं लग सकी थी । इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य और चिकित्सा साक्ष्य में कोई तात्विक विरोधाभास हैं जिसके संदेह का फायदा अभियुक्तों को दिया जाना चाहिए । अन्यथा भी, जब एक बार अभियोजन पक्ष द्वारा यह सिद्ध और साबित किया गया है कि सभी अभियुक्त मृतक की हत्या करने के लिए एक सामान्य आशय से घटनास्थल पर आए थे और उन्होंने सामान्य आशय को साझा किया था, उस दशा में यह अतात्विक है कि क्या अभियुक्तों में से किसी अभियुक्त ने, जिसने सामान्य आशय साझा किया था, किसी आयुध का प्रयोग किया था या नहीं और/या उनमें से किसी ने मृतक को कोई क्षति कारित की थी या नहीं । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पैरा 35 में मृतक की हत्या करने के लिए सभी अभियुक्तों द्वारा साझा किए गए सामान्य आशय पर विनिर्दिष्ट निष्कर्ष दिए हैं । तथापि, उच्च न्यायालय ने मामले के पूर्वोक्त महत्वपूर्ण पहलू पर कतई विचार नहीं किया था । उच्च न्यायालय ने अभिलेख पर के संपूर्ण साक्ष्य पर विचार-विमर्श और/या पुनर्मूल्यांकन नहीं किया था और अभियुक्त सं. 1 और 3 को केवल यह मत व्यक्त करते हुए दोषमुक्त कर दिया था कि प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य और चिकित्सा साक्ष्य में विरोधाभास हैं और इसलिए अभियुक्त सं. 1 और 3 की मौजूदगी संदेहास्पद है और वे संदेह के फायदे के हकदार हैं । जैसा

कि इसमें ऊपर मत व्यक्त किया गया है, प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य और चिकित्सा साक्ष्य के बीच कोई तात्विक विरोधाभास नहीं हैं । सभी अभियुक्तों की मौजूदगी को सिद्ध और साबित किया गया है और अभियोजन पक्ष यह साबित करने में भी सफल रहा है कि अभियुक्त सं. 1 और 3 सहित सभी अभियुक्तों ने सामान्य आशय साझा किया था । अत: विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभियुक्त सं. 1 और 3 सहित सभी अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए ठीक ही दोषसिद्ध किया था । उच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि को उलटकर और अभियुक्त सं. 1 और 3 - इस अपील में प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 को उन्हें संदेह का फायदा देते हुए दोषमुक्त करके गलती की थी । (पैरा 4.1, 4.2 और 4.3)

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2022 की दांडिक अपील सं. 293.

2006 की दांडिक अपील सं. 339 में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, ग्वालियर न्यायपीठ द्वारा तारीख 13 दिसंबर, 2018 को पारित किए गए निर्णय और आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से	सर्वश्री पी. वी. योगेश्वरन, अपर महाधिवक्ता, गोपाल झा, निशांत वर्मा और श्रेयश भारद्वाज
प्रत्यर्थियों की ओर से	सर्वश्री प्रशांत शुक्ला और दिव्येश प्रताप सिंह

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति एम. आर. शाह ने दिया ।

न्या. शाह – 2006 की दांडिक अपील सं. 339 में मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय, ग्वालियर न्यायपीठ द्वारा तारीख 13 दिसंबर, 2018 को पारित किए गए उस आक्षेपित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर मध्य प्रदेश राज्य ने यह अपील फाइल की है, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने उक्त अपील मंजूर की थी और इस अपील में प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 - मूल अभियुक्त सं. 1 और 3 को संदेह का फायदा देते हुए भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषमुक्त कर दिया था ।

2. अभियोजन के पक्षकथन के अनुसार, तारीख 17 जनवरी, 2002 को सवेरे 8.30 बजे से कुछ समय पहले मृतक मुंशीलाल के भाई

भागीरथ का पुत्र देवेन्द्र अभियुक्त रामजी लाल के मकान पर आटा चक्की में गेहूं की पिसाई के लिए अपने धन की मांग करने के लिए गया था और अभियुक्त मुकेश (अभियुक्त 4) और बृजेश (अभियुक्त 3) उसे मिले । जब देवेन्द्र ने धन की मांग की तो अभियुक्त सं. 3 और अभियुक्त सं. 4 ने लात और घुसों से उस पर हमला कर दिया । जैसे-तैसे उसने अपने आपको बचाया । उक्त घटना को शिकायतकर्ता लक्ष्मीनारायण की जानकारी में लाया गया । देवेन्द्र का भाई अर्थात् रामगोपाल और पिता भागीरथ झगड़े के बारे में पूछताछ करने के लिए अभियुक्तों के मकान पर गए । सभी अभियुक्त मृतक मुंशीलाल के मकान की ओर जा रहे थे । उन्हें देखकर मृतक का चचेरे भाई अर्थात् लक्ष्मीनारायण भी मुंशीलाल के दरवाजे पर पहुंचा । अभियुक्त - मुकेश 12 बोर की दुनाली बंदूक लिए हुए था, अभियुक्त-कल्लू बृजकिशोर 12 बोर की एक नाली बंदूक लिए हुए था और अभियुक्त बृजेश **उर्फ** साधु **उर्फ** बृजनंदन तथा रामजी लाल कुल्हाड़ी लिए हुए थे । मृतक उस समय रामस्वरूप के गोडा में पेशाब करने के पश्चात् वापस आ रहा था । सभी अभियुक्तों ने उसे घेर लिया । अभियुक्त-रामजी लाल ने मुंशीलाल पर कुल्हाड़ी से प्रहार किया, जिसे मृतक द्वारा रोक लिया गया और कुल्हाड़ी को पकड़ लिया गया और उसके पश्चात् अभियुक्त मुकेश ने अपने अग्न्यायुध से गोली चला दी । अभियुक्त-कल्लू ने भी अपने अग्न्यायुध से गोली चलाई । मृतक मुंशीलाल रामस्वरूप के गोडा में गिर गया । संपूर्ण घटना को मूल शिकायतकर्ता-लक्ष्मीनारायण (अभि. सा. 1) सहित प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों द्वारा देखा गया था । लक्ष्मीनारायण, देवेन्द्र और सुरेन्द्र ने मुंशीलाल को पुलिस थाने ले जाने के लिए एक चारपाई पर लिटाया किंतु जब मुंशीलाल को पुलिस थाने ले जाया रहा था उस समय उसकी मृत्यु हो गई । शिकायतकर्ता लक्ष्मीनारायण ने प्रात: 9.20 बजे सभी चारों अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302, 307, 34 और अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम की धारा 3(2)(v) के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए प्रथम इत्तिला रिपोर्ट अभिलिखित कराई । अन्वेषक अधिकारी ने अन्वेषण आरंभ किया और साक्षियों के कथन अभिलिखित किए । उसने पंचनामा तैयार किया । अन्वेषण समाप्त होने के पश्चात् अन्वेषक अधिकारी ने

सभी अभियुक्तों के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302, 307 और 34 तथा अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति (अत्याचार निवारण) अधिनियम की धारा 3(2)(5) के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए आरोप पत्र फाइल किया । चूंकि मामला अनन्य रूप से सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय था, इसलिए मामले को सेशन न्यायालय के सुपुर्द किया गया । अभियुक्तों ने दोषी न होने का अभिवाक् किया और इसलिए विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा उन सभी का पूर्वोक्त अपराधों के लिए विचारण किया गया ।

3. अभियोजन पक्ष ने मामले को साबित करने के लिए अभि. सा. 1, अभि. सा. 3 और अभि. 5 सहित पांच प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों की परीक्षा की । अभियोजन पक्ष ने डा. आर. के. तनेजा की भी अभि. सा. 6 के रूप में परीक्षा की । अभियोजन पक्ष द्वारा अन्वेषक अधिकारी की भी परीक्षा की गई । अभियोजन पक्ष की ओर से साक्ष्य बंद होने के पश्चात् दंड प्रक्रिया संहिता की धारा 313 के अधीन अभियुक्तों के भी कथन अभिलिखित किए गए । उनका पक्षकथन पूर्णत: इनकारी का था । उसके पश्चात्, विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभिलेख पर के मौखिक और दस्तावेजी साक्ष्य का मूल्यांकन करने पर यह अभिनिर्धारित किया कि सभी अभियुक्तों ने मृतक की हत्या करने के लिए सामान्य आशय साझा किया था । अभिलेख पर के साक्ष्य का मूल्यांकन करने के पश्चात् विद्वान् विचारण न्यायालय ने सभी अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषी ठहराया और सभी अभियुक्तों को पांच-पांच हजार रुपए के जुर्माने सहित आजीवन कारावास भुगतने का दंडादेश दिया ।

3.1 अभियुक्तों ने दोषसिद्धि के आक्षेपित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर उच्च न्यायालय के समक्ष 2006 की दांडिक अपील सं. 339 फाइल की । उच्च न्यायालय ने आक्षेपित निर्णय और आदेश द्वारा इस अपील में प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 - मूल अभियुक्त सं. 1 और 3 द्वारा फाइल की गई अपील को उन्हें संदेह का फायदा देते हुए और यह मत व्यक्त करते हुए मंजूर की कि प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य और

चिकित्सा साक्ष्य में विरोधाभास है और इसलिए उनकी मौजूदगी स्वयमेव संदेहास्पद है ।

3.2 उच्च न्यायालय द्वारा इस अपील में प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 - मूल अभियुक्त सं. 1 और 3 को उन्हें संदेह का फायदा देकर दोषमुक्त करते हुए पारित किए गए आक्षेपित निर्णय और आदेश से व्यथित और असंतुष्ट होकर राज्य ने यह अपील फाइल की है ।

4. संबंधित पक्षकारों की ओर से हाजिर होने वाले विद्वान् काउंसेलों को विस्तारपूर्वक सुनने और उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए आक्षेपित निर्णय और आदेश का अनुशीलन करने के पश्चात् यह प्रतीत होता है कि अभियुक्तों को दोषमुक्त करते हुए उच्च न्यायालय ने पैरा 14 में निम्नलिखित मत व्यक्त किया है :–

> "14. दलीलों को सुनने और अभिलेख का अनुशीलन करने के पश्चात् दो बातें स्पष्ट हैं : पहली, अपीलार्थी सं. 1 रामजी लाल शर्मा और अपीलार्थी सं. 3 बृजमोहन **उर्फ** कल्लू की अंतर्ग्रस्तता को सिद्ध नहीं किया गया है क्योंकि डा. तनेजा (अभि. सा. 6) द्वारा दिए गए चिकित्सा साक्ष्य से प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य की संपुष्टि नहीं होती है और दूसरी बात, जहां तक अपीलार्थी सं. 2 बृजकिशोर शर्मा **उर्फ** कल्लू का संबंध है, डा. आर. के. तनेजा (अभि. सा. 6) द्वारा दिए गए इस विनिर्दिष्ट निष्कर्ष को देखते हुए कि मृत्यु का कारण मानववध था और मृत्यु जंघास्थि की धमनी में पहुंची क्षति तथा फेफड़ों में बंदूक की गोली से पहुंची क्षति के कारण हुई थी, इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि जंघास्थि धमनी एक मार्मिक अंग नहीं है । इस प्रकार, यह स्पष्ट है कि कल्लू ने सामान्य आशय सांझा किया था, जबकि अपीलार्थी सं. 1 और 3 की मौजूदगी संदेहास्पद है । इसलिए अपीलार्थी सं. 1 और 3 को संदेह का फायदा दिया जाना चाहिए जिसके लिए विचारण न्यायालय द्वारा गलत रूप से इनकार किया गया है । जैसा कि लिलिया **बनाम** राजस्थान राज्य [(2014) 16 एस. सी. सी. 303] वाले मामले में माननीय उच्चतम न्यायालय द्वारा अभिनिर्धारित किया गया था, जब स्वतंत्र साक्षियों की परीक्षा नहीं की गई है और चिकित्सा

साक्ष्य से अभियोजन के वृत्तांत की संपुष्टि नहीं हुई है, तब दोषसिद्धि को उलटा जाता है । इसलिए इस न्यायालय का यह निष्कर्ष है कि अपीलार्थी सं. 1 रामजीलाल और अपीलार्थी सं. 3 बृजनंदन **उर्फ** बृजेश शर्मा के पक्ष में दोषमुक्ति अभिलिखित करने के लिए एक उपयुक्त मामला है । जहां तक भारतीय दंड संहिता की धारा 34 की सहायता से धारा 302 के अधीन अपीलार्थी सं. 2 की दोषसिद्धि का संबंध है, इसे स्पष्ट रूप से सिद्ध किया गया है ।"

उच्च न्यायालय द्वारा उपरोक्त निष्कर्षों/कारणों के सिवाय कोई अन्य निष्कर्ष अभिलिखित नहीं किए गए हैं ।

4.1 उच्च न्यायालय द्वारा पारित किए गए आक्षेपित निर्णय और आदेश से यह प्रतीत होता है कि उच्च न्यायालय जिस बात से प्रभावित हुआ था, वह यह है कि प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य तथा चिकित्सा साक्ष्य में विसंगति है और/या प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य की चिकित्सा साक्ष्य द्वारा संपुष्टि नहीं हुई है, इसलिए अभियुक्त सं. 1 और 3 की मौजूदगी संदेहास्पद है । उच्च न्यायालय के अनुसार, प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों अभि. सा. 1, अभि. सा. 3 और अभि. सा. 5 ने यह कथन किया था कि अभियुक्त सं. 1 और 3 अपने हाथों में कुल्हाड़ी लिए हुए थे, उन्होंने अपनी कुल्हाड़ी से मृतक पर आक्रमण किया था, तथापि, चिकित्सा साक्ष्य के अनुसार कुल्हाड़ी की ऐसी कोई क्षति नहीं पाई गई है । तथापि, यह उल्लेख किया जाना आवश्यक है कि अभि. सा. 1, अभि. सा. 3 और अभि. सा. 5 सभी घटना के प्रत्यक्षदर्शी साक्षी हैं और उन पर, जहां तक अन्य अभियुक्तों का संबंध है, विश्वास किया गया है । यह भी उल्लेखनीय है कि प्रथम इत्तिला रिपोर्ट फाइल/दर्ज करने के आरंभ से लेकर सभी अभियुक्तों के नाम प्रकटित किए गए थे । अभियुक्त सं. 1 और 3 भी प्रथम इत्तिला रिपोर्ट में नामित थे । सभी प्रत्यक्षदर्शी साक्षियों ने एक समान कथन किया है कि अभियुक्त सं. 1 और 3 भी अन्य अभियुक्तों के साथ आए थे । अत: अभियोजन पक्ष द्वारा उनकी मौजूदगी को सिद्ध और साबित किया गया है । यहां तक कि अभि. सा. 1 के अभिसाक्ष्य का परिशीलन करने पर यह पाया गया है कि उसका पक्षकथन यह था कि रामजी लाल - अभियुक्त सं. 1 ने पहले मुंशीलाल पर कुल्हाड़ी से

प्रहार किया था, जिसे मुंशीलाल द्वारा अपने हाथ से पकड़ लिया गया था । यदि ऐसी बात है तो स्वाभाविक रूप से मुंशीलाल के हाथ पर कोई क्षति नहीं हो सकती थी । यहां तक कि अभि. सा. 5, जो कि एक प्रत्यक्षदर्शी साक्षी है, ने भी यह अभिसाक्ष्य दिया था और प्रतिपरीक्षा में भी यह कथन किया था कि रामजीलाल ने कुल्हाड़ी से प्रहार किया था और मुंशीलाल ने कुल्हाड़ी का सिरा पकड़ लिया था, इसलिए कुल्हाड़ी मुंशीलाल को नहीं लग सकी थी । इसलिए यह नहीं कहा जा सकता है कि प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य और चिकित्सा साक्ष्य में कोई तात्विक विरोधाभास हैं जिसके संदेह का फायदा अभियुक्तों को दिया जाना चाहिए ।

4.2 अन्यथा भी, जब एक बार अभियोजन पक्ष द्वारा यह सिद्ध और साबित किया गया है कि सभी अभियुक्त मृतक की हत्या करने के लिए एक सामान्य आशय से घटनास्थल पर आए थे और उन्होंने सामान्य आशय को साझा किया था, उस दशा में यह अतात्विक है कि क्या अभियुक्तों में से किसी अभियुक्त ने, जिसने सामान्य आशय साझा किया था, किसी आयुध का प्रयोग किया था या नहीं और/या उनमें से किसी ने मृतक को कोई क्षति कारित की थी या नहीं ।

4.3 विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पैरा 35 में मृतक की हत्या करने के लिए सभी अभियुक्तों द्वारा साझा किए गए सामान्य आशय पर विनिर्दिष्ट निष्कर्ष दिए हैं । तथापि, उच्च न्यायालय ने मामले के पूर्वोक्त महत्वपूर्ण पहलू पर कतई विचार नहीं किया था । उच्च न्यायालय ने अभिलेख पर के संपूर्ण साक्ष्य पर विचार-विमर्श और/या पुनर्मूल्यांकन नहीं किया था और अभियुक्त सं. 1 और 3 को केवल यह मत व्यक्त करते हुए दोषमुक्त कर दिया था कि प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य और चिकित्सा साक्ष्य में विरोधाभास हैं और इसलिए अभियुक्त सं. 1 और 3 की मौजूदगी संदेहास्पद है और वे संदेह के फायदे के हकदार हैं । जैसा कि इसमें ऊपर मत व्यक्त किया गया है, प्रत्यक्षदर्शी साक्ष्य और चिकित्सा साक्ष्य के बीच कोई तात्विक विरोधाभास नहीं हैं । सभी अभियुक्तों की मौजूदगी को सिद्ध और साबित किया गया है और अभियोजन पक्ष यह साबित करने में भी सफल रहा है कि अभियुक्त सं. 1 और 3 सहित सभी अभियुक्तों ने सामान्य आशय साझा किया था ।

अत: विद्वान् विचारण न्यायालय ने अभियुक्त सं. 1 और 3 सहित सभी अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए ठीक ही दोषसिद्ध किया था । उच्च न्यायालय ने दोषसिद्धि को उलटकर और अभियुक्त सं. 1 और 3 - इस अपील में प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 को उन्हें संदेह का फायदा देते हुए दोषमुक्त करके गलती की थी ।

5. उपरोक्त को दृष्टिगत करते हुए और ऊपर उल्लिखित कारणों से यह अपील सफल होती है । मध्य प्रदेश उच्च न्यायालय द्वारा 2006 की दांडिक अपील सं. 339 में, जहां तक इस अपील में प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 - मूल अभियुक्त सं. 1 और 3 को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषमुक्त करने का संबंध है, पारित किया गया आक्षेपित निर्णय और आदेश तद्द्वारा अभिखंडित और अपास्त किया जाता है । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा इस अपील में प्रत्यर्थी सं. 1 और 2 - मूल अभियुक्त सं. 1 और 3 को भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन दंडनीय अपराधों के लिए दोषसिद्ध करते हुए पारित किए गए निर्णय और आदेश को तद्द्वारा प्रत्यावर्तित किया जाता है । विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा अधिरोपित दंडादेश को भी प्रत्यावर्तित किया जाता है । अब इस अपील में प्रत्यर्थी - मूल अभियुक्त विद्वान् विचारण न्यायालय द्वारा पारित दोषसिद्धि और दंडादेश के निर्णय और आदेश के अनुसार शेष दंडादेश भुगतेंगे । प्रत्यर्क्षी सं. 1 और 2 आज से चार सप्ताह की अवधि के भीतर संबंधित जेल प्राधिकारियों या न्यायालय के समक्ष अभ्यर्पण करेंगे । तद्नुसार, यह अपील मंजूर की जाती है ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

[2022] 1 उम. नि. प. 451

तरलोचन सिंह उर्फ **राणा**

बनाम

पंजाब राज्य

[2018 की दांडिक अपील सं. 293]

29 मार्च, 2022

मुख्य न्यायमूर्ति एन. वी. रमना, न्यायमूर्ति कृष्ण मुरारी और न्यायमूर्ति हिमा कोहली

आयुध अधिनियम, 1959 (1959 का 54) – धारा 29 और 30 – अग्न्यायुध के अनुज्ञप्तिधारी द्वारा इसे ऐसे व्यक्ति को परिदत्त किया जाना जो कब्जे में रखने का हकदार न हो और अनुज्ञप्ति की किसी शर्त का उल्लंघन होना – अपीलार्थी-अभियुक्त की अनुज्ञप्त राइफल को सह-अभियुक्त द्वारा उनके सह-स्वामित्व के फार्म हाउस से ले जाना और मृतक की हत्या करने में प्रयोग किया जाना – दोषसिद्धि – संधार्यता – जहां अभियोजन पक्ष यह साबित करने में असफल रहा हो कि अभियुक्त द्वारा अपना अग्न्यायुध सह-अभियुक्त को स्वेच्छा से और जानबूझकर तथा मृतक की हत्या करने में मिली-भगत करके सौंपा गया था, वहां अग्न्यायुध के अनुज्ञप्तिधारी-अभियुक्त की अधिनियम की उक्त धाराओं के अधीन दोषसिद्धि को कायम नहीं रखा जा सकता है और उसे दोषमुक्त करना उचित होगा ।

इस अपील के तथ्यों के अनुसार, अपीलार्थी एक 12 बोर की दुनाली बंदूक का अनुज्ञप्तिधारी था, जिसे सह-अभियुक्त उन दोनों के सह-स्वामित्व वाले फार्म हाउस से ले गया और उसका प्रयोग गुरदीप सिंह नाम व्यक्ति की हत्या करने में किया गया । पुलिस द्वारा सभी अभियुक्तों को गिरफ्तार किया गया । अन्वेषण पूर्ण होने के उपरांत न्यायालय के समक्ष आरोप पत्र फाइल किया गया । विचारण न्यायालय द्वारा अन्य अभियुक्तों को भारतीय दंड संहिता की विभिन्न धाराओं के अधीन दोषसिद्ध और दंडादिष्ट करने के साथ-साथ अपीलार्थी-अभियुक्त

को भारतीय दंड संहिता की धारा 120-ख तथा आयुध अधिनियम की धारा 29 और 30 के अधीन दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया गया । अपीलार्थी द्वारा व्यथित होकर विचारण न्यायालय के दोषसिद्धि और दंडादेश के आदेश को चुनौती देते हुए उच्च न्यायालय के समक्ष अपील फाइल की गई । उच्च न्यायालय द्वारा अपीलार्थी की आयुध अधिनियम की धारा 29 और 30 के अधीन दोषसिद्धि को कायम रखा क्योंकि अपीलार्थी 12 बोर की दुनाली राइफल का अनुज्ञप्तिधारी था, जिसका प्रयोग अभियुक्त गुरप्रीत सिंह **उर्फ** टीटू द्वारा मृतक की हत्या करने में किया गया था । तथापि, अपीलार्थी की भारतीय दंड संहिता की धारा 120-ख के अधीन दोषसिद्धि के विषय में उच्च न्यायालय ने यह पाया कि पुलिस ने अपीलार्थी को केवल आयुध अधिनियम की धारा 25, 27, 29 और 30 के अधीन गिरफ्तार किया था और अभियोजन पक्ष द्वारा अपीलार्थी के विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 और 120-ख के अधीन अपराधों का न तो अभिकथन किया गया था और न ही साबित किए गए थे, इस प्रकार विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को इस संबंध में गलत रूप से दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया था । तद्नुसार, उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की अपील को भारतीय दंड संहिता की धारा 120-ख के अधीन अपराध से उसे दोषमुक्त करने की सीमा तक मंजूर किया, तथापि, उच्च न्यायालय ने आयुध अधिनियम की धारा 29 और 30 के अधीन अपीलार्थी की दोषसिद्धि को कायम रखा । उच्च न्यायालय के आदेश से व्यथित होकर अपीलार्थी द्वारा उच्चतम न्यायालय में अपील फाइल की गई । उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील मंजूर करते हुए,

अभिनिर्धारित – मामले के अभिलेख का परिशीलन करने और संपूर्ण तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने के पश्चात् इस न्यायालय का यह मत है कि अभियोजन पक्ष यह साबित करने में असफल रहा है कि अपीलार्थी ने सह-अभियुक्त गुरप्रीत सिंह **उर्फ** टीटू को अग्न्यायुध मृतक की हत्या करने के लिए उसके साथ मिली-भगत करके सौंपा था जिससे कि उसे आयुध की धारा 29 के अधीन दोषसिद्ध किया जा सके । यद्यपि उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 120-ख

के अधीन दंडनीय अपराध से दोषमुक्त कर दिया था, किंतु अपीलार्थी की आयुध अधिनियम की धारा 29 और 30 के अधीन दोषसिद्धि और दंडादेश को कायम रखा था । अभियोजन पक्ष के वृत्तांत को ध्यान में रखते हुए, अपीलार्थी को धारा 29(ख) के अधीन आरोपित किया जा सकता था किंतु अभियोजन पक्ष द्वारा केवल यह सिद्ध करने के पश्चात् कि उसने सह-अभियुक्त गुरप्रीत सिंह को अग्न्यायुध स्वेच्छा से और जानबूझकर दिया था । यह सिद्ध करने के लिए तनिक भी साक्ष्य नहीं है कि सह-अभियुक्त गुरप्रीत सिंह को अग्न्यायुध अपीलार्थी द्वारा सौंपा गया था । इसके विपरीत, यह प्रतीत होता है कि सह-अभियुक्त गुरप्रीत सिंह **उर्फ** टीटू अपीलार्थी के अनुज्ञप्त अग्न्यायुध को उसकी अनुज्ञा और जानकारी के बिना ले गया था और उक्त आयुध का प्रयोग मृतक की हत्या करने में किया था । स्वीकृत रूप से, प्रश्नगत अग्न्यायुध उस फार्म हाउस में रखा हुआ था जो अपीलार्थी और सह-अभियुक्त गुरप्रीत सिंह के सह-स्वामित्व में था और इसे वहां से सह-अभियुक्त गुरप्रीत सिंह द्वारा अवैध रूप से और अपीलार्थी की अनुज्ञा के बिना ले जाया गया था । यह तथ्यात्मक स्थिति होने के कारण अपीलार्थी को आयुध अधिनियम की धारा 29 के अधीन आरोपित नहीं किया जा सकता था और उच्च न्यायालय द्वारा उक्त धारा के अधीन की गई उसकी दोषसिद्धि कायम रखने योग्य नहीं है और इस सीमा तक उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय को तद्द्वारा अपास्त किया जाता है । जब एक बार अपीलार्थी को उच्च न्यायालय द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 120-ख के अधीन अपराध से और इस न्यायालय द्वारा आयुध अधिनियम की धारा 29 से इस आधार पर दोषमुक्त कर दिया गया है कि अभियोजन पक्ष यह सिद्ध करने में असफल रहा था कि उसके द्वारा अग्न्यायुध को जानबूझकर और स्वेच्छा से विलग किया गया था और सह-अभियुक्त द्वारा इसे उसकी जानकारी के बिना ले जाया गया था और अपराध कारित करने में इसका प्रयोग किया था, अपीलार्थी को आयुध अधिनियम की धारा 30 के अधीन भी दोषसिद्ध और दंडित करने का कोई औचित्य प्रतीत नहीं होता है । (पैरा 15, 17, 18 और 19)

अपीली (दांडिक) अधिकारिता : 2018 की दांडिक अपील सं. 293.

2011 की दांडिक अपील सं. 1033 में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ की खंड न्यायपीठ द्वारा तारीख 27 फरवरी, 2017 को पारित किए गए निर्णय और अंतिम आदेश के विरुद्ध अपील ।

अपीलार्थी की ओर से श्री ए. सिराजुद्दीन, ज्येष्ठ अधिवक्ता

प्रत्यर्थी की ओर से सुश्री जसप्रीत गोगिया

न्यायालय का निर्णय न्यायमूर्ति कृष्ण मुरारी ने दिया ।

न्या. मुरारी – यह अपील 2011 की दांडिक अपील सं. 1033-डीबी में पंजाब और हरियाणा उच्च न्यायालय, चंडीगढ़ (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'उच्च न्यायालय' कहा गया है) द्वारा तारीख 27 फरवरी, 2017 को पारित किए गए उस निर्णय और अंतिम आदेश के विरुद्ध फाइल की गई है, जिसके द्वारा उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की भारतीय दंड संहिता की धारा 120-ख के अधीन दोषसिद्धि और दंडादेश को अपास्त कर दिया था, तथापि, उच्च न्यायालय ने आयुध अधिनियम की धारा 29 और 30 के अधीन अपीलार्थी की दोषसिद्धि और दंडादेश को कायम रखा था जिसके द्वारा अपीलार्थी को आयुध अधिनियम की धारा 29 के अधीन तीन वर्ष का कठोर कारावास और आयुध अधिनियम की धारा 30 के अधीन तीन माह का कठोर कारावास भुगतने का दंडादेश दिया गया था ।

2. संक्षेप में अभियोजन का पक्षकथन यह है कि तारीख 10 अगस्त, 2007 को गुरदीप सिंह नामक व्यक्ति (जिसे इसमें इसके पश्चात् 'मृतक' कहा गया है) की मृत्यु के संबंध में दूरभाष पर एक संदेश प्राप्त होने पर निरीक्षक प्रीतम सिंह, पुलिस थाना सदर रूपनगर (जिसे इसे इसमें इसके पश्चात् 'अन्वेषक अधिकारी/आईओ' कहा गया है) घटनास्थल पर पहुंचा और श्रीमती सुखजीत कौर (अभियुक्त-3), मृतक गुरदीप सिंह की पत्नी का कथन अभिलिखित किया जिसमें उसने कथन किया कि उसका तारीख 13 दिसंबर, 2005 को मृतक के साथ विवाह हुआ था और विवाह के पश्चात् मृतक उसे उसके दांपत्य गृह में उसकी सास के साथ रहने के लिए छोड़कर दुबई चला गया था, जहां वह एक ट्रक ड्राइवर के रूप में कार्य करता था । मृतक तारीख 1 अगस्त, 2007 को भारत

वापस आया था और तारीख 3 अगस्त, 2007 को वह मृतक के साथ गांव किशनपुरा में अपने पैतृक गृह गई थी और अगले दिन वे दोनों अपने भाई की बुलेट मोटरसाइकिल संख्यांक पीबी-12-एफ-3805 पर गुरुद्वारा सोलखियां साहिब गए थे, उसके पश्चात् वापस आते हुए उसने मृतक को गांव बाहमन माजरा की बाह्य सीमा पर एक झाड़ी के निकट रुकने के लिए कहा जिससे वह शौच से निवृत्त हो सके, जब वह वापस आई तो मृतक ने उसे बताया कि दो व्यक्ति गांव सिंह से एक मोटर साइकिल पर आए थे, उनमें से एक लंबी नली की राइफल लिए हुए था, वे उसके पास आए किंतु कुछ ग्रामीणों को आते हुए देखकर वे वापस चले गए । उसके पश्चात्, तारीख 10 अगस्त, 2007 को लगभग 11.30 बजे पूर्वाह्न में सुरजीत कौर और मृतक गांव अफीजाबाद में अपनी नानी से मुलाकात करने के पश्चात् लौट रहे थे, तो रास्ते में सुखजीत कौर का दुपट्टा मोटरसाइकिल के पहिए में फंस गया, इसे निकालने के लिए मृतक ने मोटरसाइकिल को रोका और जब सुखजीत कौर पहिए से दुपट्टा निकाल रही थी तो एक मच्छर उसकी आंख में चला गया, उसी क्षण दो व्यक्ति मृतक के पास आए और उनमें से एक ने मृतक की गोली मार कर हत्या कर दी । जब तक सुखजीत कौर मुड़ी, हमलावर बचकर भाग गए ।

3. सुखजीत कौर के कथन के आधार पर पुलिस ने भारतीय दंड संहिता की धारा 302 और आयुध अधिनियम की धारा 24 के अधीन 2007 की प्रथम इत्तिला रिपोर्ट सं. 119 अभिलिखित की । वरिष्ठ पुलिस अधीक्षक, रूपनगर घटनास्थल पर पहुंचे और मृतक की माता श्रीमती भूपिन्द्र कौर ने अपने पुत्र के शव की शनाख्त की, जिसके पश्चात् जीत सिंह नामक व्यक्ति, गांव अल्लौर के पूर्व सरपंच ने अन्वेषक अधिकारी को बताया कि हत्या सुखजीत कौर द्वारा अपने मित्र/प्रेमी गुरप्रीत सिंह **उर्फ** टीटू और सुखजिन्द्र सिंह नामक व्यक्ति की मिली-भगत से की गई है और इस बात की पुष्टि मृतक की माता द्वारा की गई । उसके पश्चात्, तारीख 12 अगस्त, 2007 को जीत सिंह और रणजीत सिंह ने सुखजीत कौर, गुरप्रीत सिंह **उर्फ** टीटू और सुखजिन्द्र सिंह को अन्वेषक अधिकारी के समक्ष पेश किया, जिसने उन्हें

गिरफ्तार कर लिया, जीत सिंह ने पुलिस को यह भी सूचित किया कि गुरप्रीत सिंह और सुखजीत कौर ने एक-दूसरे के साथ प्यार होने की बात स्वीकार की है और सभी तीनों अभियुक्तों ने उसके समक्ष अपने दोष को स्वीकार किया है । पुलिस अभिरक्षा में रहते हुए अभियुक्त गुरप्रीत सिंह **उर्फ** टीटू ने एक प्रकटन कथन किया कि उसने एक खाली कारतूस/खोल को गांव सनाणा में फार्म हाउस में कुछ ईंटों के नीचे छिपाकर रखा है, उसके पश्चात् अभियुक्त पुलिस को उसकी बरामदगी के लिए उस स्थल पर लेकर गया । उसके पश्चात्, परिप्रश्न के दौरान अभियुक्त गुरप्रीत सिंह **उर्फ** टीटू ने अभिरक्षा में रहते हुए एक अन्य प्रकटन कथन किया, जिसमें उसने कहा कि उसने 12 बोर की दुनाली बंदूक को गांव सनाणा में अपने फार्म हाउस में छिपाकर रखा है और इसके बारे में केवल उसे जानकारी है, पुलिस द्वारा उसे उसके बताने पर बरामद और अभिगृहीत किया गया । बाद में अभियुक्त गुरप्रीत सिंह **उर्फ** टीटू ने यह कथन किया कि बंदूक अपीलार्थी की है, अन्वेषक अधिकारी द्वारा आगे अन्वेषण करने पर यह पाया गया कि मृतक की हत्या करने में प्रयुक्त बंदूक का अनुज्ञप्ति अपीलार्थी के नाम पर था । उसके पश्चात्, अपीलार्थी को गिरफ्तार किया गया और उसने तारीख 15 अगस्त, 2007 के अपने प्रकटन कथन में पुलिस को बताया कि उसने 12 बोर की दुनाली बंदूक का अनुज्ञप्ति अपने मकान में रखा है और जिसके बारे में केवल उसे जानकारी है । उसके पश्चात् अपीलार्थी पुलिस को अपने मकान पर ले गया और अनुज्ञप्ति की बरामदगी कराई ।

4. उसके पश्चात्, अन्वेषण पूर्ण होने के उपरांत पुलिस ने मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, रूपनगर के न्यायालय के समक्ष आरोप पत्र फाइल किया जिसमें मामले को सेशन न्यायालय, रूपनगर के सुपुर्द कर दिया क्योंकि भारतीय दंड संहिता की धारा 302 के अधीन अपराध अनन्य रूप से सेशन न्यायालय द्वारा विचारणीय है । सेशन न्यायाधीश ने एक प्रथम दृष्टया मामला पाकर अभियुक्तों को निम्न प्रकार से आरोपित किया :

अभियुक्त का नाम	**धारा के अधीन आरोपित**
गुरप्रीत सिंह **उर्फ** टीटू	भारतीय दंड संहिता की धारा 120-ख

	और 302 आयुध अधिनियम की धारा 27
सुखजिन्द्र सिंह	भारतीय दंड संहिता की धारा 120-ख भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302
सुखजीत कौर	भारतीय दंड संहिता की धारा 120-ख भारतीय दंड संहिता की धारा 34 के साथ पठित धारा 302
तरलोचन सिंह (अपीलार्थी)	भारतीय दंड संहिता की धारा 120-ख आयुध अधिनियम की धारा 29 और 30

अपीलार्थी सहित अभियुक्तों ने दोषी न होने का अभिवाक् किया और विचारण किए जाने का दावा किया ।

5. अभियोजन पक्ष ने मामले को सिद्ध करने के लिए 28 साक्षियों की परीक्षा की और अपराध में आलिप्त करने वाले सभी साक्ष्य को अभियुक्त व्यक्तियों के समक्ष पढ़कर सुनाया गया किंतु उन्होंने अभिकथनों से इनकार किया, दोनों अभियुक्तों गुरप्रीत सिंह और अपीलार्थी ने कोई प्रकटन कथन किए जाने और/या उनसे कोई बरामदगी किए जाने की बात से इनकार किया, तथापि, अन्य दो अभियुक्तों ने कोई विनिर्दिष्ट अभिवाक् नहीं किया । विचारण न्यायालय ने अभियुक्तों को निम्न प्रकार से दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया :

सिद्धदोष व्यक्ति का नाम	**अपराध**	**अधिनिर्णीत दंडादेश**
सुखजीत कौर	भा. द. सं. की धारा 120-ख	आजीवन कठोर कारावास और पांच हजार रुपए का जुर्माना और जुर्माने के संदाय में

		व्यतिक्रम करने पर एक वर्ष का कठोर कारावास भुगतेगी । आजीवन कठोर कारावास और पांच हजार रुपए का जुर्माना और जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर एक वर्ष का कठोर कारावास भुगतेगी ।
	भा. द. सं. की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन	
तरलोचन सिंह **उर्फ** राणा	भा. द. सं. की धारा 120-ख	आजीवन कठोर कारावास और पांच हजार रुपए का जुर्माना और जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर एक वर्ष का कठोर कारावास भुगतेगा । क्रमश: तीन वर्ष का कठोर कारावास और छह माह का कठोर कारावास
	आयुध अधिनियम की धारा 29 और 30	
गुरप्रीत सिंह **उर्फ** टीटू	भा. द. सं. की धारा 120-ख	आजीवन कठोर कारावास और पांच हजार रुपए का जुर्माना और जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर एक वर्ष का कठोर कारावास भुगतेगा । आजीवन कठोर कारावास और पांच हजार रुपए का जुर्माना और जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर एक वर्ष का कठोर कारावास भुगतेगा । सात वर्ष का कारावास और 2000/- रुपए का जुर्माना तथा
	भा. द. सं. की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन	

	आयुध अधिनियम की धारा 27	जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर छह माह का कठोर कारावास भुगतेगा ।
सुखजिन्द्र सिंह	भा. द. सं. की धारा 120-ख	आजीवन कठोर कारावास और पांच हजार रुपए का जुर्माना और जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर एक वर्ष का कठोर कारावास भुगतेगा ।
	भा. द. सं. की धारा 34 के साथ पठित धारा 302 के अधीन	आजीवन कठोर कारावास और पांच हजार रुपए का जुर्माना और जुर्माने के संदाय में व्यतिक्रम करने पर एक वर्ष का कठोर कारावास भुगतेगा ।

6. अपीलार्थी ने व्यथित होकर विचारण न्यायालय के दोषसिद्धि और दंडादेश के आदेश को चुनौती देते हुए उच्च न्यायालय के समक्ष दांडिक अपील सं. डी-1-33-डीबी-2011 फाइल की । उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की आयुध अधिनियम की धारा 29 और 30 के अधीन दोषसिद्धि को कायम रखा क्योंकि अभियोजन पक्ष ने निर्गम प्राधिकारी के अभिलेख का सत्यापन करके सफलतापूर्वक यह सिद्ध किया था कि अपीलार्थी 12 बोर की दुनाली राइफल का अनुज्ञप्तिधारी था, जिसका प्रयोग अभियुक्त गुरप्रीत सिंह **उर्फ** टीटू द्वारा मृतक की हत्या करने में किया गया था । इसके अतिरिक्त, पुलिस द्वारा अपीलार्थी के बताने पर अनुज्ञप्ति बरामद और अभिगृहीत की गई थी, जबकि 12 बोर की दुनाली राइफल (हत्या करने में प्रयुक्त आयुध) को पुलिस द्वारा अभियुक्त गुरप्रीत सिंह **उर्फ** टीटू के बताने पर बरामद किया गया था ।

7. तथापि, अपीलार्थी की भारतीय दंड संहिता की धारा 120-ख के अधीन दोषसिद्धि के विषय में उच्च न्यायालय ने यह पाया कि पुलिस ने अपीलार्थी को केवल आयुध अधिनियम की धारा 25, 27, 29 और 30 के अधीन गिरफ्तार किया था और अभियोजन पक्ष द्वारा अपीलार्थी के

विरुद्ध भारतीय दंड संहिता की धारा 302/34 और 120-ख के अधीन अपराधों का न तो अभिकथन किया गया था और न ही साबित किए गए थे, इस प्रकार विचारण न्यायालय ने अपीलार्थी को इस संबंध में गलत रूप से दोषसिद्ध और दंडादिष्ट किया था । तद्नुसार, उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी की अपील को भारतीय दंड संहिता की धारा 120-ख के अधीन अपराध से उसे दोषमुक्त करने की सीमा तक मंजूर किया, तथापि, उच्च न्यायालय ने आयुध अधिनियम की धारा 29 और 30 के अधीन अपीलार्थी की दोषसिद्धि को कायम रखा और मुख्य न्यायिक मजिस्ट्रेट, रूपनगर को यह निदेश दिया गया कि अपीलार्थी को दंडादेश के शेष भाग को भुगतने के लिए उसे अभिरक्षा में लिया जाए ।

8. अपीलार्थी ने उच्च न्यायालय के आदेश से व्यथित होकर यह अपील फाइल की है ।

9. हमने पक्षकारों के विद्वान् काउंसेलों को सुना और अभिलेख का परिशीलन किया ।

10. अपीलार्थी की ओर से विद्वान् ज्येष्ठ काउंसेल श्री ए. सिराजुद्दीन ने यह दलील दी कि अपराध अपीलार्थी की जानकारी के बिना कारित किया गया था, क्योंकि अभियुक्त गुरप्रीत सिंह **उर्फ** टीटू 12 बोर की दुलानी राइफल को अपीलार्थी और अभियुक्त गुरप्रीत सिंह **उर्फ** टीटू के सह-स्वामित्व वाले फार्म हाउस से अवैध रूप से ले गया था, जिसके बाद उसने उक्त राइफल का प्रयोग हत्या करने में किया था ।

11. यह भी दलील दी गई कि यद्यपि अपीलार्थी 12 बोर की दुनाली राइफल का अनुज्ञप्तिधारी था, तो भी उसने अपनी राइफल को स्वेच्छा से विलग नहीं किया था और अन्य सह-अभियुक्त द्वारा रचे गए षड्यंत्र में उसकी कोई भूमिका नहीं थी । उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 120-ख के अधीन अपराध से दोषमुक्त करते हुए यह मत व्यक्त किया था कि अपीलार्थी अपनी अनुज्ञप्त राइफल को आयुध अधिनियम के अधीन अनुज्ञप्ति नियमों के उल्लंघन में अभियुक्त गुरप्रीत सिंह **उर्फ** टीटू को हत्या करने के लिए स्वेच्छा से नहीं सौंप सकता था ।

12. प्रत्यर्थी राज्य की ओर से पुलिस उप अधीक्षक (ग्रामीण), रूपनगर ने एक शपथपत्र के द्वारा यह कथन करते हुए लिखित दलीलें फाइल कीं कि अपीलार्थी सह-अभियुक्त गुरप्रीत सिंह **उर्फ** टीटू द्वारा हत्या करने में प्रयुक्त की गई 12 बोर की दुनाली राइफल का अनुज्ञप्तिधारी था, इसलिए अनुज्ञप्तिधारी होने के कारण अपीलार्थी का यह कर्तव्य था कि वह उक्त अग्न्यायुध को सुरक्षित अभिरक्षा में रखे जिससे कोई व्यक्ति उसका अवैध रूप से प्रयोग न कर सके या ले जा न सके ।

13. राज्य की ओर से विद्वान् काउंसेल सुश्री जसप्रीत गोगिया ने यह भी दलील दी कि अपीलार्थी ने अग्न्यायुध की चोरी के लिए कोई शिकायत दर्ज नहीं की थी, जिससे उक्त अग्न्यायुध को संभालने में उसकी उपेक्षा दर्शित होती है । इसके अतिरिक्त, अपीलार्थी ने अभिलेख पर कोई दस्तावेज या साक्ष्य इस तथ्य की पुष्टि करने के लिए प्रस्तुत नहीं किया था कि गांव सनाणा में फार्म हाउस वास्तव में अपीलार्थी और सह-अभियुक्त गुरप्रीत सिंह **उर्फ** टीटू की सह-स्वामित्व की संपत्ति थी ।

14. इसके अनुसरण में, अपीलार्थी की ओर से काउंसेल ने गांव सनाणा, जिला रोपड़ ने फार्म भूमि/फार्म हाउस की जमाबंदी को अभिलेख पर प्रस्तुत किया जिससे यह पता चलता है कि फार्म हाउस अपीलार्थी और अभियुक्त गुरप्रीत सिंह **उर्फ** टीटू के संयुक्त स्वामित्व में था । अपीलार्थी की ओर से काउंसेल ने यह भी बताया कि यद्यपि विचारण न्यायालय ने प्रतिरक्षा और अभियोजन पक्ष से फार्म हाउस के सह-स्वामित्व के सबूत को प्रस्तुत करने के लिए कहा था, किंतु अपीलार्थी उक्त दस्तावेज के महत्व से अनभिज्ञ होने के कारण इसे विचारण न्यायालय के समक्ष फाइल करने में असफल रहा था, जिसके कारण विचारण न्यायालय इस निष्कर्ष पर पहुंचा था कि अपीलार्थी ने सह-अभियुक्त गुरप्रीत सिंह **उर्फ** टीटू को बंदूक स्वेच्छा से सौंपी थी और एक सह-षड्यंत्रकारी था ।

15. मामले के अभिलेख का परिशीलन करने और संपूर्ण तथ्यों और परिस्थितियों पर विचार करने के पश्चात् हमारा यह मत है कि अभियोजन पक्ष यह साबित करने में असफल रहा है कि अपीलार्थी ने

सह-अभियुक्त गुरप्रीत सिंह **उर्फ** टीटू को अग्न्यायुध मृतक की हत्या करने के लिए उसके साथ मिली-भगत करके सौंपा था जिससे कि उसे आयुध की धारा 29 के अधीन दोषसिद्ध किया जा सके । यद्यपि उच्च न्यायालय ने अपीलार्थी को भारतीय दंड संहिता की धारा 120-ख के अधीन दंडनीय अपराध से दोषमुक्त कर दिया था, किंतु अपीलार्थी की आयुध अधिनियम की धारा 29 और 30 के अधीन दोषसिद्धि और दंडादेश को कायम रखा था ।

16. आयुध अधिनियम की धारा 29 निम्नलिखित है :–

"**धारा 29 – जानते हुए अनुज्ञप्ति रहित व्यक्ति से आयुध आदि क्रय करने के लिए या आयुध आदि ऐसे व्यक्ति को परिदत्त करने के लिए जो उन्हें कब्जे में रखने का हकदार न हो, दंड** – जो कोई –

(क) किसी अन्य व्यक्ति से ऐसे वर्ग या वर्णन के कोई भी अग्न्यायुध या कोई भी अन्य आयुध, जैसे विहित किए जाएं, या कोई गोलाबारूद यह जानते हुए क्रय करेगा कि ऐसा अन्य व्यक्ति धारा 5 के अधीन अनुज्ञप्त या प्राधिकृत नहीं है ; या

(ख) कोई आयुध या गोलाबारूद किसी अन्य व्यक्ति के कब्जे में पहले से इस बात का अभिनिश्चय किए बिना परिदत्त करेगा कि ऐसा अन्य व्यक्ति उन्हें इस अधिनियम या किसी अन्य तत्समय प्रवृत्त विधि के आधार पर अपने कब्जे में रखने का हकदार है और अपने कब्जे में रखने से इस अधिनियम या ऐसी अन्य विधि द्वारा प्रतिषिद्ध नहीं है,

वह कारावास से, जिसकी अवधि तीन वर्ष तक की हो सकेगी, या जुर्माने से, या दोनों से, दंडनीय होगा ।"

17. अभियोजन पक्ष के वृत्तांत को ध्यान में रखते हुए, अपीलार्थी को धारा 29(ख) के अधीन आरोपित किया जा सकता था किंतु अभियोजन पक्ष द्वारा केवल यह सिद्ध करने के पश्चात् कि उसने सह-अभियुक्त गुरप्रीत सिंह को अग्न्यायुध स्वेच्छा से और जानबूझकर दिया

था । यह सिद्ध करने के लिए तनिक भी साक्ष्य नहीं है कि सह-अभियुक्त गुरप्रीत सिंह को अग्न्यायुध अपीलार्थी द्वारा सौंपा गया था । इसके विपरीत, यह प्रतीत होता है कि सह-अभियुक्त गुरप्रीत सिंह **उर्फ** टीटू अपीलार्थी के अनुज्ञप्त अग्न्यायुध को उसकी अनुज्ञा और जानकारी के बिना ले गया था और उक्त आयुध का प्रयोग मृतक की हत्या करने में किया था । स्वीकृत रूप से, प्रश्नगत अग्न्यायुध उस फार्म हाउस में रखा हुआ था जो अपीलार्थी और सह-अभियुक्त गुरप्रीत सिंह के सह-स्वामित्व में था और इसे वहां से सह-अभियुक्त गुरप्रीत सिंह द्वारा अवैध रूप से और अपीलार्थी की अनुज्ञा के बिना ले जाया गया था ।

18. यह तथ्यात्मक स्थिति होने के कारण अपीलार्थी को आयुध अधिनियम की धारा 29 के अधीन आरोपित नहीं किया जा सकता था और उच्च न्यायालय द्वारा उक्त धारा के अधीन की गई उसकी दोषसिद्धि कायम रखने योग्य नहीं है और इस सीमा तक उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय को तद्द्वारा अपास्त किया जाता है ।

19. जब एक बार अपीलार्थी को उच्च न्यायालय द्वारा भारतीय दंड संहिता की धारा 120-ख के अधीन अपराध से और हमारे द्वारा आयुध अधिनियम की धारा 29 से इस आधार पर दोषमुक्त कर दिया गया है कि अभियोजन पक्ष यह सिद्ध करने में असफल रहा था कि उसके द्वारा अग्न्यायुध को जानबूझकर और स्वेच्छा से विलग किया गया था और सह-अभियुक्त द्वारा इसे उसकी जानकारी के बिना ले जाया गया था और अपराध कारित करने में इसका प्रयोग किया था, अपीलार्थी को आयुध अधिनियम की धारा 30 के अधीन भी दोषसिद्ध और दंडित करने का कोई औचित्य प्रतीत नहीं होता है । आयुध अधिनियम की धारा 30 निम्नलिखित है :–

> "**धारा 30** – अनुज्ञप्ति **या नियम के उल्लंघन के लिए दंड –** जो कोई अनुज्ञप्ति की किसी शर्त का या इस अधिनियम के किसी उपबंध का या तद्धीन बनाए गए किसी नियम का उल्लंघन करेगा, जिसके लिए इस अधिनियम में अन्यत्र कोई दंड उपबंधित नहीं है, वह कारावास से, जिसकी अवधि छह माह तक की हो सकेगी, या जुर्माने से, जो दो हजार रुपए तक का हो सकेगा, या दोनों से,

दंडनीय होगा ।"

20. चूंकि अपीलार्थी द्वारा अधिनियम की किसी शर्त या अनुज्ञप्ति की शर्तों या अधिनियम या किसी नियम के किसी उपबंध का स्वेच्छा से किसी प्रकार का अतिक्रमण करने की बात को सिद्ध करने के लिए कोई साक्ष्य नहीं है, इसलिए वह धारा 30 के अधीन अपराध से भी दोषमुक्त किए जाने के लिए दायी है ।

21. तथ्यों और उपरोक्त चर्चा को ध्यान में रखते हुए, यह अपील मंजूर की जाती है और अपीलार्थी को आयुध अधिनियम की धारा 29 और 30 के अधीन दोषसिद्ध करते हुए उच्च न्यायालय के आक्षेपित निर्णय को अपास्त किया जाता है । अपीलार्थी को उसके विरुद्ध आरोपों से दोषमुक्त किया जाता है ।

अपील मंजूर की गई ।

जस.

संसद् के अधिनियम

राजभाषा अधिनियम, 1963

(यथासंशोधित, 1967)

(1963 का अधिनियम संख्यांक 19)

[10 मई, 1963]

उन भाषाओं का, जो संघ के राजकीय प्रयोजनों, संसद् में कार्य के संव्यवहार, केंद्रीय और राज्य अधिनियमों और उच्च न्यायालयों में कतिपय प्रयोजनों के लिए प्रयोग में लाई जा सकेंगी, उपबंध करने के लिए अधिनियम

भारत गणराज्य के चौदहवें वर्ष में संसद् द्वारा निम्नलिखित रूप में यह अधिनियमित हो :–

1. **संक्षिप्त नाम और प्रारंभ** – (1) यह अधिनियम राजभाषा अधिनियम, 1963 कहा जा सकेगा ।

(2) धारा 3, जनवरी, 1965 के 26वें दिन को प्रवृत्त होगी और इस अधिनियम के शेष उपबंध उस तारीख[1] को प्रवृत्त होंगे जिसे केंद्रीय सरकार, शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, नियत करे और इस अधिनियम के विभिन्न उपबंधों के लिए विभिन्न तारीख नियत की जा सकेंगी ।

---

[1] तारीख 10 जनवरी, 1965 को धारा 5(1) प्रवृत्त हुई, देखिए भारत का राजपत्र (अंग्रेजी) भाग 2, अनुभाग 3(ii), पृष्ठ 128 पर प्रकाशित अधिसूचना सं. का. आ. 94, तारीख 4 जनवरी, 1965 ; तारीख 19 मई, 1969 को धारा 6 प्रवृत्त हुई, देखिए भारत का राजपत्र (अंग्रेजी) भाग 2, अनुभाग (3)(ii), पृष्ठ 2024 पर प्रकाशित अधिसूचना सं. का. आ. 1945, तारीख 14 मई, 1969 ; तारीख 7 मार्च, 1970 को धारा 7 प्रवृत्त हुई, देखिए भारत का राजपत्र (अंग्रेजी), भाग 2, अनुभाग 3(ii) में प्रकाशित अधिसूचना सं. का. आ. 841, तारीख 2 फरवरी, 1970 ; तारीख 1 अक्तूबर, 1976 को धारा 5(2) प्रवृत्त हुई, देखिए भारत का राजपत्र (अंग्रेजी) भाग 2, अनुभाग 3(ii) पृष्ठ 1901 पर प्रकाशित अधिसूचना सं. का. आ. 655(अ), तारीख 5 अक्तूबर, 1976 ।

2. **परिभाषाएं** – इस अधिनियम में जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो, –

(क) "नियत दिन" से, धारा 3 के संबंध में, जनवरी, 1965 का 26वां दिन अभिप्रेत है और इस अधिनियम के किसी अन्य उपबंध के संबंध में वह दिन अभिप्रेत है जिस दिन को वह उपबंध प्रवृत्त होता है ;

(ख) "हिन्दी" से वह हिन्दी अभिप्रेत है जिसकी लिपि देवनागरी है ।

[1][3. **संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए और संसद् में प्रयोग के लिए अंग्रेजी भाषा का बना रहना** – (1) संविधान के प्रारंभ से पंद्रह वर्ष की कालावधि की समाप्ति हो जाने पर भी, हिन्दी के अतिरिक्त अंग्रेजी भाषा, नियत दिन से ही, –

(क) संघ के उन सब राजकीय प्रयोजनों के लिए जिनके लिए यह उस दिन से ठीक पहले प्रयोग में लाई जाती थी ; तथा

(ख) संसद् में कार्य के संव्यवहार के लिए,

प्रयोग में लाई जाती रह सकेगी :

परंतु संघ और किसी ऐसे राज्य के बीच, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, पत्रादि के प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा प्रयोग में लाई जाएगी :

परंतु यह और कि जहां किसी ऐसे राज्य के, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में अपनाया है और किसी अन्य राज्य के, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, बीच पत्रादि के प्रयोजनों के लिए हिन्दी को प्रयोग में लाया जाता है, वहां हिन्दी में ऐसे पत्रादि के साथ-साथ उसका अनुवाद अंग्रेजी भाषा में भेजा जाएगा :

परंतु यह और भी कि इस उपधारा की किसी भी बात का यह अर्थ नहीं लगाया जाएगा कि वह किसी ऐसे राज्य को, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, संघ के साथ या किसी ऐसे राज्य के साथ, जिसने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में अपनाया है,

---

[1] 1968 के अधिनियम सं. 1 की धारा 2 द्वारा धारा 3 के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

या किसी अन्य राज्य के साथ, उसकी सहमति से, पत्रादि के प्रयोजनों के लिए हिन्दी को प्रयोग में लाने से निवारित करती है, और ऐसे किसी मामले में उस राज्य के साथ पत्रादि के प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग बाध्यकर न होगा ।

(2) उपधारा (1) में अन्तर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, जहां पत्रादि के प्रयोजनों के लिए हिन्दी या अंग्रेजी भाषा –

(i) केंद्रीय सरकार के एक मंत्रालय या विभाग या कार्यालय के और दूसरे मंत्रालय या विभाग या कार्यालय के बीच ;

(ii) केंद्रीय सरकार के एक मंत्रालय या विभाग या कार्यालय के और केंद्रीय सरकार के स्वामित्व में के या नियंत्रण में के किसी निगम या कंपनी या उसके किसी कार्यालय के बीच ;

(iii) केंद्रीय सरकार के स्वामित्व में के या नियंत्रण में के किसी निगम या कंपनी या उसके किसी कार्यालय के और किसी अन्य ऐसे निगम या कंपनी या कार्यालय के बीच,

प्रयोग में लाई जाती है वहां उस तारीख तक, जब तक पूर्वोक्त संबंधित मंत्रालय, विभाग, कार्यालय या निगम या कंपनी का कर्मचारिवृन्द हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त नहीं कर लेता, ऐसे पत्रादि का अनुवाद, यथास्थिति, अंग्रेजी भाषा या हिन्दी में भी दिया जाएगा ।

(3) उपधारा (1) में अंतर्विष्ट किसी बात के होते हुए भी, हिन्दी और अंग्रेजी भाषा दोनों ही –

(i) संकल्पों, साधारण आदेशों, नियमों, अधिसूचनाओं, प्रशासनिक या अन्य प्रतिवेदनों या प्रेस विज्ञप्तियों के लिए, जो केंद्रीय सरकार द्वारा या उसके किसी मंत्रालय, विभाग या कार्यालय द्वारा या केंद्रीय सरकार के स्वामित्व में के या नियंत्रण में के किसी निगम या कंपनी द्वारा या ऐसे निगम या कंपनी के किसी कार्यालय द्वारा निकाले जाते हैं या किए जाते हैं ;

(ii) संसद् के किसी सदन या सदनों के समक्ष रखे गए प्रशासनिक तथा अन्य प्रतिवेदनों और राजकीय कागजपत्रों के लिए ;

(iii) केंद्रीय सरकार या उसके किसी मंत्रालय, विभाग या कार्यालय द्वारा या उसकी ओर से या केंद्रीय सरकार के स्वामित्व में के या नियंत्रण में के किसी निगम या कंपनी द्वारा या ऐसे निगम या कंपनी के किसी कार्यालय द्वारा निष्पादित संविदाओं और करारों के लिए तथा निकाली गई अनुज्ञप्तियों, अनुज्ञापत्रों, सूचनाओं और निविदा प्ररूपों के लिए,

प्रयोग में लाई जाएगी ।

(4) उपधारा (1) या उपधारा (2) या उपधारा (3) के उपबंधों पर प्रतिकूल प्रभाव डाले बिना यह है कि केंद्रीय सरकार धारा 8 के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा उस भाषा या उन भाषाओं का उपबंध कर सकेगी जिसे या जिन्हें संघ के राजकीय प्रयोजन के लिए, जिसके अंतर्गत किसी मंत्रालय, विभाग, अनुभाग या कार्यालय का कार्यकरण है, प्रयोग में लाया जाना है और ऐसे नियम बनाने में राजकीय कार्य के शीघ्रता और दक्षता के साथ निपटारे का तथा जनसाधारण के हितों का सम्यक् ध्यान रखा जाएगा और इस प्रकार बनाए गए नियम विशिष्टतया यह सुनिश्चित करेंगे कि जो व्यक्ति संघ के कार्यकलाप के संबंध में सेवा कर रहे हैं और जो या तो हिन्दी में या अंग्रेजी भाषा में प्रवीण हैं वे प्रभावी रूप से अपना काम कर सकें और यह भी कि केवल इस आधार पर कि वे दोनों ही भाषाओं में प्रवीण नहीं हैं उनका कोई अहित नहीं होता है ।

(5) उपधारा (1) के खंड (क) के उपबंध और उपधारा (2), उपधारा (3) और उपधारा (4) के उपबंध तब तक प्रवृत्त बने रहेंगे जब तक उनमें वर्णित प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग समाप्त कर देने के लिए ऐसे सभी राज्यों के विधान-मंडलों द्वारा, जिन्होंने हिन्दी को अपनी राजभाषा के रूप में नहीं अपनाया है, संकल्प पारित नहीं कर दिए जाते और जब तक पूर्वोक्त संकल्पों पर विचार कर लेने के पश्चात् ऐसी समाप्ति के लिए संसद् के हर एक सदन द्वारा संकल्प पारित नहीं कर दिया जाता ।]

4. **राजभाषा के संबंध में समिति** – (1) जिस तारीख को धारा 3 प्रवृत्त होती है उससे दस वर्ष की समाप्ति के पश्चात्, राजभाषा के संबंध में एक समिति, इस विषय का संकल्प संसद् के किसी भी सदन में

राष्ट्रपति की पूर्व मंजूरी से प्रस्तावित और दोनों सदनों द्वारा पारित किए जाने पर गठित की जाएगी ।

(2) इस समिति में तीस सदस्य होंगे जिनमें से बीस लोक सभा के सदस्य होंगे तथा दस राज्य सभा के सदस्य होंगे, जो क्रमशः लोक सभा के सदस्यों तथा राज्य सभा के सदस्यों द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा निर्वाचित होंगे ।

(3) इस समिति का कर्तव्य होगा कि वह संघ के राजकीय प्रयोजनों के लिए हिन्दी के प्रयोग में की गई प्रगति का पुनर्विलोकन करे और उस पर सिफारिशें करते हुए, राष्ट्रपति को प्रतिवेदन करे और राष्ट्रपति उस प्रतिवेदन को संसद् के हर एक सदन के समक्ष रखवाएगा और सभी राज्य सरकारों को भिजवाएगा ।

(4) राष्ट्रपति उपधारा (3) में निर्दिष्ट प्रतिवेदन पर और उस पर राज्य सरकारों ने यदि कोई मत अभिव्यक्त किए हों तो उन पर विचार करने के पश्चात् उस समस्त प्रतिवेदन के या उसके किसी भाग के अनुसार निदेश निकाल सकेगा :

[1][परंतु इस प्रकार निकाले गए निदेश धारा 3 के उपबंधों से असंगत नहीं होंगे ।]

5. **केन्द्रीय अधिनियमों आदि का प्राधिकृत हिन्दी अनुवाद** – (1) नियत दिन को और उसके पश्चात् शासकीय राजपत्र में राष्ट्रपति के प्राधिकार से प्रकाशित –

(क) किसी केंद्रीय अधिनियम का या राष्ट्रपति द्वारा प्रख्यापित किसी अध्यादेश का, अथवा

(ख) संविधान के अधीन या किसी केंद्रीय अधिनियम के अधीन निकाले गए किसी आदेश, नियम, विनियम या उपविधि का,

हिन्दी में अनुवाद उसका हिन्दी में प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा ।

(2) नियत दिन से ही उन सब विधेयकों के, जो संसद् के किसी भी सदन में पुरःस्थापित किए जाने हों और उन सब संशोधनों के, जो उनके

---

[1] 1968 के अधिनियम सं. 1 की धारा 3 द्वारा अंतःस्थापित ।

संबंध में संसद् के किसी भी सदन में प्रस्तावित किए जाने हों, अंग्रेजी भाषा के प्राधिकृत पाठ के साथ-साथ उनका हिन्दी में अनुवाद भी होगा जो ऐसी रीति से प्राधिकृत किया जाएगा, जो इस अधिनियम के अधीन बनाए गए नियमों द्वारा विहित की जाए ।

6. **कतिपय दशाओं में राज्य अधिनियमों का प्राधिकृत हिन्दी अनुवाद** – जहां किसी राज्य के विधान-मंडल ने उस राज्य के विधान-मंडल द्वारा पारित अधिनियमों में अथवा उस राज्य के राज्यपाल द्वारा प्रख्यापित अध्यादेशों में प्रयोग के लिए हिन्दी से भिन्न कोई भाषा विहित की है वहां, संविधान के अनुच्छेद 348 के खंड (3) द्वारा अपेक्षित अंग्रेजी भाषा में उसके अनुवाद के अतिरिक्त, उसका हिन्दी में अनुवाद उस राज्य के शासकीय राजपत्र में, उस राज्य के राज्यपाल के प्राधिकार से, नियत दिन को या उसके पश्चात् प्रकाशित किया जा सकेगा और ऐसी दशा में ऐसे किसी अधिनियम या अध्यादेश का हिन्दी में अनुवाद हिन्दी भाषा में उसका प्राधिकृत पाठ समझा जाएगा ।

7. **उच्च न्यायालय के निर्णयों आदि में हिन्दी या अन्य राजभाषा का वैकल्पिक प्रयोग** – नियत दिन से ही या तत्पश्चात् किसी भी दिन से किसी राज्य का राज्यपाल, राष्ट्रपति की पूर्व सम्मति से, अंग्रेजी भाषा के अतिरिक्त हिन्दी या उस राज्य की राजभाषा का प्रयोग, उस राज्य के उच्च न्यायालय द्वारा पारित या दिए गए किसी निर्णय, डिक्री या आदेश के प्रयोजनों के लिए प्राधिकृत कर सकेगा और जहां कोई निर्णय, डिक्री या आदेश (अंग्रेजी भाषा से भिन्न) ऐसी किसी भाषा में पारित किया या दिया जाता है वहां उसके साथ-साथ उच्च न्यायालय के प्राधिकार से निकाला गया अंग्रेजी भाषा में उसका अनुवाद भी होगा ।

8. **नियम बनाने की शक्ति** – (1) केंद्रीय सरकार इस अधिनियम के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए नियम, शासकीय राजपत्र में अधिसूचना द्वारा, बना सकेगी ।

[1][(2) इस धारा के अधीन बनाया गया प्रत्येक नियम, बनाए जाने

---

[1] 1986 के अधिनियम सं. 4 की धारा 2 और अनुसूची द्वारा (15.5.1986 से) उपधारा

के पश्चात् यथाशीघ्र संसद् के प्रत्येक सदन के समक्ष, जब वह सत्र में हो, कुल तीस दिन की अवधि के लिए रखा जाएगा । यह अवधि एक सत्र में, अथवा दो या अधिक आनुक्रमिक सत्रों में पूरी हो सकेगी । यदि उस सत्र के या पूर्वोक्त आनुक्रमिक सत्रों के ठीक बाद के सत्र के अवसान के पूर्व दोनों सदन उस नियम में कोई परिवर्तन करने के लिए सहमत हो जाएं तो तत्पश्चात् वह ऐसे परिवर्तित रूप में ही प्रभावी होगा । यदि उक्त अवसान के पूर्व दोनों सदन सहमत हो जाएं कि वह नियम नहीं बनाया जाना चाहिए तो तत्पश्चात् यह निष्प्रभाव हो जाएगा । किन्तु नियम के ऐसे परिवर्तित या निष्प्रभाव होने से उसके अधीन पहले की गई किसी बात की विधिमान्यता पर प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ेगा ।]

9. **कतिपय उपबंधों का जम्मू-कश्मीर को लागू न होना** – धारा 6 और धारा 7 के उपबंध जम्मू-कश्मीर राज्य को लागू न होंगे ।

गृह मंत्रालय के दिनांक 18 जनवरी, 1968 का संकल्प संख्यांक एफ. 5/8/65-रा.भा.

संकल्प

संख्यांक एफ. 5/8/65 – रा. भा. – संसद् के दोनों सदनों में पारित निम्नलिखित सरकारी संकल्प आम जानकारी के लिए प्रकाशित किया जाता है :–

"जबकि संविधान के अनुच्छेद 343 के अनुसार संघ की राजभाषा हिन्दी रहेगी और उसके अनुच्छेद 351 के अनुसार हिन्दी भाषा की प्रसार वृद्धि करना और उसका विकास करना ताकि वह भारत की सामासिक संस्कृति के सब तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम हो सके, संघ का कर्तव्य है ;

यह सभा संकल्प करती है कि हिन्दी के प्रसार एवं विकास की गति बढ़ाने के हेतु तथा संघ के विभिन्न राजकीय प्रयोजनों के लिए

---

(2) के स्थान पर प्रतिस्थापित ।

उत्तरोत्तर इसके प्रयोग के हेतु भारत सरकार द्वारा एक अधिक गहन एवं व्यापक कार्यक्रम तैयार किया जाएगा और उसे कार्यान्वित किया जाएगा और किए जाने वाले उपायों एवं की जाने वाली प्रगति की विस्तृत वार्षिक मूल्यांकन रिपोर्ट संसद् की दोनों सभाओं के पटल पर रखी जाएगी, और सब राज्य सरकारों को भेजी जाएगी ;

2. जबकि संविधान की आठवीं अनुसूची में हिन्दी के अतिरिक्त भारत की 14 मुख्य भाषाओं का उल्लेख किया गया है, और देश की शैक्षणिक एवं सांस्कृतिक उन्नति के लिए यह आवश्यक है कि इन भाषाओं के पूर्ण विकास के हेतु सामूहिक उपाय किए जाने चाहिए ;

यह सभा संकल्प करती है कि हिन्दी के साथ-साथ सब भाषाओं के समन्वित विकास के हेतु भारत सरकार द्वारा राज्य सरकारों के सहयोग से एक कार्यक्रम तैयार किया जाएगा और उसे कार्यान्वित किया जाएगा ताकि वे शीघ्र समृद्ध हों और आधुनिक ज्ञान के संचार का प्रभावी माध्यम बनें ;

3. जबकि एकता की भावना के संवर्द्धन तथा देश के विभिन्न भागों में जनता में संचार की सुविधा के हेतु यह आवश्यक है कि भारत सरकार द्वारा राज्य सरकारों के परामर्श से तैयार किए गए त्रै-भाषा सूत्र को सभी राज्यों में पूर्णतया कार्यान्वित करने के लिए प्रभावी उपाय किए जाने चाहिए ;

यह सभा संकल्प करती है कि हिन्दी-भाषी क्षेत्रों में, हिन्दी तथा अंग्रेजी के अतिरिक्त एक आधुनिक भारतीय भाषा के दक्षिण भारत की भाषाओं में से किसी एक को तरजीह देते हुए और अहिन्दी-भाषी क्षेत्रों में प्रादेशिक भाषाओं एवं अंग्रेजी के साथ-साथ हिन्दी के अध्ययन के लिए उस सूत्र के अनुसार प्रबन्ध किया जाना चाहिए ;

4. और जबकि यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि संघ की लोक सेवाओं के विषय में देश के विभिन्न भागों के लोगों के न्यायोचित दावों और हितों का पूर्ण परित्राण किया जाए ;

यह सभा संकल्प करती है :–

(क) कि उन विशेष सेवाओं अथवा पदों को छोड़कर जिनके लिए ऐसी किसी सेवा अथवा पद के कर्तव्यों के संतोषजनक निष्पादन के हेतु केवल अंग्रेजी अथवा केवल हिन्दी अथवा दोनों जैसी कि स्थिति हो, का उच्च-स्तर का ज्ञान आवश्यक समझा जाए, संघ सेवाओं अथवा पदों के लिए भर्ती करने के हेतु उम्मीदवारों के चयन के समय हिन्दी अथवा अंग्रेजी में से किसी एक का ज्ञान अनिवार्यतः अपेक्षित होगा ; और

(ख) कि परीक्षाओं की भावी योजना, प्रक्रिया संबंधी पहलुओं एवं समय के विषय में संघ लोक सेवा आयोग के विचार जानने के पश्चात् अखिल भारतीय एवं उच्चतर केंद्रीय सेवाओं संबंधी परीक्षाओं के लिए संविधान की आठवीं अनुसूची में सम्मिलित सभी भाषाओं तथा अंग्रेजी को वैकल्पिक माध्यम के रूप में रखने की अनुमति होगी ।"

———————

नियम

राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) नियम, 1976

(यथासंशोधित, 1987, 2007 तथा 2011)

सा. का. नि. 1052 – राजभाषा अधिनियम, 1963 (1963 का 19) की धारा 3 की उपधारा (4) के साथ पठित धारा 8 द्वारा प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए, केंद्रीय सरकार निम्नलिखित नियम बनाती है, अर्थात् :–

1. **संक्षिप्त नाम, विस्तार और प्रारंभ** – (क) इन नियमों का संक्षिप्त नाम राजभाषा (संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए प्रयोग) नियम, 1976 है ।

(ख) इनका विस्तार तमिलनाडु राज्य के सिवाय संपूर्ण भारत पर है ।

(ग) ये राजपत्र में प्रकाशन की तारीख* को प्रवृत्त होंगे ।

2. **परिभाषाएं** – इन नियमों में, जब तक कि संदर्भ से अन्यथा अपेक्षित न हो :–

(क) "अधिनियम" से राजभाषा अधिनियम, 1963 (1963 का 19) अभिप्रेत है ;

(ख) "केंद्रीय सरकार के कार्यालय" के अन्तर्गत निम्नलिखित भी है, अर्थात् :–

(क) केंद्रीय सरकार का कोई मंत्रालय, विभाग या कार्यालय ;

(ख) केंद्रीय सरकार द्वारा नियुक्त किसी आयोग, समिति या अधिकरण का कोई कार्यालय ; और

---

* 17 जुलाई, 1976, देखिए अधिसूचना सं. सा.का.नि. 1052, तारीख 28-6-1976 – भारत का राजपत्र, भाग 2, खंड 3 (i), तारीख 17-7-1976, पृष्ठ 1967.

(ग) केंद्रीय सरकार के स्वामित्व में या नियंत्रण के अधीन किसी निगम या कंपनी का कोई कार्यालय ;

(ग) "कर्मचारी" से केंद्रीय सरकार के कार्यालय में नियोजित कोई व्यक्ति अभिप्रेत है ;

(घ) "अधिसूचित कार्यालय" से नियम 10 के उपनियम (4) के अधीन अधिसूचित कार्यालय अभिप्रेत है ;

(ङ) "हिन्दी में प्रवीणता" से नियम 9 में वर्णित प्रवीणता अभिप्रेत है ;

(च) क्षेत्र "क" से बिहार, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, छत्तीसगढ़, झारखंड, उत्तराखंड, राजस्थान और उत्तर प्रदेश राज्य तथा अंडमान और निकोबार द्वीप समूह, दिल्ली संघ राज्यक्षेत्र अभिप्रेत हैं ;

(छ) क्षेत्र "ख" से गुजरात, महाराष्ट्र और पंजाब राज्य तथा चण्डीगढ़, दमण और दीव तथा दादरा और नगर हवेली संघ राज्यक्षेत्र अभिप्रेत हैं ;

(ज) क्षेत्र "ग" से खण्ड (च) और (छ) में निर्दिष्ट राज्यों और संघ राज्यक्षेत्रों से भिन्न राज्य तथा संघ राज्यक्षेत्र अभिप्रेत हैं ;

(झ) "हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान" से नियम 10 में वर्णित कार्यसाधक ज्ञान अभिप्रेत है ।

3. **राज्यों आदि और केंद्रीय सरकार के कार्यालयों से भिन्न कार्यालयों के साथ पत्रादि** – (1) केंद्रीय सरकार के कार्यालय से क्षेत्र "क" में किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र को या ऐसे राज्य या संघ राज्यक्षेत्र में किसी कार्यालय (जो केंद्रीय सरकार का कार्यालय न हो) या व्यक्ति को पत्रादि, असाधारण दशाओं को छोड़कर हिन्दी में होंगे और यदि उनमें से किसी को कोई पत्रादि अंग्रेजी में भेजे जाते हैं तो उनके साथ उनका हिन्दी अनुवाद

भी भेजा जाएगा ।

(2) केंद्रीय सरकार के कार्यालय से –

(क) क्षेत्र "ख" में किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र को या ऐसे राज्य या संघ राज्यक्षेत्र में किसी कार्यालय (जो केंद्रीय सरकार का कार्यालय न हो) को पत्रादि सामान्यतया हिन्दी में होंगे और यदि इनमें से किसी को कोई पत्रादि अंग्रेजी में भेजे जाते हैं तो उनके साथ उनका हिन्दी अनुवाद भी भेजा जाएगा :

परन्तु यदि कोई ऐसा राज्य या संघ राज्यक्षेत्र यह चाहता है कि किसी विशिष्ट वर्ग या प्रवर्ग के पत्रादि या उसके किसी कार्यालय के लिए आशयित पत्रादि सम्बद्ध राज्य या संघ राज्यक्षेत्र की सरकार द्वारा विनिर्दिष्ट अवधि तक अंग्रेजी या हिन्दी में भेजे जाएं और उसके साथ दूसरी भाषा में उसका अनुवाद भी भेजा जाए तो ऐसे पत्रादि उसी रीति से भेजे जाएंगे ;

(ख) क्षेत्र "ख" के किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र में किसी व्यक्ति को पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में भेजे जा सकते हैं ।

(3) केंद्रीय सरकार के कार्यालय से क्षेत्र "ग" में किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र को या ऐसे राज्य में किसी कार्यालय (जो केंद्रीय सरकार का कार्यालय न हो) या व्यक्ति को पत्रादि अंग्रेजी में होंगे ।

(4) उपनियम (1) और (2) में किसी बात के होते हुए भी, क्षेत्र "ग" में केंद्रीय सरकार के कार्यालय से क्षेत्र "क" या क्षेत्र "ख" में किसी राज्य या संघ राज्यक्षेत्र को या ऐसे राज्य में किसी कार्यालय (जो केंद्रीय सरकार का कार्यालय न हो) या व्यक्ति को पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में हो सकते हैं :

परंतु हिन्दी में पत्रादि ऐसे अनुपात में होंगे जो केन्द्रीय सरकार ऐसे कार्यालयों में हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले व्यक्तियों की संख्या, हिन्दी में पत्रादि भेजने की सुविधाओं और उससे आनुषंगिक बातों को ध्यान में रखते हुए समय-समय पर अवधारित करे ।

4. **केंद्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच पत्रादि** –

(क) केंद्रीय सरकार के किसी एक मंत्रालय या विभाग और किसी दूसरे मंत्रालय या विभाग के बीच पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में हो सकते हैं ;

(ख) केंद्रीय सरकार के एक मंत्रालय या विभाग और क्षेत्र "क" में स्थित संलग्न या अधीनस्थ कार्यालयों के बीच पत्रादि हिन्दी में होंगे और ऐसे अनुपात में होंगे जो केंद्रीय सरकार, ऐसे कार्यालयों में हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले व्यक्तियों की संख्या, हिन्दी में पत्रादि भेजने की सुविधाओं और उससे संबंधित आनुषंगिक बातों को ध्यान में रखते हुए, समय-समय पर अवधारित करे ;

(ग) क्षेत्र "क" में स्थित केंद्रीय सरकार के ऐसे कार्यालयों के बीच, जो खण्ड (क) या खण्ड (ख) में विनिर्दिष्ट कार्यालयों से भिन्न हैं, पत्रादि हिन्दी में होंगे ;

(घ) क्षेत्र "क" में स्थित केंद्रीय सरकार के कार्यालयों और क्षेत्र "ख" या क्षेत्र "ग" में स्थित केंद्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में हो सकते हैं :

परंतु ये पत्रादि हिन्दी में ऐसे अनुपात में होंगे जो केन्द्रीय सरकार ऐसे कार्यालयों में हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले व्यक्तियों की संख्या, हिन्दी में पत्रादि भेजने की सुविधाओं और उससे आनुषंगिक बातों को ध्यान में रखते हुए समय-समय पर अवधारित करे ;

(ङ) क्षेत्र "ख" या क्षेत्र "ग" में स्थित केंद्रीय सरकार के कार्यालयों के बीच पत्रादि हिन्दी या अंग्रेजी में हो सकते हैं :

परन्तु ये पत्रादि हिन्दी में ऐसे अनुपात में होंगे जो केन्द्रीय सरकार ऐसे कार्यालयों में हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले व्यक्तियों की संख्या, हिन्दी में पत्रादि भेजने की सुविधाओं और उससे आनुषंगिक बातों को ध्यान में रखते हुए समय-समय पर अवधारित करे :

परन्तु जहां ऐसे पत्रादि –

(i) क्षेत्र "क" या क्षेत्र "ख" किसी कार्यालय को संबोधित हैं वहां, यदि आवश्यक हो तो, उनका दूसरी भाषा में अनुवाद, पत्रादि प्राप्त करने के स्थान पर किया जाएगा ;

(ii) क्षेत्र "ग" में किसी कार्यालय को संबोधित है वहां उनका, दूसरी भाषा में अनुवाद, उनके साथ भेजा जाएगा :

परन्तु यह और कि यदि कोई पत्रादि किसी अधिसूचित कार्यालय को सम्बोधित है तो दूसरी भाषा में ऐसा अनुवाद उपलब्ध कराने की अपेक्षा नहीं की जाएगी ।

5. **हिन्दी में प्राप्त पत्रादि के उत्तर** – नियम 3 और नियम 4 में किसी बात के होते हुए भी, हिन्दी में पत्रादि के उत्तर केंद्रीय सरकार के कार्यालय से हिन्दी में दिए जाएंगे ।

6. **हिन्दी और अंग्रेजी दोनों का प्रयोग** – अधिनियम की धारा 3 की उपधारा (3) में निर्दिष्ट सभी दस्तावेजों के लिए हिन्दी और अंग्रेजी दोनों का प्रयोग किया जाएगा और ऐसे दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करने वाले व्यक्तियों का यह उत्तरदायित्व होगा कि वे यह सुनिश्चित कर लें कि ऐसी दस्तावेजें हिन्दी और अंग्रेजी दोनों ही में तैयार की जाती हैं, निष्पादित की जाती हैं और जारी की जाती हैं ।

7. **आवेदन, अभ्यावेदन, आदि** – (1) कोई कर्मचारी आवेदन, अपील या अभ्यावेदन हिन्दी या अंग्रेजी में कर सकता है ।

(2) जब उपनियम (1) में विनिर्दिष्ट कोई आवेदन, अपील या अभ्यावेदन हिन्दी में किया गया हो या उस पर हिन्दी में हस्ताक्षर, किए गए हों, तब उसका उत्तर हिन्दी में दिया जाएगा ।

(3) यदि कोई कर्मचारी यह चाहता है कि सेवा संबंधी विषयों (जिनके अन्तर्गत अनुशासनिक कार्यवाहियां भी हैं) से संबंधित कोई आदेश या सूचना, जिसका कर्मचारी पर तामील किया जाना अपेक्षित है, यथास्थिति, हिन्दी या अंग्रेजी में होनी चाहिए तो वह उसे असम्यक् विलम्ब के बिना उसी भाषा में दी जाएगी ।

8. **केंद्रीय सरकार के कार्यालयों में टिप्पणों का लिखा जाना** – (1) कोई कर्मचारी किसी फाइल पर टिप्पण या कार्यवृत्त हिन्दी या अंग्रेजी में लिख सकता है और उससे यह अपेक्षा नहीं की जाएगी कि वह उसका अनुवाद दूसरी भाषा में प्रस्तुत करे ।

(2) केंद्रीय सरकार का कोई भी कर्मचारी, जो हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखता है, हिन्दी में किसी दस्तावेज़ के अंग्रेजी अनुवाद की मांग तभी कर सकता है, जब वह दस्तावेज़ विधिक या तकनीकी प्रकृति की है, अन्यथा नहीं ।

(3) यदि यह प्रश्न उठता है कि कोई विशिष्ट दस्तावेज़ विधिक या तकनीकी प्रकृति की है या नहीं तो विभाग या कार्यालय का प्रधान उसका विनिश्चय करेगा ।

(4) उपनियम (1) में किसी बात के होते हुए भी, केंद्रीय सरकार, आदेश द्वारा ऐसे अधिसूचित कार्यालयों को विनिर्दिष्ट कर सकती है जहां ऐसे कर्मचारियों द्वारा, जिन्हें हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त है, टिप्पण, प्रारूपण और ऐसे अन्य शासकीय प्रयोजनों के लिए, जो आदेश में विनिर्दिष्ट किए जाएं, केवल हिन्दी का प्रयोग किया जाएगा ।

9. **हिन्दी में प्रवीणता** – यदि किसी कर्मचारी ने –

(क) मैट्रिक परीक्षा या उसकी समतुल्य या उससे उच्चतर कोई परीक्षा हिन्दी के माध्यम से उत्तीर्ण कर ली है ; या

(ख) स्नातक परीक्षा में अथवा स्नातक परीक्षा की समतुल्य या उससे उच्चतर किसी अन्य परीक्षा में हिन्दी को एक वैकल्पिक विषय के रूप में लिया हो ; या

(ग) यदि वह इन नियमों से उपाबद्ध प्ररूप में यह घोषणा करता है कि उसे हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त है ;

तो उसके बारे में यह समझा जाएगा कि उसने हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त कर ली है ।

10. **हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान** – (1) (क) यदि किसी कर्मचारी ने –

(i) मैट्रिक परीक्षा या उसकी समतुल्य या उससे उच्चतर परीक्षा हिन्दी विषय के साथ उत्तीर्ण कर ली है ; या

(ii) केंद्रीय सरकार की हिन्दी प्रशिक्षण योजना के अन्तर्गत आयोजित प्राज्ञ परीक्षा या, यदि उस सरकार द्वारा किसी विशिष्ट प्रवर्ग के पदों के संबंध में उस योजना के अन्तर्गत कोई निम्नतर परीक्षा विनिर्दिष्ट है, वह परीक्षा उत्तीर्ण कर ली है ; या

(iii) केंद्रीय सरकार द्वारा उस निमित्त विनिर्दिष्ट कोई अन्य परीक्षा उत्तीर्ण कर ली है ; या

(ख) यदि वह इन नियमों से उपाबद्ध प्ररूप में यह घोषणा करता है कि उसने ऐसा ज्ञान प्राप्त कर लिया है ;

तो उसके बारे में यह समझा जाएगा कि उसने हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है ।

(2) यदि केंद्रीय सरकार के किसी कार्यालय में कार्य करने वाले कर्मचारियों में से अस्सी प्रतिशत ने हिन्दी का ऐसा ज्ञान प्राप्त कर लिया है तो उस कार्यालय के कर्मचारियों के बारे में सामान्यतया यह समझा जाएगा कि उन्होंने हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है ।

(3) केंद्रीय सरकार या केंद्रीय सरकार द्वारा इस निमित्त विनिर्दिष्ट कोई अधिकारी यह अवधारित कर सकता है कि केंद्रीय सरकार के किसी कार्यालय के कर्मचारियों ने हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है या नहीं ।

(4) केंद्रीय सरकार के जिन कार्यालयों में कर्मचारियों ने हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है उन कार्यालयों के नाम राजपत्र में अधिसूचित किए जाएंगे :

परन्तु यदि केंद्रीय सरकार की राय है कि किसी अधिसूचित कार्यालय में काम करने वाले और हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान रखने वाले कर्मचारियों का प्रतिशत किसी तारीख में से उपनियम (2) में विनिर्दिष्ट प्रतिशत से कम हो गया है, तो वह राजपत्र में अधिसूचना द्वारा घोषित

कर सकती है कि उक्त कार्यालय उस तारीख से अधिसूचित कार्यालय नहीं रह जाएगा ।

11. **मैनुअल, संहिताएं, प्रक्रिया संबंधी अन्य साहित्य, लेखन सामग्री, आदि** – (1) केंद्रीय सरकार के कार्यालयों से संबंधित सभी मैनुअल, संहिताएं और प्रक्रिया संबंधी अन्य साहित्य हिन्दी और अंग्रेजी में द्विभाषीय रूप में यथास्थिति, मुद्रित या साइक्लोस्टाइल किया जाएगा और प्रकाशित किया जाएगा ।

(2) केंद्रीय सरकार के किसी कार्यालय में प्रयोग किए जाने वाले रजिस्टरों के प्ररूप और शीर्षक हिन्दी और अंग्रेजी में होंगे ।

(3) केंद्रीय सरकार के किसी कार्यालय में प्रयोग के लिए सभी नामपट्ट, सूचना पट्ट, पत्रशीर्ष और लिफाफों पर उत्कीर्ण लेख तथा लेखन सामग्री की अन्य मदें हिन्दी और अंग्रेजी में लिखी जाएंगी, मुद्रित या उत्कीर्ण होंगी :

परन्तु यदि केंद्रीय सरकार ऐसा करना आवश्यक समझती है तो वह, साधारण या विशेष आदेश द्वारा, केंद्रीय सरकार के किसी कार्यालय को इस नियम के सभी या किन्हीं उपबन्धों से छूट दे सकती है ।

12. **अनुपालन का उत्तरदायित्व** – (1) केंद्रीय सरकार के प्रत्येक कार्यालय के प्रशासनिक प्रधान का यह उत्तरदायित्व होगा कि वह –

(i) यह सुनिश्चित करे कि अधिनियम और इन नियमों के उपबन्धों उपनियम (2) के अधीन जारी किए गए निदेशों का समुचित रूप से अनुपालन हो रहा है ; और

(ii) इस प्रयोजन के लिए उपयुक्त और प्रभावकारी जांच के लिए उपाय करें ।

(2) केंद्रीय सरकार अधिनियम और इन नियमों के उपबन्धों के सम्यक् अनुपालन के लिए अपने कर्मचारियों और कार्यालयों को समय-समय पर आवश्यक निदेश जारी कर सकती है ।

प्ररूप

(नियम 9 और 10 देखिए)

मैं इसके द्वारा यह घोषणा करता हूं कि निम्नलिखित के आधार पर *मुझे हिन्दी में प्रवीणता प्राप्त है/मैंने हिन्दी का कार्यसाधक ज्ञान प्राप्त कर लिया है :–

तारीख हस्ताक्षर

* जो लागू न होता हो, उसे कृपया काट दीजिए ।

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा प्रकाशित और विक्रयार्थ उपलब्ध पाठ्य पुस्तकों की सूची

क्रम सं.	पुस्तक का नाम, लेखक का नाम एवं प्रकाशन वर्ष (संस्करण)	पृष्ठ सं.	पुस्तक की मूल मुद्रित कीमत (रुपयों में)	विशेष छूट के पश्चात् पुस्तक की कीमत (रुपयों में)
1.	अन्तर्राष्ट्रीय विधि के प्रमुख निर्णय (द्वितीय संस्करण) – डा. एस. सी. खरे – 1996	273	115	29.00
2.	भारतीय स्वातंत्र्य संग्राम (कालजयी निर्णय) – विधि साहित्य प्रकाशन – 2000	209	225	57.00
3.	विधि शास्त्र – डा. शिवदत्त शर्मा – 2004	501	580	145.00
4.	निर्णय लेखन – न्या. भगवती प्रसाद बेरी – 2019	190	175	–
5.	भारत का सांविधानिक इतिहास - (103वां संशोधन तक) - श्री चन्द्रशेखर मिश्र	340	325	–
6.	भारतीय संविधान के प्रमुख तत्व - डा. प्रद्युम्न कुमार त्रिपाठी	906	750	–

अन्य महत्वपूर्ण प्रकाशन

1. विधि शब्दावली	सातवां संस्करण, 2015	कीमत रु. 375/-
2. निर्वाचन विधि निर्देशिका (भाग-1 तथा भाग-2)	नवीनतम संस्करण, 2019	कीमत रु. 1,900/-
3. भारत का संविधान	2021	कीमत रु. 300/-

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
Website : www.lawmin.nic.in
Email : am.vsp-molj@gov.in

भारत के समाचारपत्रों के रजिस्ट्रार द्वारा रजिस्ट्रीकृत रजि. सं. 16288/68

सादर

विधि साहित्य प्रकाशन द्वारा तीन मासिक निर्णय पत्रिकाओं - **उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका** और **उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका** का प्रकाशन किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका में उच्चतम न्यायालय के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को और उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका तथा उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका में देश के विभिन्न उच्च न्यायालयों के क्रमशः सिविल और दांडिक के चयनित महत्वपूर्ण निर्णयों को हिन्दी में प्रकाशित किया जाता है । उच्चतम न्यायालय निर्णय पत्रिका, उच्च न्यायालय सिविल निर्णय पत्रिका और उच्च न्यायालय दांडिक निर्णय पत्रिका की वार्षिक कीमत क्रमशः ₹ 2,100/-, ₹ 1,300/- और ₹ 1,300/- है । तीनों मासिक निर्णय पत्रिकाओं के नियमित ग्राहक बनकर हिन्दी के प्रचार-प्रसार के इस महान यज्ञ के भागी बन कर अनुगृहीत करें । साथ ही यह भी अवगत कराया जाता है कि केन्द्रीय अधिनियमों, विधि शब्दावली, विधि पत्रिकाओं और अन्य विधि प्रकाशनों को ऑन लाइन **https://bharatkosh.gov.in/product/product** पर प्राप्त किया जा सकता है ।

विधि साहित्य प्रकाशन
(विधायी विभाग)
विधि और न्याय मंत्रालय
भारत सरकार
भारतीय विधि संस्थान भवन,
भगवान दास मार्ग, नई दिल्ली-110001
दूरभाष : 011-23387589, 23385259, 23382105

विक्रेता : सहायक प्रबंधक, कारबार अनुभाग, विधि साहित्य प्रकाशन, विधि और न्याय मंत्रालय, विधायी विभाग, आई. एल. आई. बिल्डिंग, भगवानदास मार्ग, नई दिल्ली-110001 । दूरभाष : 011-23385259, 23387589, फैक्स : 011-23387589, ई-मेल : am.vsp-molj@gov.in